साहित्य का स्वाभिमान हिंदी का सम्मान

वेब पत्रिका

अनुभव

वर्ष ९ | अंक - नवम्बर २०२५

परिवार के अन्य मंच

Facebook | InstaGram | YouTube

www.hindilekhak.com

संपादकीय

प्रिय पाठकवृंद,
सादर नमस्कार।

नवंबर की ठंडी रौशनी अपने साथ एक अनोखा ठहराव लाती है—जैसे वर्ष की थकी हुई साँसें कुछ क्षण विश्राम मांग रही हों। इसी शांत समय में अनुभव का यह अंक आपके हाथों में है, और इसके प्रत्येक पृष्ठ पर जीवन की हलचल, संवेदनाएँ और हमारी सामाजिक वास्तविकताओं की अनुगूँज सजी है।

इस बार लेखकों ने अपने शब्दों से अनेक संसार रचे हैं—कहीं टूटते परिवारों की खामोशी है, कहीं खेतों की मिट्टी की सौंधी महक, कहीं कृत्रिम मेधा की दहलीज पर खड़े नए प्रश्न, और कहीं उन रिश्तों का कोमल ताप, जो हमारी थकी हुई आत्माओं को आश्रय देते हैं। कहानियाँ हो या कविताएँ—हर रचना मानो अपने समय का साक्ष्य बनकर सामने आती है; मनुष्य को उसकी जटिलताओं, संघर्षों और उम्मीदों सहित पहचानने का आग्रह करती है।

साहित्य का मूल्य तभी है जब वह भीतर कोई हलचल जगाए—कहीं प्रश्न, कहीं करुणा, कहीं प्रसन्नता और कहीं साहस। हमें प्रसन्नता है कि इस अंक की विविध रचनाएँ इन्हीं अनुभूतियों की एक विस्तृत पट्टिका प्रस्तुत करती हैं।

आपका साथ, आपका पढ़ना, और आपकी संवेदना—यही हमारी सबसे बड़ी शक्ति है।

स्नेह सहित,
संपादक परिवारं

‘अनुभव पत्रिका’ और ‘हिंदी लेखक परिवार’ का यह प्रयास निस्वार्थ साहित्यिक समर्पण से संचालित है।
यदि आप चाहें, तो इस कार्य में अपनी स्वैच्छिक सहयोग राशि देकर सहभागी बन सकते हैं।
आपका सहयोग पत्रिका के संकलन, संपादन, डिज़ाइन और प्रसार में सहायक होगा।

संपर्क:- patrika@hindilekhak.com
UPI ID:- anubhavpatrika@airtel
संदेश में लिखें:- “पत्रिका सहयोग”

“अनुभव पत्रिका” हिन्दी लेखक परिवार की एक इकाई है।

पत्रिका का उद्देश्य किसी की भावना को ठेस पहुँचाना नहीं है।
यदि जाने-अनजाने में कोई गलती हुई हो, तो उसके लिए हम क्षमा प्रकट करते हैं। पूर्वानुमति के बिना पत्रिका की किसी भी रचना का व्यवसायिक अथवा किसी भी रूप में प्रयोग नहीं किया जा सकता। पत्रिका अनेक लेखकों की रचनाओं का संकलन है; लेखक अपनी रचना के लिए स्वयं उत्तरदायी हैं और उनके अधिकार सुरक्षित हैं।

पत्रिका में प्रयोग की गई तस्वीरें इंटरनेट से ली गई या AI द्वारा उत्पन्न की गई हैं और इनका उद्देश्य केवल प्रतीकात्मक है।

सर्वाधिकार सुरक्षित © २०२५ | hindilekhak.com

अनुक्रमणिका

कहानी | लघु कथा | आलेख | संस्मरण

5 तमाचा: (डॉ. कविता नन्दन)

7 चीनी का पेड़: (अर्चना त्यागी)

10 मृगतृष्णा: (लता सिंह 'सर्वप्रिया')

11 खामोश घर: (रमेश कुमार सोनी)

14 फूस का मकबरा: (सन्दीप तोमर)

17 समर्पण: (श्रद्धा जोशी)

18 हिंदी शिक्षण की चुनौतियाँ: (भोला नाथ सिंह)

23 समर्पण: (पूजा अग्निहोत्री)

29 अंतिम विदाई: (अनीषा पाण्डेय)

30 एक और स्वर्ग,। हमारा कश्मीर: (गुडविन मसीह)

39 शौकीन अम्मा की साड़ी: (अनुपमा तिवाड़ी)

40 क्षमा करना पापा: (डॉ. रजनीकांत)

45 कवर फ़ायर: (सुधाकर मिश्रा)

46 खाली बेंच: (रामनगीना मौर्य)

54 माँ!माँ !में भेद!: (छगन लाल व्यास)

57 कृत्रिम मेधा की मुस्कुराहट खतरे की आहट: (गुरमीत सिंह)

60 निर्जन सा दुःख: (गोपाल माथुर)

65 कोहिनूर: (डॉ. नीना छिब्बर)

66 AI का प्रभाव और बदलती तकनीकी दुनिया में विद्यार्थियों के करियर का भविष्य: (राजीव यादव)

70 रफ कॉपी: (कमलेश शर्मा)

71 सम्बन्धों के आयाम: (अशोक गुजराती)

72 अग्निसुता: (आद्या मिश्रा)

73 चाय और शर्मा जी: (डॉ. सुशील कुमार जमरिआर)

74 सड़क सुरक्षा: परिवार के लोग आप के घर आने की राह देख रहे है: (संजय वर्मा "दृष्टि")

75 नील कमल की रात: (नारायण नाथ योगी)

78 वर्त्तमान परिदृश्य में मानवीय रिश्ते: (अनिल कुमार मिश्र)

80 परिवार—दिल धड़कने का सबब: (प्रमोद देशपांडे 'पीडी')

84 आगे कुआँ पीछे खाई: (नमिता सिंह 'आराधना')

88 धूल में लिखी औरत: (हरकीरत हीर)

अनुक्रमणिका

कविता | ग़ज़ल | गीत

6 श्रम ही तो जीवन कहलाता: (अजीत शर्मा 'आकाश')

9 मुझ सी नजर आती हैं।: (सोनिया सैनी)

22 भीड़ में अकेला: (डॉ. वर्षा अग्रवाल)

22 कभी ना: (भवानी देव)

28 अहमियत दाने दाने की: (आशा भाटिया)

28 जनवरी की तरह: (सुधा गोयल)

55 ग़ज़लें: (नवीन माथुर पंचोली)

56 खोया दिल: (वंदना झा)

56 आदर्शों का ध्वज फहराएँ: (ज्ञानेन्द्र मोहन 'ज्ञान')

59 बच्चों तुम जरा बच के रहो: (डॉ. गोपाल प्रसाद 'निर्दोष')

69 ज़िन्दगी, जीवन और मृत्यु के बीच: (डॉ. सुनील गज्जाणी)

73 मित्रों: (राजीव नामदेव "राना लिधौरी")

77 ग़ज़ल: (अनिल 'मानव')

77 एक जिद्दी लड़की: (डॉ. नीना छिब्बर)

79 बाबू सरयुग मंडल!: (चन्दन कुमार)

81 वन्दे मातरम्: (अमर नाथ)

82 क्या कुछ है बेटियां: (नारायण बोस्तर 'देवासी')

82 बचपन: (अंकित शर्मा 'इषुप्रिय')

82 जीवन एक सफ़र है: (मुकेश कुमार बिस्सा)

84 सीखना: (राजेश सक्सेना)

85 तीसरी लाइन: (श्रीराम निवारिया)

87 एक पेड़ माँ के नाम: (रजत दीक्षित "रजत")

90 कई बार: (डॉ. धनाकर ठाकुर)

तमाचा

कहानी:- डॉ. कविता नन्दन

ज़ोरदार बारिश और तेज़ हवा के झोकों ने मेरे भीतर कंपकंपी पैदा कर दिया। मैंने अपनी कार को कॉफी हाउस की ओर मोड़ दिया। अंदर घुसते ही देखा मिसेज चोपड़ा अपनी सहेलियों के साथ कहकहे लगा रही है। उसकी एक सहेली ने मुझे देखते ही कहा "मिसेज बंसल तुम्हारा एक्स ब्वॉयफ्रेंड बारिश में भीगकर यहाँ आया है। क्या तुमने ही उसे बुलाया है ?" उसने कहा "उस मिडिल क्लास आदमी के पास है ही क्या जो मैं उसे मिलने के लिए बुलाऊँगी ? मैंने तो कॉलेज से निकलने के बाद उसे भुला दिया।" मैं मिसेज चोपड़ा को अच्छी तरह जानता हूँ, उन्होंने मुझे ही नहीं, बहुत सारे लोगों को भुला दिया है। खैर, मैंने अपनी कॉफी का ऑर्डर दिया और कोने वाली टेबल पर चला गया। उनके कहकहे और ठहाकों से कॉफी हाउस की रौनक बढ़ गई थी। उन सभी के साथ बैठी रागिनी मुझे बड़े ध्यान से देख रही थीं। वह वहाँ से उठकर आईं और मेरे सामने बैठते हुए कहा "हॉस्पिटल नहीं गए ?" मैंने कहा "आज घर पर मेड नहीं आई। इसीलिए इधर आ गया। हॉस्पिटल ही जा रहा हूँ।" उसने कहा "मेरी कार रास्ते में ख़राब हो गई थी। मिसेज चोपड़ा से लिफ्ट लेकर इधर आ गई। मुझे भी अपने साथ लेते चलिए।" मैंने गरदन हिलाकर स्वीकृति दिया और अपनी कॉफी ख़त्म करने लगा।

मैं अभी हनुमान मंदिर पहुँचा था कि बॉस का दोबारा फोन आ गया। मैंने फोन रिसीव करने के साथ ही कहा "सर बारिश हो रही है, इसीलिए स्पीड स्लो है। बस्स पहुँचने ही वाला हूँ।" उन्होंने बताया कि वह स्टेशन पर पहुँच चुकी हैं जिन्हें मैं लेने के लिए जा रहा हूँ। इसलिए जल्दी करूँ। मुझे मन ही मन गुस्सा आ रहा था कि लोग अपना काम ख़ुद क्यों नहीं करते। प्राइवेट जॉब की यही सबसे बड़ी समस्या है कि अगर आपका काम और व्यवहार अच्छा है तो बॉस जब भी कोई ख़ास काम आएगा, वह सारी जिम्मेदारी आपको ही सौंप देगा। उसे इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि पेशेंट आकर हॉस्पिटल में कितना झेल रहे हैं। जब से यह हॉस्पिटल ज्वाइन किया है घर, परिवार, दोस्त, रिश्तेदार सब कुछ जैसे छूट गया है। रात के दो बजे हॉस्पिटल से कमरे पर और दिन के दस बजे तक हॉस्पिटल में, ज़िंदगी में हँसी, ख़ुशी नाम की कोई चीज़ नहीं रह गई है। मेरी माँ मुझे मिलने के लिए तरस जातीं हैं और यह छुट्टी नहीं देता। पिता जी कहते हैं "बेटा तू तो जूए का बैल हो गया है। मेरे बच्चे फोन पर पूछते हैं कि उनसे मिलने कब आऊँगा और पत्नी हर बार कहती है कि "मुझे तो लगता है, आपकी ज़िंदगी में कोई और आ गई है।" समझ में नहीं आता कि कोई मुझसे क्यों नहीं पूछता कि मै क्या चाहता हूँ। अपने यहाँ तो लेबर लॉ की ऐसी-तैसी हो रखी है। कभी-कभी सोचता हूँ कि शायद सरकारी डॉक्टर होता तो आठ घंटे बाद आम आदमी की तरह मैं भी जी सकता। इस मालिक-नौकर वाली ज़िंदगी को जीते-जीते लगता है जैसे आत्मसम्मान नाम की कोई चीज़ मेरे भीतर रह ही नहीं गई है। अचानक मोबाइल फिर बजा। इस बार वीडियो कॉल आई। ऑन किया तो बॉस हाथ जोड़कर विनती कर रहा था "मेरे बाप ! यार तू कहाँ है ? वह इधर-उधर फोन कर रही हैं। ऐसा न हो कोई और रिसीव करने पहुँच जाए। भाई देख, ऐसा हो गया तो समझ ले मुसीबत हो जाएगी। वह इंक्वॉयरी ऑफिस के पास हैं।" मै पार्किंग से सीधे उधर ही भागा।

मैं कतई नहीं चाहता था कि मैं उन्हें लेने में कोई देरी करूँ लेकिन सड़क और मौसम जब बाधा बन जाए तो कोई क्या करे ? मेरी बॉस से नाराज़गी पर्सनल है, उनके किसी दोस्त या रिश्तेदार से नहीं। लेकिन मेरे भीतर अभी भी गुस्सा बना हुआ था। दिमाग़ में अभी भी यही चल रहा था कि मेरी साथ ऐसा क्यों हो रहा है ? मै उनके हॉस्पिटल में कार्डियोलॉजिस्ट हूँ। उनकी पत्नी की अपनी फाइनेंस कंपनी है। सो, नौकर-चाकरों की कोई कमी नहीं। बॉस ने स्टेशन जा कर एक रिलेटिव को रिसीव करने के लिए मुझे चुना और खूब कायदे से समझा दिया। रास्ते में भारत माता की जय नारे लगाते हुए सीएए समर्थक हेलमेट पहने रोड-क्रास कर रहे थे। इसी वजह से उन्हें रिसीव करने में दस मिनट की देर हो गई। मैंने उन्हें देखा करीब पैंसठ वर्षीया बुजुर्ग महिला को जो बार-बार सभी से पूछ रही थीं "आप डॉक्टर अमित हैं ? आपको मेरे बेटे राज बंसल ने भेजा है?" यह दृश्य देखकर मेरी आंखों में आंसू आ गए और मिस्टर राज से बेहद नफरत हो गई कि अपनी सगी माँ को लाने के लिए मुझे भेज दिया।

बॉस ने अपनी बीवी के बर्थडे पार्टी में सभी को बुलाया था। मैंने देखा उनकी माँ बहु की सहेलियों की शैम्पेन सर्व कर रही हैं। मुझे नहीं रहा गया मै उठकर उनके पास पहुंचा और ट्रे उनके हाथ से ले लिया। एक सहेली ने कहा "डॉक्टर साहब ! आप तकलीफ़ क्यों करते हैं जब ओल्ड लेडी अच्छा सर्व कर रही है। मैं ट्रे टेबल पर रख कर लौट रहा था तो सुना मिसेज बंसल सहेलियों को समझा रही हैं "मिडिल क्लास डॉक्टर को लगता है इस नौकरानी में अपनी माँ नज़र आ रही है।" मेरे भीतर जैसे कोई ज्वालामुखी धधक उठा। मैं सीधा मिस्टर बंसल के पास पहुंच कर बोला "बॉस ! उस बूढ़ी महिला को आप पहचानते हैं ? उन्होंने कहा "हाँ ! क्यों उसने कोई बद्तमीजी किया क्या ?" मैंने पूछा "वह यहां क्या कर रही हैं ?" "शैम्पेन सर्व कर रही है।" उन्होंने जवाब दिया। मुझे बेहद अज़ीब लगा। मैंने कहा वो कौन हैं ? उन्होंने कहा "नौकरानी है हमारी। काम नहीं करेगी तो खाएगी कैसे ?" मुझसे रहा न गया। मैंने चिढ़ते हुए कहा "चार महीने पहले मैं उन्हें रिसीव करने गया था तब वह आपकी माँ थीं और आज चार महीने भी पूरे नहीं बीते और नौकरानी हो गईं!" बंसल साहब ने ज़ोर से मेरी बांह पकड़ कर आड़ में खींचते हुए "कहा डॉक्टर! तुमने किसी से कहा तो नहीं ?" मेरे भीतर का ज्वालामुखी जैसे दहकते हुए उबलने को बेताब था। मैं नफरत से बंसल को देख रहा था। बंसल साहब ने फिर पूछा "कुछ बोलते क्यों नहीं ? खामोशी तोड़ो।" मैंने ज़ोर का तमाचा उनके गाल पर रसीद कर दिया। उनके हाथ में पड़ा माईक इतनी ज़ोर से गूंजा कि सभी की नज़र हमारी ओर हो गई।

¤¤¤

श्रम ही तो जीवन कहलाता

कविता:- अजीत शर्मा 'आकाश'

श्रम से कैसा डरना मानव
श्रम ही तो जीवन कहलाता।
आलस तो है नाम मृत्यु का
जो जीवन को है खा जाता।।

सूरज नित्य नियम से उगता
जग को देता है उजियारा।
और रात को तारे लेकर
आ जाता है चन्दा प्यारा।।

नदियाँ कल-कल बहती रहतीं
वायु सदा चलती रहती है।
तुम भी बैठ रहो मत,
चलते रहो, प्रकृति हमसे कहती है।।

माली श्रम करता है तब ही
उपवन का है रूप सँवरता।
दिशा-दिशा सुरभित हो उठती
फूलों का है रंग निखरता।।

कृषक रात-दिन श्रम करके ही
धरती से सोना उपजाते।
भूख मिटाने को जन-जन की
स्वेद-रक्त दिनरात बहाते।।

कार्य सिद्ध उद्यम से ही तो
होते हैं दुनिया में सारे।
नहीं असम्भव है कुछ भी यदि
मानव स्वयं न हिम्मत हारे।।

श्रम की पूजा करने वाला
स्वयं भाग्य का निर्माता है।
सुख चलकर उसके दरवाज़े
पर दस्तक देने आता है।।

¤¤¤

चीनी का पेड़ | बच्चों को खेती के गुर सिखाने की कहानी

कहानी:- अर्चना त्यागी

वार्षिक परीक्षाएं ख़त्म हुई तो दोनों बच्चों ने आफ़त मचा दी। उन्हें गांव में दादाजी के पास जाना था। मम्मी पापा ने बहुत कहा कि दादाजी और दादी शहर में उनके साथ फ्लैट पर ही रहें लेकिन दादाजी सेवानिवृत होकर अपने गांव में रहने चले गए थे। गांव में एक मकान था और थोड़ी बहुत ज़मीन थी। उसे जोतने के लिए पहले एक नौकर रखा हुआ था। वह दादाजी के मकान पर ही रहता था और मकान तथा खेत दोनों को संभालता था। दादाजी ने गांव में ही जाने का निश्चय किया। नौकर को मकान के ऊपर बना एक कमरा रहने को दिया हुआ था। नीचे पूरे घर में दादाजी और दादी रहने लगे।

“मम्मी पापा हमें अकेले घर में नहीं रहना है। आप दोनों अपने काम पर चले जाते हो और हम दोनों दिन भर वीडियो गेम खेलकर, कार्टून देखकर थक जाते हैं।”

डिंगी ने उछलते हुए मुंह बनाकर कहा तो चीकू ने भी उसका साथ दिया। “अब तो दादाजी गांव में रहने चले गए हैं ना, उनके साथ रहना है हमें। हमें भी खेती करनी है। हमें छुट्टियों में उनके साथ ही रहना है। वहां पर अच्छा लगता है। बहुत बड़ा घर है। खेलने के लिए पार्क में जाने की ज़रूरत ही नहीं है।”

मम्मी पापा दोनों हंसने लगे। बच्चों की बात में दम था। जब भी छुट्टियां होती तो बच्चे दिन भर अकेले ही रहते थे। फिर दादाजी खेती कर सकते हैं तो उनके पोते पोती क्यों नहीं। दादी भी पोते पोतियों के स्वागत को तैयार बैठी थी। रोज़ फ़ोन पर बच्चों से पूछती थी कि छुट्टियां कब हो रही हैं ?आख़िर तय हुआ कि रविवार को मम्मी पापा बच्चों के साथ कार में बैठकर गांव जायेंगे और बच्चों को कुछ दिन के लिए दादा, दादी के पास खेती करने के लिए वहीं छोड़कर आयेंगे।

मम्मी पापा एक दिन ही रुके। दोनों के ऑफिस से लगातार फ़ोन आते रहे। लैपटॉप भी साथ में लाए थे, रात में घर से भी काम ही करते रहे और अगले दिन सुबह होते ही शहर वापिस चले गए। बच्चे तब तक सोकर नहीं उठे थे।

मम्मी पापा चले गए तो बच्चों की खुशी का ठिकाना नहीं था। गांव में दादाजी के बड़े घर में दिन भर उछल कूद करने की अब छूट थी। दादाजी के साथ खेत पर जाने की भी पूरी छूट थी। गांव में आते ही बच्चे खुशी खुशी सुबह उठ जाते और दूध पीकर दादाजी के साथ खेत पर चले जाते। छोटी खुरपी लेकर ज़मीन की खुदाई करते, खेतों में पानी देते, खाद डालते और दोपहर होने पर घर वापिस आते। दादी रोज़ बच्चों की पसंद का खाना बनाकर रखती। छाछ और गुड़ के साथ भरपेट खाना खाते।

एक दिन दादी ने बताया कि वो भी खेत पर आएंगी। दादा भी उस दिन जल्दी उठे। पड़ोस के भी एक दो लोग आए। बच्चे तुरंत उठे और उनके साथ ही चल दिए। नौकर पहले ही खेत पर चला गया था। बच्चे हैरान थे यह देखकर कि गांव में सब लोग सूरज उगने से पहले ही उठ जाते हैं।

गन्ना बोया जाना था। दादाजी हल चला रहे थे। बाकि लोग गन्ने के कटे हुए टुकड़ों को खेत में डालते जा रहे थे। दादाजी को आराम देने के लिए थोड़ी देर बाद नौकर ने हल संभाल लिया। दादाजी तब भी बैठे नहीं, सबके साथ मिलकर गन्ने के कटे हुए टुकड़ों को मिट्टी में दबाते जा रहे थे। कहीं पर गन्ना ठीक जगह पर नहीं पड़ा तो उसे उठाकर सही कर रहे थे।

दोपहर तक सब लोग काम करते रहे। फिर दादी खेत पर आई। उनके साथ पड़ोस की दो औरतें और भी थी। सबने अपने सिर पर कोई बर्तन रखा हुआ था। उनके हाथों में भी बहुत सा सामान था। पीने के पानी का घड़ा भी था। खेत के किनारे लगे पेड़ के नीचे उन्होंने सब सामान रख दिया।

“खाना खाने आ जाओ सब लोग। कढ़ी चावल और रोटी। साथ में घी डालकर शक्कर भी लाई हूं। प्याज़ भी है, कढ़ी के साथ खाने के लिए।”

दादी ने ज़ोर से आवाज़ लगाई। खेत में गन्ने की बुआई हो गई तो दादाजी ने बैलों को पेड़ की छाया में बांध दिया। नौकर ने उन्हें पानी पिलाया। पेड़ के नीचे दो बाल्टियों में पानी रखा हुआ था। पानी पीकर दोनों बैल छाया में पेड़ के नीचे बैठ गए। दादाजी ने दोनों के उपर हाथ फेरा हाथ धोकर सब लोग खाना खाने बैठे। बच्चे दादाजी की थाली में ही खा रहे थे। पहली बार उन्होनें खेत में बैठकर खाना खाया था और पहली ही बार इतने स्वादिष्ट कढ़ी चावल भी खाए थे। खाना खाते खाते दादाजी बच्चों को गन्ने की बुआई और पौधे उगने के बारे में बता रहे थे। गन्ने के कटे हुए टुकड़ों पर बीच बीच में जो गांठें होती हैं, वही नया पौधा बनाती हैं। पौधा जैसे जैसे बड़ा होता जाता है वैसे वैसे सख़्त होता जाता है। समय समय पर उसमें खाद और पानी देना पड़ता है तभी पौधे स्वस्थ रहते हैं। फ़सल पकने पर उसे जमीन से उखड़कर काट देते हैं। पत्तों को हटाकर साफ़ गन्ना निकाल लेते हैं। उसे चीनी मिल में ले जाकर बेच दिया जाता है जिसके मूल्य के बराबर रुपए बैंक में आ जाते हैं। गन्ने के रस से मिल में शक्कर, गुड़, चीनी, खांड आदि बनते हैं। शक्कर और गुड़ खाना स्वास्थ्य के लिए अच्छा होता है। यह मीठा होने के साथ ही खाने को पचाने में भी सहायक है।

उत्तर प्रदेश वह राज्य है जिसमें सबसे अधिक गन्ना उगाया जाता है। सबसे ज्यादा चीनी मिल भी उत्तर प्रदेश में ही हैं। बच्चे यह जानकारी पाकर बहुत खुश हो रहे थे। अभी तक किताब में ही उन्होंने गन्ने की फोटो देखी थी। उन्होंने सोच लिया था कि स्कूल खुलने पर अपने सभी दोस्तों को गन्ने की खेती के बारे में बताएंगे। जब भी छुट्टी होगी अपने बोए गन्ने को देखने आयेंगे।

“मैं तुम्हें लेकर आऊंगा दिखाने के लिए।”
दादाजी ने कहा तो बच्चे खुशी से नाचने लगे। धूप तेज़ हो गई थी इसलिए दादी ने बच्चों के सिर पर दादाजी की टोपी रख दी। घर से दो टोपी वो लेकर आई थी। दादी और उनके साथ आई पड़ोस की औरतें घर की ओर चली। बच्चे उनके बीच में चल रहे थे ताकि धूप से बचे रहें।

दादाजी बैलों और अपने साथ आए लोगों को लेकर पीछे पीछे आ रहे थे। बच्चे खुशी में नाच रहे थे। गीत गा रहे थे। इतनी सुबह उठकर खेत पर आने से जैसे दो गुनी ऊर्ज़ा उनके शरीर में आ गई थी। घर आते ही दोनों चारपाई पर लेटे और गहरी नींद में सो गए। सपने में गन्ने के पौधे बड़े हो गए थे। और हां दोनों कूदते फांदते हुए पैदल ही शहर से गांव अपने खेत में पहुंच गए थे। बस नाम भूल गए। नींद में ही दोनों बडबडा रहे थे “चीनी का पेड़।”

¤¤¤

मुझ सी नजर आती हैं

कविता:- सोनिया सैनी

तकदीर बदल जाती है
तस्वीर बदल जाती है
आईना जब भी मैं देखूं,
क्यों तू, मुझे मुझे नजर आती है।

हे भावों की गहराई या इश्क की अंगड़ाई
जब भी तुझे देखूं, खुद सी ही नजर आती है
सब्र करने की,जब सोचूं
तो आंखों दरिया, बन जाती है
मन देखता है, ख्वाब कई
की। तु मुझे मुझ सी नजर आती है।

अलग नहीं, कुछ तेरा हिस्सा
मुझे, तेरी तकलीफ
दिल में चुभ जाती है,
जब जब तुझे देखूं, तु मुझे, मुझ सी
मुझसे नजर आती है।

यूं ही नहीं, तकदीर बदल जाती है
प्रेम है, दिल की गहराइयों से
तभी तो जुदा होकर भी
तू मुझे, मुझ सी नजर आती है

इबादत है इश्क तो,
मोहब्बत अधूरी मानी जाती है
जो पूरी हो जाए, आखिर वो
मुहब्बत कहां रह जाती है।
जब-जब तुझे देखूं तो
तू मुझे, मुझ सी नजर आती है।

दया, माया, ममता, त्याग, बलिदान
सब तेरे, आंचल में लिपट,
मेरे अपने हो जाते हैं,
इश्क में यह सब, मुझे तुझसे ही मिलवाते है।
आईना, जब जब मैं देखूं,
तू मुझे, मुझ सी नजर आती है।

जब से मुंह मोड़ा है, ख्वाबों को तोड़ा है
पर दिल को सब्र, कहां आता है
तकदीर में ना सही, तस्वीर ही सही
वह दिल में, उतर जाती है
जब-जब तुझे देखूं,
क्यों तू मुझे, मुझ सी नजर आती है।

रातें तन्हा गुजरी जाती हैं
ख्वाबों में गुमनामी ही, आती है
ओ इश्क, फिर भी क्यों तू मुझे, मुझ सी नजर आती है।

टूटी-फूटी यादों की बारात अक्सर
सपनों में आती है, बसे बसाए, घर देखकर
तन्हाई, आंसू रोज बहती है
फिर भी क्यों तु मुझे, मुझ सी नजर आती है।
¤¤¤

मृगतृष्णा

लघु कथा:- लता सिंह 'सर्वप्रिया'

उमा और रमा दोनों एक सोसायटी में रहती थी, दोनों के घर की बालकनी आमने सामने थीं जिससे यदा कदा एक दूजे की गतिविधियां नज़र आ जाती थीं।

उमा जहां एक गृहिणी थी, वहीं रमा कामकाजी महिला थी।
उमा जब कभी रमा को अप- टू -डेट होकर घर से जाते देखती,रमा के घर पर कामवाली को आते जाते देखती तब हर बार ठंडी आह भरती और सोचती - 'रमा कितनी खुशनसीब है, कामवाली आकर

घर का सारा काम कर जाती है, खुद बस बन ठन कर ऑफिस जाना और पैसे कमाना, शाम रमा और रमेश एक साथ आते हैं,रमा खुद कमाती है तो रमेश भी धौंस नहीं जमा पाता होगा, क्या आराम का जीवन है।एक मैं हूँ सारा दिन घर के काम, उमेश और बच्चों में ही दिन निकल जाता है, उमेश काम में ज़रा भी मदद नहीं करते, क्यूं कि आखिर मैं घरेलू स्त्री ही तो हूँ, नौकरीपेशा जो नहीं, बच्चे भी रात दिन फरमाइशी चैनल चलाए रखते हैं -आज ये बनाओ वो बनाओ .. बदले में मुझे क्या ही मिलता है।'

उधर रमा जब सुबह घर से निकलती सामने बालकनी में आराम से चाय नाश्ता करती उमा पर नज़र पड़ती या उसकी छत पर बड़ियां पापड़ आलू चिप्स आदि सूखते देखती तो मन में सोचती -' उमा कितनी भाग्यशाली है, दिन भर घर पर आराम से अपने हिसाब से काम करती है, घर का शुद्ध खाना पीना बना लेती है, बच्चे स्कूल से आते हैं तो मुस्कुराती हुई माँ व गरम खाना मिलता है, उमेश को हंसकर स्वागत करती हुई पत्नी मिलती है, एक मैं हूँ कि नौकरी के चक्कर में बिटिया को भी आया पाल रही है, दूसरा बच्चा प्लान ही नहीं कर पा रहे, रमेश और मैं दोनों थके हारे एक साथ घर आते हैं, रात भी दूसरे दिन के कपड़े टिफिन सब तैयारी कर के सोने जाते हैं,तो सुबह जल्दी उठने की हाय तौबा में आराम से बातचीत तक नहीं कर पाते, तनख्वाह तो एक दिन मिलती है, भाग-दौड़ तो नित रोज़ की है, क्या ही सुख है।'

क्या मिलता है .. क्या ही सुख है .....
या औरत के लिए हर हाल... सिर्फ सुख सिर्फ मृगतृष्णा है .....

¤¤¤

खामोश घर

कहानी:- रमेश कुमार सोनी

सर्दी बढ़ रही थी, ओस और कोहरा अपनी पूरी शबाब पर था। इन दिनों सुबह-शाम सैर की आदतें बाढ़ का रूप लेने लगी थीं। ऐसा लगता था जैसे हरेक घर से कोई न कोई व्यक्ति मॉर्निंग वॉक पर निकल ही रहा है। कोई अपनी रातों की सुहानी नींद और सपनों के साथ चला आ रहा है तो कोई पूरे दिन भर का टाइम टेबल लेकर दौड़ रहा है। सबके सब किसी न किसी कार्निवाल के पात्र से बने हुए, सजे-ढँके से अपने - अपने झुंडों में निकल पड़े हैं। प्रत्येक झुंड के अपने-अपने किस्से, समस्याएँ, समाचार तो कहीं समाधानों की पुड़िया है। युवाओं की जॉगिंग, महिलाओं की पैदल चाल तो बुजुर्गों का योगा, प्राणायाम और लाफ्टर करते हुए समूह सूर्य को उगाने की एक समवेत कोशिश करते देखे जा सकते थे। हाल-चाल और अभिवादन से शुरू इनके वार्तालाप पारिवारिक किस्से, राजनीति की बातों से होकर मौसम पर ठहर जा रहे थे। रोज की तरह झुंड एक-दूसरे को निहार रहे हैं, कोई कुत्तों संग दौड़ते हुए हाँफ रहा है तो कोई अपने कान में ईयरफोन ठूँसे घूम रहा है। सभी की जानी-पहचानी शक्लें अचानक किसी को ढूँढने लगती हैं कि अरे, आज रामसिंह नहीं आया? अरे श्याम, आज अकेले ही निकल पड़े हो? कहाँ है तुम्हारा दोस्त? यहाँ से कयास लगाते हैं कि उन्हें क्या हुआ होगा? व्हाट्सएप पर की घटनाओं को शेयर करते हुए लोग प्रत्यक्षदर्शी जैसे व्यवहार करने में लगे हैं। गाँव हो या शहर, बढ़ती दुनिया की अनियमित जीवनशैली और भौतिकता की आँधी ने प्रायः सभी को अपने आगोश में ले रखा है। सभी के जीवन का गणित गड़बड़ाया हुआ है। कहीं भोर में भजन की बेला होती थी और अब कहाँ? लोगों को डायबिटीज और हाइपरटेंशन ने डराया हुआ है और डरे हुए लोगों की एकता भी देखते ही बनती है कि कैसे सारे के सारे, "सुबह की हवा लाख रुपये की दवा" लेने दौड़ पड़े हैं।

इन दिनों सभी की जुबान पर एक ही बात दौड़ रही थी कि मिस्टर प्रधान के दूसरे बच्चे का भी एडमिशन आईआईटी में हो गया है। अच्छी किस्मत लिखा के लाए हैं। किसी पूर्व जन्म का पुण्य प्रताप है, जिसका उन्हें आज फल मिल रहा है। बधाइयों और शुभकामनाओं की झड़ी बरस रही थी और प्रधान परिवार "धन्यवाद यह सब आपकी दुआओं का प्रतिफल है" कहते हुए अघा नहीं रहे थे। मौके पर मौजूद लोगों का मुँह मीठा कराया जा रहा था। मिस्टर प्रधान एक निजी विद्यालय में प्राथमिक कक्षाओं के अंग्रेजी के अच्छे शिक्षक थे। उनके अल्फाबेट्स मोती के दाने की तरह और पढ़ाई ऐसी कि उनका वास्तविक नाम सब भूल ही गए हैं। याद कुछ रहा तो बस एक ही नाम — "मिस्टर प्रधान" मिस्टर प्रधान बनने की पूरी कहानी उनके जेहन में अचानक घूम गई कि कैसे गाँव-देहात के एक मामूली खेतिहर मजदूर के बेटे राजू ने किन-किन मुश्किल हालातों से उबर कर अपनी पढ़ाई पूरी की थी। बहनों की शादी, कर्ज में डूबा परिवार, बीमारी का खर्च और पेट की पुकार के बीच उसे अच्छी तरह याद है कि फीस पटाए या पिता-माता की दवाई लाए — के दोराहे पर अक्सर वह खड़ा रहता था। धन्य हो उस सेठ का जिसकी बसना में कपड़ों की दुकान पर उसे पार्ट टाइम और छुट्टी के दिनों में बिना किसी जमानत के काम मिला। साथ ही साथ फीस पटाने और दवाई के लिए एडवांस में एक हजार रुपये भी मिल गए थे। मिस्टर प्रधान को अच्छी तरह याद था कि कैसे वह बहाना बनाकर काम पर जाया करता था — कभी कहता दोस्त के यहाँ पढ़ने जा रहा है, तो कभी एक्स्ट्रा क्लास का बहाना हुआ करता था। उसका काम था सिर्फ कपड़ों को नंबर के अनुसार तह करके रखना। उसकी मेहनत, लगन और ईमानदारी की ताकत से कमाई दौलत भी बीमार माँ-बाप को नहीं बचा सकी, फिर भी पूरी लगन से अपनी पढ़ाई उसने जरूर पूरी कर ली थी। वे आज एक नियमित मासिक वेतन वाली इज्जत की नौकरी से "प्रधान आचार्यजी" या "मिस्टर प्रधान" के नाम से पहचाने जाने लगे। साथ ही इसका फायदा भी उनमें शामिल था कि यहाँ उनके बच्चे पढ़ेंगे तो फीस में भी छूट मिल जाएगी।

एस्बेस्टस की छत वाले दो कमरों में उनके बच्चे दिनेश और दिव्या ने आँखें खोलीं और पढ़ाई का सूत्र अपने माता-पिता से लिया। दोनों ने अपने-अपने टाइम टेबल के अनुसार इन बच्चों को वक्त

निकालकर पढ़ाना शुरू किया था। बच्चों को बड़ा करते हुए मिस्टर प्रधान की किस्मत न जाने कब बूढ़ी हो गई, न जाने कब उनके बाल सफेद हो गए। मिस्टर प्रधान सैर पर कभी सुबह तो कभी शाम मैदान में बिना किसी नागा के प्रायः दिख ही जाते हैं, आशीर्वाद बाँटते हुए बच्चों को। अपनी कर्तव्यनिष्ठा के दम पर उन्होंने खूब नाम और इज्जत कमाई; पैसा तो ज्यादा कमाया नहीं लेकिन आदमी जरूर कमाए थे। कोई भी उनका पढ़ाया विद्यार्थी अच्छी जगह पर जब नौकरी पाता या ऊँचे महाविद्यालयों में प्रवेश पाता तो उनसे मिलकर आशीर्वाद लेने जरूर आता। मिस्टर प्रधान सिर्फ इतना ही पूछते — आजकल कहाँ हो? क्या कर रहे हो? मन लगाकर पढ़ना, अपने नंबर का स्टेटस मेंटेन करना। मिस्टर प्रधान इन बच्चों में अपने सपने साकार होते देख गर्वित होते और छाती चौड़ी कर शान से कहते फिरते — इसे मैंने पढ़ाया है। बस इसी बात को लेकर कभी भी उनकी मिसेज प्रधान से नहीं पटी। वो हर बार उन्हें उलाहना देती — "सब के लिए भगवान बने फिरते हो, कभी अपने बच्चों के लिए बाप भी बन जाया करो। " जब भी यह मुद्दा उठता, मिसेज प्रधान से वे हार मान लेते और अपनी तपस्या (बच्चों की पढ़ाई का जुगाड़) में दोगुनी मेहनत लगा देते ताकि दिनेश और दिव्या को उसके जैसे संघर्ष के दिन न देखने पड़ें। बहुत मान-मनौव्वल और प्रधानाचार्य मिश्रा जी के कहने पर एक नगर सेठ के यहाँ उन्होंने होम ट्यूशन लेना स्वीकारा ताकि उनके बच्चों के भी कुछ शौक वे पूरी कर सकें — जैसे जन्मदिन मनाना, ठीक-ठाक कपड़े-जूते, कम्पास, बस्ता, अच्छे कॉपी-पेन के संग कभी-कभार चाट, समोसे और आइसक्रीम दिला सकें। वरना महज आठ हजार रुपये प्रतिमाह में महँगाई डायन को यह सब कहाँ मंजूर है?

शिक्षा के मूल्यों के साथ प्रधान जी ने कभी समझौता नहीं किया था। उन्होंने शिक्षा की यह डोर हमेशा से थामे रखी, जिसका अंतिम लक्ष्य चरित्र निर्माण होता है और परिवार जिसकी प्राथमिक इकाई होती है। जिस प्रकार किसी बीज के अंकुरण के लिए जमीन, हवा, पानी, ताप सभी की संतुलित जरूरत होती है, वैसे ही एक विद्यार्थी को अच्छा नागरिक बनाने के लिए परिवार, समाज, स्कूल और शिक्षक की बराबर भागीदारी जरूरी है, अन्यथा बौद्धिक विपन्नता से उसका सर्वांगीण विकास रुक जाएगा। साथ ही वह एक अस्वस्थ समाज का गंदा हिस्सा बन जाया करता है।

खुशियों से भरे प्रधान दंपत्ति ने अपने बच्चों को उच्च शिक्षा हेतु छात्रवृत्ति सहित निःशुल्क चयन होने पर पुणे और मुंबई भेज दिया। अब उस छोटे से कस्बे के छोटे से दो कमरों के मकान में बचे रहे वे दो प्राणी — मिस्टर और मिसेज प्रधान। रोजमर्रा की बातें, स्कूल, पड़ोस, दुनिया, मौसम की बातें अधिक देर नहीं टिक पातीं, घर फिर खामोश हो जाता था। लंबी खामोशी कभी-कभार एक-दूसरे की गलतियाँ ढूँढकर लड़ाई कराती, मुँह फूला-फूली होकर सो जाते, सुबह फिर दोनों का आत्मसमर्पण खामोशी तोड़ देता था। दिन बीतने लगे। इन दिनों शादी-ब्याह के न्यौते, जन्मदिन का बुलावा और शोक संदेशों पर वार्ता इस सुलह पर टिकी कि — कहीं जाओ या न जाओ, कामघर (मृतक का घर) में तो जाना ही चाहिए; वहाँ मैं जाया करूँगा, तुम जन्मदिन में चली जाया करना और शादी में सपरिवार बुलाते हैं तो दोनों जाया करेंगे।

प्रधानाचार्य मिश्रा जी कुछ दिनों से मार्क कर रहे थे कि मिस्टर प्रधान की बातों में तल्खी सी आ रही है। व्यवहार असामान्य सा लगने लगा था। बच्चों पर भी कभी-कभार नाराज होने लगते हैं। इन दिनों घर में लड़ाई तो नहीं कर ली? बच्चों की पढ़ाई कैसे चल रही है? सब ठीक-ठाक तो है? के जवाब में वे बोल पड़े — ऐसी कोई बात नहीं जी, बस एक ब्याह का आमंत्रण आया है, उसी को लेकर

उहापोह मचा है। शादी में नया क्या है? नया ही तो है अरे वो अपने मिस्टर एक्स हैं ना, वही जिनके बच्चे विदेश में पढ़ रहे थे। हाँ, उनका लड़का सुना है दूसरे धर्म की लड़की से वहीं "लव मैरिज" कर ली है। इसमें नया क्या है? नया है सुनो तो सही, सब के सब लोग सीना ठोंक नाक ऊँची कर इस "लव मैरिज" को "अरेंज" कर रहे हैं, उसकी शादी पार्टी है!! आखिर समाज में ये चल क्या रहा है? समाज वाले, समाज के नियम बनाने वालों के नाम उस पत्रिका में हैं। ऐसा है मिश्रा जी, शिक्षा संस्कार देती है और उससे लोग जेंटलमैन बनते हैं। हमने तो कभी ऐसी शिक्षा नहीं दी थी!!

ऐसी संताने तो बाप के अधिकार भी छीनने लगी हैं। हमने अपनी पूरी जिंदगी बिता दी ताकि उनकी अपनी जिंदगी सँवर जाए और उन्हें इनकी फिक्र तक नहीं!! बस, इसी बात की चिंता खाए जा रही है कि क्या समाज फेल हो गया है? आँखें बंद कर लेने या खामोश

रह जाने से ऐसी समस्याएँ और बड़ी हो जाती हैं और समाधान हाथ से फिसल जाता है। तमाम भीतरी ताकतों को इकट्ठा करके बोलना ही पड़ता है, भले ही किसी को बकबक लगे, कहीं तो कोई समझेगा? कुछ बातें ऐसी हैं जिनमें बोलना ही पड़ता है, मिश्रा जी। घर में बचे रह गए हैं हम दोनों प्राणी, आखिर कब तक क्या बातें करें? यही ऐसी बातें निकल ही पड़ती हैं। अकेले बिना बात किए तो घर भी जेलखाना लगता है और सजा उम्रकैद सी। इसलिए तो भारतीय संस्कृति में संयुक्त परिवार की प्रथा थी जिसमें किसी के दुःख में दो आँसू बहा लिए, ढाँढ़स बँधा दिया और खुशी मिली तो नाच लिए, उत्सव मना लिए। ऐसा है प्रधान जी — मिश्रा जी ने कहते हुए अपने हाथ उनके काँधे पर धर दिए — कौन से आपके बच्चे ऐसा कर रहे हैं जो परेशान हुए जाते हो? ये उनकी समस्या है, उन्हें निपटने दो। आपकी इच्छा हो तो शादी में जाना, नहीं तो मत जाना। प्रधान जी संजीदा होकर बोले — आखिर समाज की चिंता होती ही है; दिशाहीन समाज में हम कैसे जी पाएँगे? हम जैसे छोटे लोग अपराधी घोषित हो जाते हैं और बड़े लोगों की करोड़पति फौजें हमें निगलने को तैयार बैठी हैं, जैसे शहर अजगर की भाँति हमारे खेत और गाँव को निगल रहा है। बड़ी मुश्किल समस्या है, मिश्रा जी, बोलना तो पड़ेगा ही। सबसे बड़ी बात, विवाहेत्तर समस्याओं को भी ध्यान में रखना पड़ेगा। ये सब पैसे वालों के चोंचले हैं, यही लोग अपने नफे-नुकसान के लिए कानून बनाते और तोड़ते हैं और उसे अपने वक्त अनुसार परिभाषित भी करते हैं।

स्कूल से लौटते हुए मिस्टर प्रधान ने अपने मोबाइल में "वैल्यू वाउचर" डलवा लिया ताकि अपने दोनों बच्चों से विस्तृत बातें जी भरकर हो सकें। सुख-दुःख, हाल-चाल और अंत में पूछ लिया कि कहीं उनके साथ ऐसी-वैसी तो कोई बात नहीं? फलाने ने ऐसा कर लिया, तुमसे ऐसी अपेक्षा नहीं है। दिव्या और दिनेश ने भरोसा दिलाया तो विश्वास जागा। उनके यार-दोस्तों से बातें करके टोह लेते कि कहीं उनको कोई बुरी आदतें/नशा वगैरह तो नहीं लगा। उनके प्रोफेसरों से बातें करके पढ़ाई की खबर ली। सभी ने उनके अच्छे रिपोर्ट कार्ड की तारीफ की। आज की दुनिया में पालकों को अपने बच्चों के प्रति प्यार, अपनापन और सुरक्षा का संपूर्ण एहसास कराते हुए भावनात्मक रूप से जुड़ना अति आवश्यक होता है। जो माता-पिता इन प्रयासों में नाकामयाब होते हैं, उनकी संतानें भटकती हैं। यह उपेक्षा का अहसास उनके व्यक्तित्व तथा मानसिक विकास को महत्वपूर्ण मोड़ पर प्रभावित कर देता है।

अंततः तमाम शंकाओं के बीच दिव्या और दिनेश की पढ़ाई पूरी हुई। दुर्भाग्य अब भी उनका पीछा कर रहा था कि इसी बार कॉलेज में कैंपस सिलेक्शन नहीं हुआ। सभी के लिए यह आश्चर्य की बात थी। इस बार अपने पिता की तरह दिव्या और दिनेश ने अपना हौसला दिखाया और उनकी पढ़ाई रंग लाई। दिल्ली की एक प्रतियोगी परीक्षा के कोचिंग सेंटर में उन्हें प्रवेश मिल गया। हौसला बढ़ता गया, तैयारी होती गई, प्रश्न दर प्रश्न कोर्स पूरे हुए और नतीजा आशानुरूप ही आया कि दिव्या ने आईआरएस और दिनेश ने आईईएस की परीक्षा पास कर ली। यह एक और मौका था जब मिस्टर प्रधान का परिवार मिठाई के साथ धन्यवाद ज्ञापन कर रहा था और सदा खामोश रहने वाला उनका घर फिर से सुर्खियों में था।

मिस्टर प्रधान जब कभी अकेले होते तो भविष्य उन्हें परेशान और सशंकित कर देता था। चिंताओं के बादल घिर जाते और कभी जब अपने भूतकाल को याद करते तो दुःख और पछतावे की काली छाया के अलावा कुछ भी नजर नहीं आता। इन्हीं दोनों के बीच झूलते हुए वर्तमान आदमी की तरह उन्हें भी कहाँ ढंग से जीने देता था, इसलिए उन्होंने सब कुछ अपने ईश्वर पर छोड़कर सिर्फ संघर्ष और कड़ी मेहनत का मूल मंत्र धारण कर रखा था। सफलता की यही सबसे बड़ी कुंजी सदा से ही रही है।

दिव्या और दिनेश के साथ आज उनके माता-पिता भी विद्यालय में सम्मानित किए जा रहे थे। गर्वोन्नत मस्तक, चौड़ा सीना ताने मिस्टर प्रधान फूले नहीं समा रहे थे। विद्यालयीन समिति उन्हें आदर्श मानकर सभी के लिए प्रेरणा-स्रोत के रूप में प्रस्तुत कर रही थी ताकि अंचल के सभी विद्यार्थियों के बीच उनकी साख बढ़ सके। गदगद भाव से मिस्टर प्रधान और उनके परिवार ने झुकी डालियों की तरह शॉल और श्रीफल ग्रहण किया तथा धन्यवाद दिया। आज फिर खामोश घर में खीर और मालपुओं की खुशबू संग कोलाहल (हर्ष का) था। रोज की तरह इस खामोश मकान की बातें आज फिर लोगों की जुबान पर चर्चा का विषय थीं कि इन्होंने बसना का नाम रौशन कर दिया। लेकिन कुछ दिन बीते, चर्चा यहीं से शुरू होती और दूसरे खामोश घर पर रुक जाती। सैर पर जाते हुए लोग गिन रहे हैं खामोश घर, जहाँ बच्चे या तो बाहर पढ़ रहे हैं या फिर नौकरी पर बाहर हैं, और खामोश घर वृद्धों की रखवाली में शेष रह गए हैं। उन्हें लगता है कि कहीं, कोई तो कमी इस व्यवस्था में है। कुछ तो छूट रहा है जो इन घरों को खामोश कर गया है। गाँव शहर में बदल रहा है, शहर महानगर हो रहे हैं, बाजार के विस्तार के संग बढ़ जाने का मोह जाने कहाँ जाकर रुकेगा? इन सबके विस्तार के विपरीत परिवार छोटे हुए जा रहे हैं और लोग खामोश घरों के अकेले चौकीदार बनते जा रहे हैं!

¤¤¤

फूस का मकबरा

कहानी:- सन्दीप तोमर

उसकी स्मृति में यह बात अंदर तक समाहित है कि लगातार तीन-तीन बार जुड़वा बच्चे जनने और उनके जिंदा न रहने के बाद अपनी माँ की इकलौती जिंदा संतान होने के कारण उसे घरवालों से हक़ से ज्यादा ही स्नेह मिला। जब वह पैदा हुई तब भी जुड़वा बच्चे ही हुए थे, लेकिन दूसरा बच्चा हफ्ते भर में ही चला बसा था। माँ को एक साल कि होने तक भी चिंता रहती कि वह भी बचेगी या नहीं। उसके पीछे कोई और भी पैदा हो माँ और पिताजी दोनों ही के प्रयास रहे लेकिन उसके भाग्य में इकलौता रहना जैसे नियति ने लिख दिया था।

पिता कॉलेज में प्रवक्ता थे, माँ भी नौकरी करती थी। आर्थिक-सामाजिक रूप से बेहद ऊँचे पायदान पर खड़े उसके परिवार के पास उसे देने को तमाम तरह कि सुख-सुविधाएं थी। दुनिया भर की खुशियों के बीच माँ उस पर सब कुछ लुटा देना चाहती थी, बहुत प्यार करती। पिता कि शख्त-मिज़ाजी के बावजूद उसे उसके हिस्से का प्यार मिलता ही रहा।

स्कूल जाती थी तो माँ के शिक्षिका होने के चलते उसे लड़का-लड़की जैसा फर्क भी नहीं महसूस हुआ। उसके पढ़ने-लिखने में कोई रुकावट नहीं आई। कई बार किताबों के फट जाने पर दोबारा किताबें मिल जाती जबकि अन्य सहपाठियों के केस में ऐसा नहीं होता था। जिनके पास किताब खरीदने को पैसे नहीं होते, वह उन सहपाठियों को किताब या अन्य सामान दे देती। कई बार यह भी होता कि अपना खाना किसी सहेली को खिला लांच के समय माँ के पास स्टाफ़रूम में जाकर कहती-“ माँ! भूख लगी है। खाना दो। ” माँ कहती- सुबह जो लंचबॉक्स दिया, उसका क्या हुआ? वह बड़ी मासूमियत से कह देती- वो संध्या के पास खाना नहीं था तो उसने खा लिया। उसकी परवरिश इस तरह हो रही थी कि उसकी निगाह में बेटी होना अपराध जैसा न होकर समानता का ही पर्याय था। वह जो कुछ भी करना चाहती उसके सामने सारे रास्ते खुले थे।

जब वह दस साल की हुई, उसको माँ के स्कूल से निकलकर माध्यमिक में जाना पड़ा। अनुकूल परिस्थितियों में भी उससे सेकंड क्लास में हाईस्कूल पास हुई। पिताजी उसे विज्ञान के विषय पढ़ा कर डॉक्टर बनाने के पक्ष में थे लेकिन उसकी ऐसी कोई इच्छा न थी।

इंटर करने के बाद कॉलेज में बीए में दाख़िला ले तो लिया पर शादी का दबाव बढ़ने लगा। उसने अपने पिता से तीन साल की मोहलत माँगी कि उसके बाद जो चाहो कर लेना अभी मुझे कुछ कर लेने दिया जाय। पिता को भी लगा कि तीन साल में बीए हो जाएगी तब बेटी के हाथ पीले कर देंगे। अंतत: उसकी बात मान ली गई। कॉलेज में सांस्कृतिक गतिविधियों में वह हिस्सा लेने लगी। कविता लेखन के लिए उसे पुरस्कृत भी किया गया लेकिन पिता की इन सबमें कोई रूचि न थी, न ही वे इन खबरों से खुश ही होते।

कॉलेज में एनएसएस थी, उसने फॉर्म भरा और नामाँकन करा लिया। समाज सेवा का उसका यह पहला अवसर था। जिसे उसने अच्छे से उपयोग किया, शिमला में कैम्प के लिए उसका भी सिलेक्शन हो गया लगा। पिता लड़की को अकेले बाहर भेजने के पक्ष में नहीं थे लेकिन माँ ने पिता से हामी भरवा ली।

गेहुंए रंग के आकर्षक दिखने वाले लड़के से इसी कैंप में मुलाकात हुई। पहली नज़र में ही वह आकर्षक लगा। शाम को कैंप फ़ायर के समय उसने एक प्रेम कविता सुनकार खूब तालियाँ बटोरी थी। उसके हाथ भी तो अनायास ही न चाहते हुए भी तालियों के लिए उठ गये थे। हालाकि उसकी कविता को भी कम तालियाँ नहीं मिली थी, ये कविता उसने नारी-सशक्तिकरण पर सुनाई थी, उस पल कामकाजी माँ की छवि उसकी नज़रों में थी। शिखर पर पहुँचने के बाद माँ के आत्मविश्वास से वह रोज रूबरू होती, उसके मन में अपनी माँ के प्रति सम्मान बढ़ गया साथ ही माँ के जैसा बनने कि इच्छा भी बलवती हुई। कैसे-कैसे कष्ट सहते हुए उसे माँ का समर्थन हासिल हुआ, यहाँ तक पहुँचाने में कब-कब माँ को पिता के कोप का भाजन बनना पड़ा, सब उसकी आँखों के सामने चलचित्र की तरह घूम गया। उसे यह अहसास भी हुआ कि वह इस जीवन में खुद कुछ कर सकती है, अपने सपनो को साकार कर सकती है।

कैंप में उसका प्रदर्शन देखते हुए एनएसएस की तरफ से उसे अन्य अभियानों में शामिल किया जाने लगा। उसका चयन सेक्स वर्कर्स को स्वास्थ्य सेवाएँ देने वाली टीम में बतौर टीम-लीडर हुआ, जल्दी

ही यह अभियान स्थानीय अखबारों की सुर्खियाँ बन गया। माँ को लगा कि इस अभियान में कुछ ऐसा है जो महत्वपूर्ण है लेकिन पिता ने जब समाचार-पत्र में पढ़ा तो आग-बबूला हुए लेकिन वह अभियान के लिए उत्साहपूर्वक तैयारियों में जुटी रही। गेहुएं रंग वाले लड़के से भी इस प्रोजेक्ट के दौरान मुलकातें होती रही। लड़का प्रोजेक्ट रिपोर्ट लिखने का माहिर था, अधिकांश फाइल्स के काम वही करता।

सेक्स वर्कर को स्वास्थ्य सेवाएँ दिलाने के लिए उसे सामान्य चिकित्सा केंद्र से लेकर टीबी केन्द्रों तक भी जाना पड़ता, वहीँ उसे यौन संचारित रोगों के बारे में जानकारी मिली। उसने जाना कि कहीं सेक्स वर्कर्स में एसटीआई होने का खतरा सामान्य आबादी से ज़्यादा होता है। इनमें एचआईवी, गोनोरिया, क्लैमाइडिया, सिफ़िलिस, और हर्पीज़ जैसे रोग सबसे अधिक पाए गए। सेक्स वर्कर्स को कई तरह के कैंसर होने का खतरा दिखा, , जिनमें सर्विक्स कैंसर के केस सबसे ज़्यादा मिले। इतना होता तो भी वह ज्यादा परेशान न होती, यहाँ तो सेक्स वर्कर्स में मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं का खतरा भी देखा गया, गरीबी, वित्तीय कठिनाइयां, अनैच्छिक सेक्स वर्क, और वित्तीय दलालों पर निर्भरता मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं के लिए जोखिम भरे कारक उसे लगे। वह जितनी भी सेक्स वर्कर्स से बात करती वे उसे बताती-एक डॉ सा लगा रहता है, अगर ग्राहक न आये या अगर ग्राहक को हमारे रोगों का रत्ती भर भी आभास हुआ तो हमारा धंधा चौपट हो जायेगा, अहम अब इस स्थिति में हैं कि हमें कोई और काम न मिल सकता, न ही सुहाएगा।

सेक्स वर्कर्स को स्वास्थ्य समस्याओं का निपटान करने में उसे कई तरह की दिक्कतें आती हैं, जैसे- कलंक और पूर्वाग्रह के कारण, सेक्स वर्कर्स को स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंचाना उसके लिए मुश्किल होता। उनको एचआईवी परीक्षण और उपचार जैसे स्वास्थ्य उपचार मिलने में दिक्कत होती। जब वह उनको स्वास्थ्य सेवाओं के लिए चिकित्सा केंद्र लेकर जाती तो उनका बुरा व्यवहार किया जाता या उन्हें सेवाएं देने से ही मना कर दिया जाता, ऐसे में उसके कई बार झगडे भी हुए, कई बार पुलिस-थाने तक की नौबत आई। लेकिन उसने भी जो काम जिम्मे लिया उस पूरा करने का ठान ही लिया। ऐसा भी हुआ जब उसका नाम अचानक प्रोजेक्ट से हटा दिया गया और अंततः वह अभियान से बाहर भी कर दी गई। उसने हार नहीं मानी, उसे जानकारी मिली कि सामाजिक न्याय ढांचे के तहत व्यापक यौन स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करने के लिए पेशेवरों को तैयार किये जाने हेतु प्रशिक्षण भी दिए जाते हैं, उसे ऐसे

ही एक कोर्स का पता चला जिसे ऑनलाइन माध्यम से कराया जाता है, जिसमें इच्छुक पेशेवरों को व्यापक यौन स्वास्थ्य शिक्षा और प्रशिक्षण में उत्कृष्टता प्रदान की जाती है। इस एडवांस कोर्स के लिए उसने अप्लाई कर दिया, लेकिन उसके पास इसे करने के लिए पंद्रह हजार रुपये फीस न थी, घर पर इतने पैसे होते हुए भी उसकी इन्हें माँगने की हिम्मत न थी, उसके मन में ख्याल आये- क्यों न मैं भी कुछ दिन अगले ही पल उसने इस घिनोने विचार को झटक दिया, किस्मत से उन दिनों एक साहित्यिक संस्था द्वारा एक कहानी प्रतियोगिता हुई, जिसे उसके प्रोजक्ट के साथी ने जीत लिया. उसे इनाम में बीस हज़ार रुपये मिले जो उसने अपनी दोस्त के हाथ में रख दिए। वह मदद लेना भी नहीं चाहती थी लेकिन हालात ऐसे थे कि और कोई चारा भी उसके पास नहीं था, उसने कहा-"मैं एक बार सेटल हो जाऊं, तुम्हारे सरे पैसे लौटा दूँगी। "

"देखो! न ही मैं कहीं भागा जा रहा हूँ, न ही ये पैसे ही कहीं भागे जा रहे। तुम इत्मिनान से कोर्स करो, वैसे भी ये पार्टटाइम कोर्स है, तो काम के साथ साथ भी कर पाओगी। "

उसने एक स्कूल में पढाना शुरू किया जो सेक्स वर्कर्स के बच्चों की शिक्षा का प्रबंध करता था। साथ-साथ कोर्स चल रहा था, इस कोर्स के दौरान ही उसे कितनी ही क़ानूनी जानकारियां हासिल हुई, जिनके माध्यम से वह यौन कर्मियों की लडाई खुद के दम पर भी लड़ सकती है।

कोर्स के दौरान उसका आत्मविश्वास जैसे नयी ऊँचाइयों को छूने लगा। उसे यह स्पष्ट हो गया था कि यौन कर्मियों की समस्याएँ केवल स्वास्थ्य तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे कानूनी, सामाजिक और मानसिक स्तर पर भी बेहद गहरी हैं। अब वह उनके लिए केवल एक 'टीम-लीडर' नहीं थी, बल्कि एक आवाज़ बन चुकी थी—एक मुखर और जागरूक प्रतिनिधि।

एक दिन उसके पास एक यौनकर्मी रोते हुए आई। उसका बेटा स्कूल में दाखिला लेना चाहता था, लेकिन स्कूल प्रशासन ने यह कहकर मना कर दिया कि 'ऐसे' लोगों के बच्चों के लिए यह जगह नहीं है। उसने उस माँ का हाथ थामते हुए कहा, "अब किसी को यह कहने का हक नहीं कि तुम इंसान नहीं हो। " उसी शाम उसने शिक्षा विभाग में एक पत्र भेजा—कानूनी भाषा में, ठोस तथ्यों के साथ। सप्ताह भर में उस बच्चे को उसी स्कूल में दाखिला मिला और उस यौनकर्मी ने पहली बार उसकी आंखों में आकर कहा, "तू भगवान नहीं, तू हमारी अपनी बिटिया है। "

उसका अभियान अब व्यक्तिगत स्तर से बढ़कर सामूहिक संघर्ष में बदल चुका था। उसके काम को देखते हुए एक अंतरराष्ट्रीय संस्था ने उसे फेलोशिप ऑफर की। यह एक साल की ट्रेनिंग थी—स्वीडन में। अब चुनौती थी—वहाँ तक पहुँचने की, वीज़ा, पासपोर्ट, जाने-आने का खर्च, और सबसे ज़रूरी—पिता की अनुमति। माँ अब भी चुपचाप उसका साथ देती, लेकिन इस बार कुछ कहने से पहले ही पिता ने झल्लाकर कहा, "अगर तुम्हें वही करना है, जो घर की इज़्ज़त को नीलाम करे, तो इस घर से चली जाओ। "

उसी रात उसने अपना सामान समेटा, माँ के पैर छुए और कहा—"माँ, एक दिन बताऊंगी कि ये इज़्ज़त क्या होती है। अभी के लिए मुझे जाना होगा। " माँ की आँखें छलछला गईं लेकिन होंठों पर कोई विरोध न था। माँ जानती थी कि यह विद्रोह नहीं, संकल्प है।

स्वीडन जाने से पहले जब वह दिल्ली में वीज़ा इंटरव्यू की तैयारी में लगी थी, एक दिन अचानक वही लड़का मिलने आ गया। उसके हाथ में वही पुरानी डायरी थी, जिसमें कैंप की कविताएँ थीं।

"तुमने कभी पूछा नहीं कि मैंने वो पैसे क्यों दिए थे?" उसने धीमे स्वर में कहा।

वह चौंकी, पर संयमित रही, "क्योंकि तुम अच्छे इंसान हो। "

लड़का मुस्कराया, "मैं शायद प्रेम करता था या करता हूँ पर कभी ज़ाहिर नहीं किया क्योंकि तुम्हारे सपनों की ऊँचाई से मैं खुद को छोटा नहीं करना चाहता था। मैं चाहता था तुम उड़ो, तुम्हारे परों में कोई मेरी आकांक्षा का बोझ न हो। "

उसने पहली बार उसकी आँखों में झाँक कर देखा। उसे वो वाक्य याद आया जो सेक्स वर्कर की बेटी ने एक बार स्कूल में लिखा था—"प्यार वो है जो राह में कांटे न बिछाए, चुपचाप झाड़ दे। "

स्वीडन में बिताया गया वह एक साल उसके जीवन का नया आधार बन गया। वहाँ उसे एक नई दुनिया मिली—जहाँ मुद्दे पर बात होती थी, व्यक्ति पर नहीं। जहाँ समाज सुधार की बातें फॉर्मल मीटिंग्स में नहीं, ज़मीनी काम से होती थीं। वहीं पर उसने पहली बार यह महसूस किया कि उसका जीवन तो बस एक शुरुआत है, उसे अब रुकना नहीं है।

भारत लौटने के बाद उसने एक संगठन की नींव रखी—"माटी की

बेटी"। इस संगठन ने सेक्स वर्कर्स के बच्चों के लिए आवासीय विद्यालयों की शुरुआत की, स्वास्थ्य शिविरों का संचालन किया और सबसे बढ़कर—यौनकर्मियों के पुनर्वास पर ध्यान दिया। कई महिलाओं को वैकल्पिक रोजगार से जोड़ा गया।

स्वीडन से लौटने पर जब उसने अपना संगठन शुरू किया, तो सबसे पहला व्यक्ति जो उसका साथ देने आया, वही था। उसने संगठन की वेबसाइट बनाई, डोक्यूमेंटेशन सम्भाला, प्रेज़ेंटेशन तैयार किए। जब उसके काम को अंतरराष्ट्रीय पहचान मिली, तो मंच पर उसका नाम कभी नहीं आया—पर वह हमेशा दर्शकों में बैठा मुस्कराता रहा।

एक रात नायिका ने उससे पूछा, "तुम अब तक क्यों रुके हो मेरे साथ?"

उसने कहा—"क्योंकि तुम्हारी लड़ाई में मुझे अपने भीतर की हर कायरता जलती दिखाई दी। और जब कोई और तुम्हारी पीठ पर हाथ रखता है, तो मुझे ईर्ष्या नहीं होती, गर्व होता है—क्योंकि मैं जानता हूँ तुम मेरी नहीं हो, लेकिन मैं तुम्हारे होने की गवाही में शामिल हूँ। "

वह न रोई, न हँसी। बस चुपचाप हाथ बढ़ा दिया—"तो तुम मेरे संगठन के सह-संस्थापक हो, अब से काग़ज़ों में भी। रिश्तों में नहीं तो इतिहास में तो तुम्हारा नाम होना चाहिए। "

वह गेहुएँ रंग वाला लड़का अब संगठन का अहम् हिस्सा है, लेकिन दोनों ने जीवन को स्नेह से आगे कभी बढ़ने न दिया। शायद एक छाया हमेशा उनके रिश्ते में बनी रही—उस मकसद की छाया, जिसे वे दोनों साझा करते थे।

एक दिन वह पुराने मोहल्ले में एक सेमिनार के सिलसिले में गई। वहीं से गुजरते हुए देखा कि उसके पुराने घर की दीवारें अब फूस की छत से ढँकी थीं। पता चला—पिता के रिटायर होते ही माँ की तबियत बिगड़ गई थी, और धीरे-धीरे सारी संपत्ति बिक गई। माँ अब भी उसी छत के नीचे रहती थी, लेकिन अब न चुप थीं न कमज़ोर। उसने बेटी को गले लगाया और कहा, "जिसे तू छोड़कर गई थी, वो 'इज़्ज़त' मैंने अब जाना है। "

वह मुस्कराई, आँसू पोंछे और माँ का हाथ थाम लिया।

आज उसके संगठन की शाखाएँ पाँच राज्यों में थीं। फेलोशिप, सम्मान, भाषण—सब उसके हिस्से आए, लेकिन जब किसी ने मंच से उसे 'मसीहा' कहा तो वह मुस्कराकर बोली—
"मैं कोई मसीहा नहीं, एक ईंट हूँ उस फूस के मकबरे की, जिसे तुमने इज़्ज़त के नाम पर खड़ा किया था। अब मैं उसे तोड़कर, नई नींव रखने आई हूँ—जहाँ इंसान की पहचान उसके काम से हो, कर्म से हो, शरीर से नहीं। "
¤¤¤

समर्पण

लघु कथा:- श्रद्धा जोशी

दीदी को गुज़रे दो साल बीत गये थे। समय को जैसे पंख लग गए हो। दीपावली की शुभकामनाएं देने के लिए जीजाजी को कॉल किया।

कैसे हैं आप? अच्छा हूं: उसके छोड़े काम का जिम्मा उठाया है वह ठंडी सांस भर कर बोले।
कौनसा काम? मैं सोच में पड़ गई।
वह बड़े मनोयोग से रोज भगवान् को पूजती थी, आजकल मैं भी उसके भगवान की रोज पूजा अर्चना कर रहा हूं। आप और पूजा

आप तो पूर्णतः नास्तिक थे, यह कहते हुए मुझे याद आया कि

दीदी रोज मंदिर दर्शन के लिए जाती थी, हर मंगलवार को घर से सात-आठ किलोमीटर दूर माता रानी के दर्शन करने भी जाती थी हालांकि साथ में जीजाजी भी जाते थे पर वो अंदर कभी नहीं जाते और बाहर सीढियों पर बैठे रहते। वे दीदी के धार्मिक कार्यों में कभी आडे नही आये पर उन्हें विश्वास भी नहीं था। दीदी भी उनके आफिस जाने को बाद ही पूजा पाठ करती थी। और आज उनके इस बदले स्वरुप से मैं हैरान थी। वो बोलेअगर आप किसी के प्रति समर्पण का भाव रखते हैं तो उसके नहीं रहते पर उसकी मनपसंद चीजें अपने आप होने लगती है।
मैं जीजाजी के इस समर्पित भाव पर मन ही मन नतमस्तक हो गई।
¤¤¤

हिंदी शिक्षण की चुनौतियाँ

आलेख:- भोला नाथ सिंह

किसी भी भाषा के समुचित ज्ञान के लिए उसका विषद अध्ययन अत्यावश्यक है। भाषा का मूल अर्थ है - कहना या बोलना, परंतु विभिन्न शिक्षाविदों एवं भाषा वैज्ञानिकों के सिद्धांतों का निचोड़ बताता है कि भाषा एक माध्यम है, जिसमें हम अपने भावों एवं विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। चाहे वह मौखिक रूप में हो या लिखित रूप में।

मौखिक रूप से विचारों को व्यक्त करते समय केवल भावना प्रबल होती है। उस स्थिति में उसका अनुशासन गौण हो जाता है। जब हम अपने कथन को लिखित रूप में व्यक्त करते हैं तब अनुशासन की आवश्यकता प्रबल होती है। इसे अनुशासित करने का कार्य व्याकरण करता है, यानी जब बोली व्याकरण के नियमों से अनुशासित एवं सुसज्जित होती है तभी वह भाषा का रूप लेती है। लिखित भाषा स्थायित्व का पर्याय है।

संसार में अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं। कुछ मृतप्राय या लुप्त भी हो चुकी हैं। भाषा को जीवंत रखने के लिए आवश्यक है उसका प्रयोग, उसका प्रचार-प्रसार। एक बात यहाँ तय है कि जो भाषा जितनी सरल एवं सहज होगी उसे ही लोग अधिक अपनाएँगे। इस दृष्टि से देखें तो हिंदी भाषा बहुत ही सरल है।

आज विश्व के 150 से अधिक देशों में हिंदी बोली जाती है। 200 से अधिक विश्वविद्यालयों में हिंदी की पढ़ाई हो रही है। पूरे विश्व में आज यह तीसरी बड़ी भाषा है। 25 से अधिक देशों में अधिसंख्य लोग इसे बोलते हैं एवं समझते हैं।

किसी भी भाषा के शिक्षण के लिए इसके इतिहास एवं वर्तमान स्थिति का ज्ञान होना आवश्यक है। हिंदी भाषी क्षेत्रों में बोलचाल में जिस प्रकार की भाषा का प्रयोग किया जाता है वह या तो हिंदी का प्राचीनतम रूप है या फिर बिगड़ा हुआ रूप। भाषा को बिगाड़ने वाले कई कारक होते हैं। किस कारक का कितना हाथ है यह कह पाना मुश्किल है, लेकिन जहाँ शिक्षण की बात आती है वहाँ हमें भाषा को शुद्ध रूप में ही प्रयोग करना होगा तभी भावी पीढ़ी इसके शुद्ध रूप को जान पाएगी एवं उत्तरोत्तर आगे की ओर ले जाएगी।

कुछ लोगों में यह धारणा है कि हिंदी निम्न कोटि की भाषा है तो कुछ लोग इसे बहुत जटिल मानते हैं। एक हिंदी भाषा का शिक्षक होने के नाते जिन समस्याओं से मैं रूबरू होता रहता हूँ, मैं चाहता हूँ कि उन पर विस्तार से अपने विचार रखूँ।

यह केवल भारत की ही समस्या नहीं है बल्कि पूरे विश्व में हिंदी की प्रतिद्वंदिता अंग्रेज़ी से है। देश के हिंदी भाषी राज्यों में भी लोगों का रुझान अंग्रेज़ी की ओर अधिक देखा जाता रहा है। लोग अपने बच्चों को अंग्रेज़ी माध्यम के विद्यालयों में पढ़ाना अधिक पसंद करते हैं।

हालांकि यह आवश्यक नहीं है कि हिंदी माध्यम में पढ़ने वाले उन से कमतर होते हैं, परंतु देश की राजनीति हमेशा अंग्रेज़ी का पृष्ठपोषण करती रही है। जनसाधारण की भाषा यानी हिंदी का प्रयोग अधिक-

से-अधिक होता रहेगा तो अंग्रेज़ी समर्थकों का महत्व घट जाएगा। वे मनमानी नहीं कर सकेंगे, ना ही आम जनता से कुछ छुपा पाएँगे।
यह तर्क इसलिए रखा जा रहा है क्योंकि सबसे पहले भाषा के लिए माहौल बनाना आवश्यक होता है। भाषा शिक्षण विषय शिक्षण से भिन्न है। विषय के लिए एक माध्यम चाहिए। माध्यम कोई भी भाषा हो सकती है, परंतु भाषा शिक्षण में माध्यम भी वही भाषा है। इसके लिए लोकप्रियता, सुग्राह्यता एवं सरलीकरण के साथ ही शिक्षण हो तभी वांछित परिणाम प्राप्त होंगे। वातावरण निर्माण आवश्यक है। यह हिंदी शिक्षण में एक बड़ी चुनौती है। दक्षिण भारतीय राज्यों में यह राजनीति की शिकार हुई, परंतु कुछ सुखद संदेश भी है कि आज वहाँ हिंदी बोली एवं समझी जा रही है। दक्षिणी राज्यों के विद्यालयों में हिंदी पढ़ाई भी जा रही है।

व्यापार एवं व्यवसाय के उद्देश्य से हिंदी का प्रयोग बहुत हो रहा है, परंतु इन क्षेत्रों में प्रायः इसका विकृत रूप ही देखने को मिलता है। शिक्षण का उद्देश्य सिर्फ सस्ती लोकप्रियता हासिल करना नहीं होता है, बल्कि भाषा के परिनिष्ठित रूप को स्थापित करना होता है। कदम-कदम पर सावधानी बरतनी पड़ती है। फ़िल्मों एवं विज्ञापनों की दुनिया में जिस चलताऊ भाषा का प्रयोग किया जाता है, उसमें साहित्य सृजन नहीं हो सकता।

हिंदी शिक्षण के विभिन्न स्तर -
भाषा शिक्षण के प्रक्रम में सर्वप्रथम उसके इतिहास से अवगत कराना आवश्यक होता है तभी उस भाषा के विकासक्रम का ज्ञान होगा। हिंदी के लिए प्रारंभिक हिंदी का जो स्वरूप था वर्तमान के मानकीकृत हिंदी में वह रूप बदल चुका है। निम्न कक्षाओं में वर्ण का परिचय कराया जाता है। यहाँ भाषा के इतिहास या विकासक्रम के विज्ञान की आवश्यकता नहीं होती है। वर्ण में जो मान्य हैं उनका सही परिचय एवं लेखन का सही स्वरूप बच्चे को ज्ञात कराना आवश्यक है। अध्ययन के क्रम में उच्च कक्षाओं में भी यह देखा गया है कि विद्यार्थी को वर्ण का सही रूप पता नहीं, विशेषकर संयुक्त वर्णों में अक्सर गलत रूप वे लिख लेते हैं। निचली कक्षाओं में उन्हें इसका सही रूप बताना परम आवश्यक है ताकि एक आदत बनी रहे और वे जीवन में कभी भी गलत ना लिखें।
शब्द निर्माण एक कला है। शब्द सार्थक भी हो सकते हैं और निरर्थक भी। सरलता से जटिलता की ओर ले जाना चाहिए। कुछ शब्द उन्हें कठिन लग सकते हैं, परंतु शब्द वास्तव में सरल और कठिन नहीं होते, वे परिचित अथवा अपरिचित होते हैं। हम जिन शब्दों का प्रयोग अधिकांशतः करते हैं वे हमें सरल प्रतीत होते हैं और जिनका प्रयोग बहुत कम होता है वे कठिन लगते हैं। भाषा को बाँधकर रखना उचित नहीं है। इसे प्रवाहमान होना चाहिए। इसका अर्थ है कि आगत शब्द यदि उस भाषा में प्रचलित हैं तो उनका प्रयोग अवांछित नहीं होना चाहिए। हिंदी भाषा की जननी संस्कृत को माना जाता है। संस्कृत से प्राकृत में आते-आते शब्दों ने अपना तत्सम रूप छोड़ा। यहाँ उन्हें अधिक सरलता से उच्चरित होने के लिए अपना रूप बदलना पड़ा। प्राकृत से अपभ्रंश या अवहट्ट के रास्ते गुज़रते हुए हिंदी में नए रूप को धारण किया। अर्थ दोनों का एक ही है, लेकिन सरलता के लिहाज़ से शब्द में लचीलापन लाया गया। जैसे कर्म - कम्म - काम। बच्चों को अधिक-से-अधिक शब्दों से परिचित कराया जाए, चाहे वे पारिभाषिक शब्दावली से हों, वैज्ञानिक शब्दावली से हों या कार्यालय शब्दावली से।

वाक्य निर्माण की प्रक्रिया में सरलता से जटिलता की ओर अग्रसर होना उचित होता है। हर समय छोटे-छोटे वाक्यों का होना पर्याप्त नहीं होता। विषय की गंभीरता के अनुसार संयुक्त एवं मिश्र वाक्य का संश्लेषण होना चाहिए, लेकिन ध्यान रहे कि अधिक उपवाक्य को जोड़ने के लिए जिन चिह्नों का प्रयोग करना अनिवार्य है उनका प्रयोग अवश्य होना चाहिए। भाषा का अध्यापन तभी कारगर होगा जब अध्यापक या अनुदेशक स्वयं चिह्नों का सही प्रयोग करे।

वाक्य निर्माण में लिंग, वचन, कारक आदि का ध्यान रखना भी परम आवश्यक है। बहुत-से लोगों को यह भी कहते सुना है कि हिंदी पढ़ाने में भला क्या रखा है। यह तो बिल्कुल आसान विषय है। कोई भी पढ़ा देगा। सबसे पहले तो ऐसे लोगों की नासमझी पर

तरस आता है। भाई, हिंदी एक विषय के रूप में कम, मुख्य रूप से भाषा के रूप में पढ़ाई जानी चाहिए। भाषा को आत्मसात किया जाता है। इसमें डूब कर ही इसका सौरभ बिखेरा जा सकता है। गद्य साहित्य को पढ़कर उसमें वर्णित विषय-वस्तु को जान लेना भाषा

को जानना नहीं है। किसी घटना, कल्पित कहानी, विचारपूर्ण लेख, समीक्षा आदि खास विषय-वस्तु का ज्ञान देते हैं। यह सही है कि उसे हिंदी भाषा में लिखा गया, पर भाषा की जो आत्मा है वह उसके सही प्रयोग से ही जिंदा रहती है।

निम्न वर्गों में भाषा की शिक्षा सीधे तौर पर नहीं दी जाती है। इस कालक्रम में बच्चे का मस्तिष्क इतना परिपक्व नहीं होता कि वह भाषा की उन बारीकियों को समझ सके। हो सकता है वह ऊब महसूस करने लगे, इसलिए कुछ रोचक कथाओं, कविताओं, निबंधों के माध्यम से उसे भाषा की शिक्षा दी जाती है। यहाँ पर बहुत सचेत रहने की आवश्यकता होती है। भाषा के प्रयोग को स्तर-दर-स्तर विद्यार्थियों को समझाना आवश्यक होता है। कहानी की रोचकता सिर्फ घटनाक्रम या कथ्य से ही नहीं होती, भाषा का संयोजन, वक्रता, सामासिक शब्दावली, मुहावरों का प्रयोग आदि उसे और रोचक बनाते हैं। शिक्षण के क्रम में इन उपकरणों से अवगत कराते हुए इनके सही प्रयोग एवं इसकी उपयोगिता से परिचित कराते जाने पर विद्यार्थी बहुत कुछ सीख सकेंगे।

कविता के वाचन, विश्लेषण करते समय प्रयुक्त छंद, अलंकार एवं भाव को स्पष्ट करना चाहिए। भाव पक्ष और कला पक्ष दोनों को साथ-साथ रखते जाने पर काव्य कला की बहुत सी बातें उन्हें ज्ञात हो जाएँगी।

जब यही विद्यार्थी उच्च कक्षाओं में (महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय स्तर पर) हिंदी का अध्ययन करेंगे तब उन्हें पहले सिखाई गई बातें अधिक स्पष्ट हो जाएँगी। साथ ही उनसे उन्हें सहायता भी मिलेगी। यहाँ वे भाषा के इतिहास, लिपि के आविष्कार, लिपि में परिवर्तन, भाषा के प्रारंभिक रूप एवं उसके विकास क्रम से भलीभांति परिचित होंगे। भाषा परिवारों के बारे में और उनके अंगों (भागों, वर्गों, बोलियों आदि) के बारे में भी जानेंगे।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 351 में हिंदी भाषा के विकास के लिए निर्देश भी दिया गया है। इसके लिए शब्द भंडार के विस्तारीकरण का उपाय भी सुझाया गया है। इसकी समृद्धि के लिए आठवीं अनुसूची में उल्लेखित भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करने का सुझाव भी दिया गया है। इस व्यवस्था के लिए केंद्रीय हिंदी निदेशालय की स्थापना भी की गई है। सन् 1961 ईस्वी में एक विशेषज्ञ समिति गठित कर इस कार्य को आगे बढ़ाया गया। सन् 1968 में हिंदी वर्तनी के मानकीकरण का कार्य प्रारंभ हुआ। सन् 1983 में इसे संशोधित एवं परिवर्धित किया गया। मानक हिंदी वर्तनी - आईएस:16500 को सन 2012 में लागू किया गया। जिसके तहत वर्तनी के कुछ पूर्व रूपों को बदला गया। पंचमाक्षरों के स्थान पर अनुस्वार लगाने के नए नियम बने। किन स्थितियों में वे अनुस्वार में बदलेंगे और कब नहीं, यह भी बताया गया।

हालांकि अनुनासिक और अनुस्वार दोनों ही साथ-साथ प्रयोग में लाए जाने की बात कही गई, परंतु कंप्यूटर और मोबाइल में टंकन करते समय सहूलियत के मद्देनज़र लोग अनुनासिक की जगह अनुस्वार का प्रयोग धड़ल्ले से करने लगे हैं जो कि बिल्कुल गलत है। इस विषय पर कुछ दिनों पूर्व फेसबुक पर किसी का पोस्ट आया था और इस आलेख के लेखक ने यह बात स्पष्ट की थी, परंतु कई लेखक अपने विचार को ही सही मनवाने पर तुले रहे। उनका कहना था कि वाक्य के भाव से लोग सही अर्थ समझ लेंगे। यह बड़ों की बात हो सकती है पर जहाँ शिक्षण की बात होगी वहाँ इसे स्पष्ट करना आवश्यक होगा, साथ ही सही प्रयोग के बारे में बताना भी।

लेखक समूह में बहुत से ऐसे व्यक्ति भी होंगे जिन्होंने हिंदी भाषा का विधिवत यानी उच्च स्तर पर अध्ययन नहीं किया होगा। बहुतेरे दूसरे क्षेत्र से आए होंगे। उन्होंने सिर्फ निम्न कक्षाओं में इसके सरलतम रूप, जैसा कि इसी लेख में वर्णित है को ही पढ़ा होगा। वे इस प्रभाव को नकार सकते हैं, परंतु यह उचित नहीं है। हम जिसे नहीं जानते हैं उसे गलत कहना कहाँ तक न्यायसंगत है?

वर्तमान में हिंदी लेखन में खड़ी बोली का प्रयोग होता है। इसके पूर्व काव्यजगत में संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, ब्रज, अवधी, मारवाड़ी आदि भाषाओं का प्रभाव एवं प्रयोग अधिक था। अपभ्रंश से लेकर हिंदी के अनुषंगी भाषाओं में जिस साहित्य का सृजन हुआ, वे सभी हिंदी साहित्य में ही गिने जाते हैं। उच्च कक्षाओं में इसका अध्ययन अध्यापन भी होता है। निम्न कक्षाओं के विद्यार्थी उन भाषाओं से भलीभांति परिचित नहीं होते। नौवीं-दसवीं से पहले उन्हें थोड़ी सी भी जानकारी नहीं होती है। नौवीं-दसवीं में आने के बाद ब्रज, अवधि के साथ खड़ी बोली से परिचय होता है, छंदों से परिचय होता है, अलंकारों से परिचय होता है। यहीं से उनका विधिवत प्रवेश साहित्य की दुनिया में होता है।

यह समय बहुत ही महत्वपूर्ण होता है। एकाएक भाषा की जटिलता, अपरिचित होना, गंभीर साहित्य, भाषा में क्लिष्ट शब्दों का प्रयोग, बहुत कुछ झेलना पड़ता है। असीम धैर्य के साथ जिज्ञासु बनने की आवश्यकता होती है। परंतु पाठ्यक्रम को सरलता की ओर ले जाने की नीति उन्हें हानि पहुँचाती है। विद्यार्थी को कठिनाई न हो इस कारण पाठ्यक्रम को छोटा कर दिया जाता है। कुछ पाठ हटा दिए

जाते हैं। फलतः विद्यार्थी उन्हें पढ़ता ही नहीं। वह उसमें निहित तत्वों को जान ही नहीं पाता है। अनेक शब्दों से अपरिचित रह जाता है।

खड़ी बोली की प्रारंभिक स्थिति और अब के मानकीकृत स्थिति (रूप) में बहुत कुछ बदला है। पहले संज्ञा के साथ भी कारक चिह्न जोड़कर लिखे जाते थे। संवादों को लयात्मक बनाने का प्रयास किया जाता था। अब नियम बदले हैं। केवल सर्वनाम के साथ ही कारक चिह्न जोड़कर लिखे जाएँगे, संज्ञा पद के साथ अलग से। शब्दों का विन्यास भी बदल गया है। कई जगह संयुक्त अक्षरों को तोड़कर पूर्ण व्यंजन का प्रयोग किया जाता है।

कुछ सरलता लाने के पीछे टंकण एक मुख्य कारक रहा है। आज के युग में लोग कंप्यूटर या मोबाइल पर टाइप करते हैं। अधिकांश लोग बोलकर टाइप करते हैं। बोलने पर जो शब्द उभरते हैं उन्हें संशोधित करना आवश्यक होता है। इसमें विराम चिह्न नहीं आते। आवश्यकतानुसार विराम चिह्नों को लगाना पड़ता है। पहले पत्र लेखन में बाएँ-दाएँ की समस्या थी। अब कंप्यूटर में सुविधा के लिहाज़ से सब कुछ बाएँ से ही लिखा जाने लगा है। अनुच्छेद में थोड़ी जगह छोड़ने की परंपरा भी लुप्त हो रही है। कुछ लोग पूर्ण विराम के स्थान पर खड़ी पाई (।) की जगह बिंदु (.) का प्रयोग करने लगे हैं।

अब कुछ बातें साहित्य शिक्षण की कर लें। एक साहित्य शिक्षक को निरंतर अध्ययनरत रहना पड़ता है। वह जितनी अधिक जानकारी दूसरी किताबों और पत्र-पत्रिकाओं से हासिल कर सके, उसके लिए उतना ही बेहतर होता है। कविता शिक्षण में कवि का जीवन परिचय बड़ी अहम भूमिका निभाता है, क्योंकि जीवन में जिन घटनाक्रमों से कवि गुज़रा होता है उसकी कविता में उसका कुछ अंश दिख पड़े ऐसा स्वाभाविक है। कभी-कभी पूर्णतः काल्पनिक चित्र भी हो सकता है। जीवन से परिचित होने पर यहाँ भी भ्रम से बचा जा सकता है। उनके भाव एवं विचारों को सही तरीके एवं विस्तार से बताया जा सकता है।

कविता शिक्षण में यदि कविहृदय व्यक्ति हो तो साधारणीकरण बड़ी आसानी एवं जल्दी से हो जाता है। भाव के हृदयंगम होने पर इसका विश्लेषण प्रस्तुत करना भी आसान होता है और अध्येताओं को अर्थ ग्रहण करने में सुगमता भी। यहाँ सिर्फ भाव पक्ष को ही नहीं, साथ-साथ कला पक्ष को भी स्पष्ट करते चलना चाहिए ताकि अध्येता उनसे परिचित हो सकें।

उच्च कक्षाओं में जाने पर ही उन्हें रस, गण, गुण आदि का ज्ञान दिया जाता है। अच्छा भी है कि वहाँ एक विषय का वर्चस्व होता है। जो हिंदी भाषा और साहित्य का अध्ययन करते हैं उन्हें रुचि के साथ पढ़ना चाहिए। दबाव या मज़बूरी में हिंदी अध्ययन-अध्यापन को अपनाने से वांछित फल की प्राप्ति नहीं होगी। विषय चुनने के समय रुचि एवं लगन को ध्यान में रखना आवश्यक है।

भाषा के स्वरूप में समय-समय पर परिवर्तन भी होता रहा है तथा यह आवश्यक भी है। जिस प्रकार जमा हुआ पानी दूषित हो जाता है, इसमें कीड़े पड़ जाते हैं, उसी प्रकार ठहरी हुई भाषा में कई प्रकार के विकार उत्पन्न हो सकते हैं। वास्तव में उन्हें विकार कहें या नहीं, पर बदलते समाज, दुनिया एवं भाषाई दौर में कुछ पुरानी चीजें सुगम नहीं रहतीं। ऐसे में उनमें परिवर्तन लाकर भाषा की लोकप्रियता को बढ़ाया जा सकता है।

एक सुखद बात है कि भारत के कुछ राज्यों (मध्य प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश) में अभियंत्रण एवं चिकित्सा विज्ञान की पढ़ाई हिंदी भाषा में करने की शुरुआत की गई है। कुछ समाचार पत्रों में प्रकाशित खबरों के अनुसार हिंदी में विद्यार्थियों को आसानी नहीं हो रही है बनिस्बत अंग्रेज़ी के। धैर्य रखें, थोड़ा संघर्ष तो करना ही होगा। एक दिन ऐसा आएगा जब विद्यार्थियों को हिंदी भाषा में अध्ययन करना अधिक सरल जान पड़ेगा। हाँ, इसके लिए आवश्यक है कि पारिभाषिक शब्दावली में सरल शब्दों का प्रयोग हो। जो परंपरा इन राज्यों में प्रारंभ की गई है उसका उत्तरोत्तर विस्तार होना चाहिए।

यहाँ अनुवाद की चर्चा करना भी प्रासंगिक होगा। कुछ क्षेत्रों में पाठ्य पुस्तकें अंग्रेज़ी भाषा में ही उपलब्ध हैं। उनका जो हिंदी रूपांतर या अनुवाद हुआ उसमें शब्दकोश से उठाकर ऐसे कठिन शब्दों को डाला गया जिनसे विद्यार्थी वर्ग परिचित ही नहीं है। यदि पहले से परिचित होते तो कोई दिक्कत नहीं होती।

अनुवादक को दोनों भाषाओं का विषद ज्ञान के साथ-साथ उस विषय का भी समुचित ज्ञान होना चाहिए तभी वह सही अनुवाद कर पाएगा। चाहे वह साहित्य हो या अन्य विषय की पाठ्य पुस्तकें। जहाँ सरल-सहज भाषा एवं शब्दों से काम चल सके वहाँ अपरिचित शब्दों का प्रयोग कम किया जाए। अनुवाद में मूल कृति की आत्मा नहीं मरनी चाहिए।

गाँधी जी ने कहा था - विदेशी भाषा का अध्ययन करना बुरा नहीं है लेकिन यदि अपनी मातृभाषा की अवहेलना की जाए तो इससे बुरा कुछ भी नहीं है।

प्राचीन ग्रंथों में भी माँ, मातृभूमि और मातृभाषा को स्वर्ग से भी बढ़कर माना गया है।

आज की इस उपभोक्तावादी समाज में हर क्रियाकलाप को अर्थोपार्जन से जोड़कर देखा जाता है। अच्छा या बुरा की परिभाषा 'अर्थ' (धन) के आधार पर तय किया जा रहा है। जो काम कल निकृष्ट माने जाते थे आज उन्हें महिमामंडित किया जा रहा है, क्योंकि उसमें पैसा अधिक है। विषय का चयन करते वक्त लोगों के मन में धन का तराज़ू मौजूद रहता है। लाभ प्राप्त करना एकमात्र उद्देश्य रह गया है।

भाषा के अध्ययन को भी धन से जोड़कर देखा जा रहा है। अर्थ उपार्जन के विकल्प जहाँ अधिक होते हैं उसी गतिविधि को प्रश्रय मिलता है। भाषा अध्ययन से भी अर्थ उपार्जन संभव है। आज कई क्षेत्र हैं, जैसे - शिक्षण, पत्रकारिता, साहित्य सृजन, विज्ञापन, नाट्य मंचन, काव्य पाठ, अनुवाद आदि, जिनमें अर्थोपार्जन की प्रबल संभावना है। अनेक संस्थाओं में हिंदी अनुवादक का पद भी सृजित है। प्रशासकीय क्षेत्र में भी संपर्क बढ़ाने के लिए दुभाषिए की नियुक्ति की जाती है। विभिन्न देश भी अपने यहाँ दुभाषिए को नौकरी देते हैं ताकि विशाल जनसमूह तक अपनी बात पहुँचा सकें, परंतु केवल बाज़ार से प्रेरित होकर भाषा को सीमित ना कर दिया जाए।

¤¤¤

भीड़ में अकेला

कविता:- डॉ. वर्षा अग्रवाल

भीड़ में अकेला है, इंसान आजकल
न जाने किस कदर खोया है पल पल।
सोचता है कि आसमां पा जाऊँगा
पर गिर रहा उठने की ख्वाहिश में हर पल।।

उठते हुए कदमों से वो, आगे तो बढता गया
पर हर कदम के साथ, कुछ कुछ छूटता गया।
न जाने किस भ्रम में, जी रहा चंचल
पर गिर रहा उठने की ख्वाहिश में हर पल।।

आसमां को छू लिया, सागर की गहराइयों को पा लिया
कठिनाईयों को पार कर ऊचाईयों को पा लिया।
इसी पाने की ख्वाहिश में, रिश्तों को खोता निश्छल
पर गिर रहा उठने की ख्वाहिश में हर पल।।

रिश्ते छूटें बंधन टूटें, छूटा जाए ये संसार
पर खुशी के नकाब में, मरता जाए ये इंसान।
जीवन की ख्वाहिश में मर रहा प्रतिपल
पर गिर रहा उठने की ख्वाहिश में हर पल।।

¤¤¤

कभी ना

कविता:- भवानी देव

कभी ना
बदलने वाली
पृथ्वी में
तुम बन सकोगे
कभी ना बदलने वाले,
प्रेमी व प्रेमिका,
कभी ना
फटने वाले
आसमान में
तुम रोक पाओगे
अपने हृदय को
फटने से,
और
बदलते रहने से
जो बिछड़ गया है,
तुम उसको भुलाने
का साहस रखते हो,
कभी ना
बदलने वाले
प्रेम में
खुद को रख पाओगे तुम,
बिना बदले प्रेम में। ¤¤¤

समर्पण

आलेख:- पूजा अग्निहोत्री

एक बड़े से आँगन में एक किनारे किसी वृद्ध और युवा के बीच कुछ बातचीत चल रही है। संभवतः वे पिता और पुत्र हैं। वृद्ध कुछ तैश में लग रहे थे युवा ने सर झुकाया हुआ था। उसके एक हाथ में एल्युमिनियम की एक छड़ी थी। जिसके सहारे वह खड़ा हुआ था। पिता बार-बार अपने सिर पर हाथ मार-मार कर पुत्र को कुछ समझाने का प्रयास कर रहा था और पुत्र मात्र सहमति-असहमति में सिर हिला देता। अभी बातचीत खत्म भी नहीं हुई थी कि एक नौकर ने आकर हस्तक्षेप करते हुए कहा, " बाबूजी वो लोग आ गए हैं। "

पिता ने अपने पुत्र से कुछ कहा और लंबे-लंबे डग भरता हुआ नौकर के साथ बाहर चला आया, पुत्र वहीं पास में रखी कुर्सी पर बैठ जाता है।

यह दृश्य है बनारस के पास के गॉव परमानंदपुर का, और जो आपस में बहस कर रहे हैं वह परमानंदपुर गॉव के प्रधान दयाल बाबू और उनका सबसे छोटा बेटा कपीश, जिसे एक पैर में पोलियो है।

आज उसे लड़की वाले देखने आए हैं, लेकिन वह विवाह करने के लिए राजी नहीं है। किन्तु पिता (दयाल बाबू) उसकी गृहस्थी

बसी हुई देखना चाहते हैं। बस इसी बात पर अभी दोनों में तकरार हुई थी।

दयाल बाबू गॉव के प्रधान तो थे ही, साथ ही 80 एकड़ उपजाऊ जमीन के स्वामी भी थे। ऊपर से गंगा माई की इतनी कृपा कि उस जमीन की उपज से उनका परिवार ठाठ से जीवन गुजार रहा था। गाँव में दयाल बाबू का विशेष सम्मान था और वह इसलिए कि गाँव में रहने वाले लोगों में वे सबसे अधिक पढ़े-लिखे और सझदार व्यक्ति थे। बचपन में जब उनके साथ के लड़के कबड्डी खो-खो खेल रहे होते या कनकैया उड़ा रहे होते तो वे किताबों में सिर खपा रहे होते।

ऐसा भी नहीं था कि वह इकलौते ही इस प्रकार के बच्चे थे कुछेक लड़के और थे जिनकी किताबों से दयाल से भी ज्यादा गहरी मित्रता थी। इंटरमीडिएट में जो बच्चे पास हुए वह बनारस में जाकर पढ़ने लगे। बच्चे पढ़-लिख गए तो उन्हें अपना ही गाँव हेय लगने लगा। सो वहीं शहर में रोजगार ढूंढ लिया और वहीं बस भी गये। अब छठे-छमाहे ही गाँव आना होता। इधर दयाल इन सबके विपरीत पढ़ लिखकर अपने गाँव वापस आ गया। उसे शहर की चकाचौंध बाँध नहीं पाई, लिहाजा वह गॉव आया और अपनों के बीच में रम गया। उसने तय किया कि शहर में अर्जित ज्ञान का उपयोग वह अपने गाँव की उन्नति के लिये करेगा।

दयाल ने वकालत की पढ़ाई की थी। उसने जब भारत के संविधान के प्रति निष्ठा शपथ ली थी, तो साथ ही उसने अंतर्मन में एक और शपथ ली थी- वह यह कि वह गरीब मजबूर किसानों के मुकदमे बिना कोई फीस लिए लड़ेगा। उसने इस शपथ को कार्य-रूप भी दिया, परिवार वालों को भी उस पर गर्व था और उन्होंने उसके फैसले का पूर्ण सम्मान करते हुए हमेशा साथ दिया। उदारता और दयालुता का परिणाम ही था कि समाज में उनका कद और बढ़ गया, दयाल अब दयाल बाबू कहलाने लगे।

कुछ दिनों में साथ वाले गॉव के प्रधान की सर्वगुण संपन्न पुत्री प्रभा देवी से उनका विवाह भी हो गया। उनकी पत्नी प्रभा देवी के आने से घर मे रौनक छा गयी। वह गृहकार्य में इतनी दक्ष थी कि घर में आधा दर्जन नौकर होने के बाद भी रसोई स्वयं ही सम्हालतीं।

महीना भर में ही घरवालों की चहेती हो गयी थीं। जब भी मायके जाती दो दिन बाद ही अम्मा कहतीं, -"बहुरिया जब मूड़ ओढ़े आँगन में घूमती है तो घर में अच्छा लगता है, जबसे गयी सूनर सी छा गयी। जाकर ले आओ। " और आठवें दिन बुलाकर ही दम लेतीं।

विवाह के सवा साल बाद एक बेटा और चार साल बाद एक बेटी

हो गई। उनका परिवार पूरा हुआ। दयाल बाबू और प्रभा देवी दोनों खुश थे लेकिन अभी भी उनके माता-पिता को परिवार अधूरा ही लग रहा था।

उनका मानना था कि घर में बैल और बेटा अकेला शोभा नहीं देता इनकी जोड़ी होना जरूरी है। दयाल बाबू हमेशा कहते, "बच्चे कम ही अच्छे। उनकी परवरिश ही अच्छे से कर ली. उनको अच्छे संस्कार दे पाये तो समझो गंगा नहा ली। "

कोई कितना भी कहता पर दयाल बाबू पर रत्ती भर असर न पड़ता वे अपने परिवार से पूरी तरह संतुष्ट थे इसीलिए परिवार नियोजन का ख्याल भी रखते। लेकिन प्रभा देवी का मन कभी-कभी दूसरे बेटे के लिए मचलने लगता।

अब दयाल के पिताजी की तबीयत भी ठीक नहीं रहती थी। एक दिन नहाते समय वह स्नानघर में फिसल कर गिर गए थे, उसके बाद उनके कमर के नीचे के धड़ ने काम करना ही बंद कर दिया।

यह लगा कि चोट लगने के कारण ऐसा हुआ है। दवाई करवाई गई लेकिन डॉक्टर भी मर्ज को समझ नहीं पाया। दूसरे दिन तक पैरों में सूजन भी आ गयी तो शहर ले जाकर भर्ती किया। वहाँ पता चला कि, फालिस मार गया है। कुछ दवाइयाँ दी और कुछ कसरत जो कि सूजन ठीक होने के बाद करवानी थीं, बताकर घर भेज दिया गया।

घर आने के सप्ताह भर के भीतर ही वह इस नश्वर दुनिया को छोड़कर स्वर्ग सिधार गये। पिता को मुखाग्नि दयाल बाबू ने ही दी थी, उसके नियम अनुसार एकादशी के दिन जीवात्मा के लिये जो पत्तल रखा जाता था, उसका खाना दाह संस्कार करने वाले की पत्नी द्वारा ही बनाया जाता।

उसमें मृतक की पसंद का सारा भोजन पत्तल में रखा जाता। प्रभा देवी जब पूरी-कचौरियाँ तल रही थी तब उन्हें उबकाई और चक्कर से महसूस हुये। उस समय तो उन्होंने ठंडे पानी से मुँह हाथ धोया और फिर से काम में लग गई। लेकिन दूसरे-तीसरे दिन भी जब वही महसूस हुआ तो उसने अपनी सास को तबियत खराब होने की बात बताई। दयाल बाबू की माँ ने देखा की बहू की तबीयत ठीक नहीं है उसका रंग भी पीला पड़ गया है।

उन्हें पता था कि, उसकी माहवारी भी कुछ महीनों से समय पर नहीं आ रही थी, एक बार जब डॉक्टर को दिखाया तो डॉक्टर ने कहा कोई चिंता की बात नहीं है खून की कमी और कमजोरी के कारण ऐसा हो जाता है। आप इन्हें फलों का रस और पालक एवं अन्य हरी सब्जियों का सेवन करवाएँ, भरपूर आराम दें। यह कोई बड़ी बात नहीं है, इसे पौष्टिक खाने के द्वारा आसानी से ठीक किया जा सकता है।

सास को लगा कि कहीं कोई चिंता की बात तो नहीं है। उन्होंने दयाल बाबू को हिदायत दी कि, जाकर डॉक्टरनी को घर लेकर आओ।

डॉक्टर ने जाकर चेकअप किया और घोषणा की की प्रभादेवी एक बार फिर माँ बनने वाली हैं। इतना ही नहीं यह उनका तीसरा महीना चल रहा था।

दयाल बाबू की माँ बहुत खुश थी उनको ऐसा लग रहा था कि उनके पति यानि दयाल के बाबूजी फिर से लौट कर आ रहे हैं। दयाल बाबू खुश नहीं थे, वह नहीं चाहते थे कि यह बच्चा हो। उन्होंने कहा भी कि, "अम्मा अगर बिटवा की जगह बिटिया की जोड़ी हो गयी तो?"

माँ जी ने कहा कि, "तो. तो क्या! लक्ष्मी सरस्वती की जोड़ी हो जायेगी, लेकिन बच्चा खराब कराने के बारे में सोचा तो हमसे बुरा कोई न होगा, समझे रहना। "

एक तो प्रभा देवी की कमजोर देह और दूसरे उनकी माँ की खुशी को देखकर वह चुप रह गये।

संजोग ऐसा की दयाल बाबू की माँ का विश्वास जीत गया और बेटा ही हुआ। इस बच्चे से दयाल बाबू की माँ को अथाह स्नेह था। उनके दिमाग में यह बात थी कि यह उनके पति का पुनर्जन्म है। वैसे तो दयाल बाबू यह बच्चा नहीं चाहते थे, लेकिन जब उन्होंने उस

गोलगोथने बच्चे को देखा तो उनका वात्सल्य उमड़ पड़ा और वह उनका अतिप्रिय हो गया। दोनों बच्चे भी उसका बहुत ख्याल रखते। नन्हा बच्चा पूरे घर का ही खिलौना बन गया था। साल भर कब बीता, पता ही नहीं चला! अब अब वह चलने और कुछ-कुछ बोलने भी लगा था।

कुछ ही दिनों में वह पूरे दिन बंदर की तरह इधर - उधर उछल-कूद करता रहता। घरवाले उसे चिढ़ाने के लिये कपि कहते। एक दिन प्रभादेवी ने दयाल बाबू को याद दिलाया कि इसका जन्म प्रमाण पत्र नहीं बना है। जन्म प्रमाण पत्र बनवाने के लिए जाते समय दयाल बाबू ने अपनी माँ से कहा कि, "अम्मा, लाल्ला का नाम क्या रखना है?"

माँ जी ने कहा इसके बाबा हनुमान जी के बहुत बड़े भक्त थे तो इसका नाम कपीश ही लिखवा दो। इस तरह मजाक में कहा जाने वाल नाम उसका वास्तविक नाम भी हो गया।

बाबूजी के जाने से जो मायूसी घर में छा गई थी अब करीब करीब खत्म हो गई थी। करीब तीन साढे तीन साल उम्र रही होगी कपीस की की एक दिन उसे हल्का बुखार आया जो अगले दिन बढ़कर बहुत तेज हो गया फिर ऐसे लगा जैसे उसके पैरों ने हरकत करना ही बंद कर दी। शुरू में लगा शायद कमजोरी के कारण होगा। फिर भी सुबह होते ही दयाल बाबू और प्रभादेवी उसे सरकारी अस्पताल लेकर गए वहाँ जाने से पता चला कि कपीस को पोलियो हो गया है। लेकिन एक फायदा भी हुआ कि दूसरा पैर सही सलामत बच गया, लेकिन लाख जतन करने पर भी पहले वाले पैर में जान वापस नहीं आ पाई।

डॉक्टर से दयाल बाबू ने रोते हुये हाथ जोड़कर पूछा था कि, "डॉक्टर साहब, अब यह सामान्य बच्चों की तरह कभी नहीं चल पाएगा?"

डॉक्टर ने सान्त्वना देते हुये कहा, "देखिये दयाल बाबू, अभी विज्ञान ने ऐसी दवा ही बना पाई है जिससे इस रोग को होने से तो रोका जा सकता है, लेकिन अगर उसमें कोताही बरती जाये और एक बार यह हो जाये, तो फिर उसे ठीक करने का कोई उपाय नहीं है। लेकिन चमत्कार भी होते हैं, भगवान पर विश्वास रखिये। "

दयाल बाबू खुद को कोस रहे थे कि इतना पढ़ा लिखा होने के बाद भी मुझे यह कैसी लापरवाही हो गई कि उसे दो बूंद पोलियो पिलाना भी मुझे याद ना रहा। सबको न्याय दिलाते - दिलाते खुद अपने जिगर के टुकड़े के साथ में अन्याय कर बैठा।

आज वह रोते हुए आसमान में देख कर अपने बाबूजी को याद कर रहे थे कि, कम पढ़ा लिखा होने के बाद भी वह नंदिनी और प्रांजल को बिना नागा हर बार पोलियो बूथ पर ले जाकर पोलियो की खुराक दिलवाते थे। सबसे बड़ा रंज यह था कि यह एक ऐसी बीमारी थी जिसका कोई तोड़ नहीं था इसलिए अब दयाल बाबू कपीस की पालन पोषण और परवरिश पर विशेष ध्यान देते। साथ ही उन्होंने यूनानी दवा खाने वालों और देसी वैद्यों से भी दवाई करवाई, नाना प्रकार के जड़ी-बूटियों युक्त तेल बनाकर कुछ बनवाकर खुद मालिश की। सबके जवाब सुनकर और अपने प्रयासों को असफल होते देखकर उन्होंने भी हार मान ली थी। लेकिन प्रभादेवी ने अभी हार नहीं मानी थी। अब प्रभादेवी ने अपने घर गृहस्थी और बच्चे अपनी बूढ़ी सास और नौकर-चाकरों के भरोसे छोड़ दिये। खुद तन्त्र-मन्त्र, हवन-पूजा, गड़ा-ताबीज के फेर

में ही पड़ी रहने लगी। उसे लगता कि इस सबसे कुछ फायदा तो हो रहा है। दूसरी तरफ कभी-कभी दयाल बाबू को भी लगता कि, उनके जड़ी-बूटी और बिषखापर के तेल की मालिश का असर हो रहा है। खैर जो भी हो इन सब का मिला-जुला परिणाम यह रहा कि 10 साल का होते-होते कपीश छड़ी का सहारा लेकर ठीक-ठाक चलने लगा, और अपने अधिकांश काम स्वयं ही करने लगा। नवमी-

दसवीं में जब हारमोंस बदलते हैं और स्कूल में रिप्रोडक्शन का पाठ पढ़ाया जाता है तब अधिकांश बच्चे जब अपना जोड़ीदार ढूंढ रहे होते हैं। लेकिन कपीश किताबों को घुन की तरह चाट रहा होता। वह अपनी अवांछित दैहिक कमी को पढ़ाई से पूरा करने की भरपूर कोशिश करता और इसमें वह सफल भी रहा। कुशाग्र बुद्धि कपीश प्रतिवर्ष अपनी कक्षा में प्रथम स्थान पर रहता। अब वह अपने ही शहर के नामी शासकीय विद्यालय में व्याख्याता के पद पर था। अब तक बड़े भाई प्रांजल का विवाह हो चुका था और वह अपने परिवार के साथ शहर में ही रहने लगा था। खुशी- गम के मौके पर ही गॉव आता। बहन नंदिनी भी अपनी गृहस्थी में रम गई थी। वह भी बुलावा भेजने पर आती या छठे-छमाहे मिलने आ जाती। दादी भी अब दादा जी के पास चली गई थी। घर में दयाल बाबू और प्रभा देवी को यह चिंता रहती कि, उनके जाने के बाद कपीश एकदम अकेला हो जायेगा। उन्हें लगता कि उसके लायक जीवनसाथी मिल जाता तो वह अपने सारे उत्तरदायित्व से मुक्त हो जाते और भगवान का भजन करके परलोक सुधारते। लेकिन कपीश से जब भी विवाह की बात की जाती तो वह भड़क जाता सो कपीश को बिना बताए ही अपने रिश्तेदारों को एक सुशील कन्या खोजने का संदेश भिजवा दिया। जब कपीश को यह बात पता चली तो उसने खूब विरोध किया। उसका कहना था, -"भगवान ने मेरे साथ गलत किया इसका अर्थ यह तो नहीं कि उसका बदला में किसी ने अपराध के जीवन को बर्बाद करके लूँ। अगर मैं ऐसा करता हूँ तो वह घोर अपराध होगा। "

पर जब भी इस तरह की बात करता तो घर का माहौल बहुत खराब हो जाता और एक अजीब सी मनहूसियत छा जाती।

एक बार प्रभा देवी के भाई रमाशंकर मामा रिश्ता लेकर आये। जिससे कि पूरा घर प्रसन्न था। रमाशंकर मामा का कहना था कि -"लड़की वाले बहुत गरीब हैं, वह केवल कुशा कन्या ही दे सकते हैं। लेकिन यहाँ दहेज चाहिये किसको है?

लड़की मात्र आठवीं तक पढ़ी है लेकिन खूबसूरत और सुशीला है। और अपन को क्या चाहिये?"

कन्या पिता उसके लिए तब से रिश्ता खोज रहे थे जब वह मात्र 16 वर्ष की थी लेकिन पाँच साल हो गए अभी तक उन्हें ऐसा कोई परिवार नहीं मिला जहाँ बात बन जाए। कहीं पढ़ाई को लेकर तो कहीं दहेज को लेकर उन्हें लड़के वालों के यहाँ से बैरंग ही लौटा दिया जाता। जब इस बात की झनक प्रभादेवी के भाई के कान में पड़ी तो उन्होंने अपने भांजे कपीश का नाम सुझाया। कपीश की एकमात्र कमी को अगर दरकिनार कर दिया जाए तो वह सर्वगुण संपन्न था। गौरवर्ण, उन्नत मस्तक घुंघराले काले बाल, समुद्र सी गंभीर आंखें मुस्कुराते होंठ, सब मिलकर उसे बहुत आकर्षक व्यक्तित्व प्रदान करते। सोने में सुगंध का काम करता उसका स्वभाव और वार्तालाप का तरीका। कपीश की फोटो वगैरह तो रमाशंकर जी ने अपने घर के एल्बम से उनको दिखा दी थी।

पहली बार जब लड़की वाले रामाशंकर के साथ घर आए तो कपीश बैठक में ही था। उन सबके प्रवेश करते ही कपीश ने मामा और उनके साथ के लोगों को नमस्कार किया, सम्मान के साथ बैठने को कहा। उसे लगा कि शायद यह दयाल बाबू के पास किसी अदालत के काम से आए हैं। उसने अपनी छड़ी उठाई और, -"पिताजी आपसे कोई मिलने आए हैं। "

कहते हुए अंदर की ओर चला गया। रमाशंकर बाबू ने कपीश के जाने के बाद लड़की के बाबा से कहा कि यही है हमारे कपीश बाबू बहुत ही सज्जन हैं। उन सबको भी कपीश का रहन - सहन और व्यवहार बहुत अच्छा लगा। जब दयाल बाबू आये और लड़की वालों से बात की तो वह सब तो उनके मुरीद ही हो गये। फिर भी घर जाकर बात करने और आठ दिन बाद फिर आने को कहकर चले गये।

अब आज वे लोग अपने परिवार के कुछ अन्य सदस्यों को लेकर आए हुए थे कि अगर सब कुछ ठीक लगा तो वरिच्छा करके ही जायेंगे। उन सबको घर-द्वार परिवार सब बहुत अच्छा लगा। इधर कपीश के परिवार वालों को भी कोई उज्र न था।

सो सर्वसम्मति से आज ही वरिच्छा करने का निर्णय लिया सब राजी थे, पर अब समस्या यह थी कि कपीश पलड़ा पर बैठने को तैयार नहीं हो रहा था। उसका कहना था कि वह स्वयं तो अभिशप्त जीवन जी ही रहा है, पर वह किसी निरापद को इसका भागीदार बनाना नहीं चाहता।

बस इसी बात पर पिता पुत्र में वाकयुद्ध छिड़ा हुआ था। काफी देर बहस होने के बाद भी जब कोई उपाय ना निकला तो आखिरकार दयाल बाबू ने अपना ब्रह्मास्त्र छोड़ा और कपीश को धमकी देते हुए

कहा कि, -"अब या तो तुम ब्याह की तैयारी करोगे या फिर मेरी 13वीं की। मैं खेत पर जा रहा हूँ, तेरी मर्जी जो हो रमाशंकर को बता देना। "

और ऐसा कहते हुए अपने घर आए अतिथियों को घर पर ही बैठा छोड़कर वह पीछे के दरवाजे से अपनी बुलेट लेकर खेत पर चले गए।

अभी कपीश की उम्र भी केवल 24 साल ही थी सबसे छोटा होने के कारण वह सब का लाडला था। उसने कभी कठिनाई देखी ही नहीं थी। पिता के बिना अपने जीवन की कल्पना करके ही उसकी अंतरात्मा काँप उठी। अब उसने बिना अधिक सोचे, रमाशंकर मामा को अंदर बुलवाया और कहा, -"मामा पिताजी को खेत पर से बुला लो, कहना कि मैं विवाह के लिए राजी हूँ। लड़की वाले के साथ आये पंडित जी गणना कर चुके थे। उन्होंने 15 दिन बाद विवाह का अत्यंत शुभ मुहूर्त बताया। वैसे उस समय इतनी जल्दी में शादी विवाह नहीं हुआ करते थे पर यहाँ दयाल बाबू को लगा कि कहीं ऐसा ना हो कि कपीश का मन फिर से बदल जाए। वहीं लड़की वालों को भी यह लग रहा था कि कहीं इतना अच्छा घर-वर हाथ से निकल ना जाये। इसलिए तय हुआ की वरिच्छा के बाद सीधे ब्याह ही होगा। ओली (गोद-भराई) और तिलक के नेग-दस्तूर विवाह के दिन ही निभा लिए जायेंगे। जब घर में विवाह की तैयारी हुई तो कपीश को भी काफी काम संभालने पड़े। उसे व्यस्तता के चलते इस विषय में बहुत सोचने का समय नहीं मिला। लेकिन जब कभी तेल या उबटन मलते समय मामी, भाभी कुछ मजाक करतीं। या फिर केसर का नाम लेकर चढ़ती तो वह अपराध बोध से अवश्य भर जाता। अभी वह मजबूर था लेकिन उसने अपने मन में तय कर रखा था कि वह यह अन्याय नहीं करेगा। अभी उसे कोई उपाय समझ नहीं आ रहा था। इसलिए उसने पिताजी के फैसले का सम्मान करते हुए केसर से विवाह तो कर लिया। पर अब उसे ऐसा लग रहा था कि, निश्चित ही केसर ने यह शादी अपनी इच्छा से तो नहीं ही की होगी। उसने भी मेरी तरह अपने पिताजी और घर वालों की इच्छा का मान रखते हुए मुझे विवाह किया होगा। भला कौन लड़की चाहेगी कि उसका जीवनसाथी दिव्यांग हो। खैर विवाह अच्छे से संपन्न हो गया।

आज उसकी मधु यामिनी थी। केसर लाज से सिमटी सेज पर बैठी थी। इधर कपीश ने अपने मन में यह दृढ़ संकल्प लेकर कमरे में प्रवेश किया कि, वह केसर को इस अनचाहे और बेमेल रिश्ते से मुक्त कर देगा, वह भी निष्कलंक। लेकिन वह अपनी बात केसर से कैसे कहे, किन शब्दों में कहें यह उसे समझ नहीं आ रहा था। वह पलँग के एक किनारे बैठ गया और केसर का घूँघट उठाने के बजाय शब्दों का ताना- बाना बुनने लगा। काफी समय हो गया, वह बात करने के लिए कोई सिरा खोज ही रहा था कि तभी एक खनकती आवाज ने उसके कानों में मिश्री सी घोल दी, "सुनिये!"
" हँ हँआँ बोलो ना।
"देखिए आप इतने पढ़े-लिखे और इतने बड़े स्कूल में मास्टर हैं, और हम बस आठवीं तक पढ़े हैं। "

कपीश ने विस्मय से कहा- 'हाँ तो?"

"तो यह कि, यदि आपने अपने पिताजी का मान रखने के खातिर हमसे ब्याह किया हो तो हम अपने मायके चले जाएंगे। खुद से ही, आप पर कोई दोष नहीं आयेगा। पूरा दोष हम अपने ऊपर ओढ़ लेंगे, राम कसम। "

कपीश को लगा कि जो वह कहने जा रहा था वह सब केसर क्यों कह रही है?

उसने कहा, -"अरे केसर ! मुझे तो लग रहा था कि तुम इस रिश्ते से नाखुश होगी?"

"नाखुश वो काहे भला?"

"वह इसलिए कि, तुम्हें अब अपना पूरा जीवन एक अपाहिज के साथ जो जीना होगा। सबको मेरा अपाहिज होना एक बड़ा अभिशाप लगता है, यहाँ तक कि मुझे भी। "

तब केसर ने कहा- "सुनो, जैसा आपको शरीर का पोलियो है वैसे ही मेरे परिवार को गरीबी का। अब जरा आप ही बताइए अगर आपको पोलियो ना होता तो क्या आप मेरे जैसी कम पढ़ी-लिखी साधारण सी दिखने वाली लड़की से ब्याह करते, नहीं न! तो होगा जिसके लिये अभिशाप हो, मेरे लिए तो वरदान है। "

कपीश कुछ कहता उससे पहले केसर ने उसके पोलियो ग्रस्त पर को चूम लिया। कपीश उसे जवाब देने के लिए शब्द टटोलना लगा।
¤¤¤

अहमियत दाने दाने की

कविता:- आशा भाटिया

अहमियत दाने दाने की
इक दिन जा पहुँची मैं खेतों में।

अन्नदाता की हो रही थी हालत ख़राब।
बार-बार मौसम बदल रहा था अपनी चाल।

ग़र हो गई बिन मौसम बरसात।
तो हो जाएगी गेहूं की फसल बर्बाद।

कहीं नौबत ना आ जाए खाने की।
देखो ज़रा उस की नज़र से

जहाँ अहमियत है दाने-दाने की।
दूर- दूर तक फसल थी लहरा रही।

भारत का भविष्य थी बता रही।
फसल कुछ कट गई

कुछ कटने को थी तैयार।
दूर से देखा तो

उठ रहा था धूल का ग़ुबार।
कहीं ख़ाली थी ज़मीन बस रह गए थे ठूँठ

हाथों से ज़ख़्मी , पैरों में छाले
बेबस मज़दूर रहे थे कुछ ढूँढ।

देखा जब पास जाकर
होड़ लगी थी कुछ पाने की।

उड़ गए मेरे होश
क्या बात करूँ ज़माने की।

याद आ गए बड़े -बड़े उत्सव और त्यौहार
और थालियों में बचें हुए खाने की।

चुन रहे थे वे ज़मीन से मुट्ठी भर अनाज।
जहाँ अहमियत थी दाने दाने की।

¤¤¤

जनवरी की तरह

कविता:- सुधा गोयल

जाते दिसम्बर की ये
गुनगुनाती सी
सर्दिली सी शाम है
मन कुछ हैरान
परेशान है।

चलो घूम आएं कहीं
किसी पार्क में
बाजार में या
चाय के खोखे तक
पी लें एक कप
गर्म गर्म चाय
इस ढ़लते दिसम्बर की सांझ में।

सुकून से फुटपाथ पर
दो चार सखियों के साथ
कुछ कहकहे लगा लें
थोड़ी गप्पे ही सही
सरसराते पल्लुओं के साथ
या लपेट कर शाल
पहनकर कनटोप
मना लें दिसम्बर की सांझ।

कुछ गुनगुनाते हुए
कुछ चहकते हुए।

छोड़ आएं उम्र का लिहाज
घर की चौखट पर
उड़ लें हम भी यदा कदा
एक लम्बी सी उड़ान
और उबाऊ सी
जिंदगी को छोड़ पीछे
घूम आएं हाथ में हाथ डाले
आगे बढ़ जाएं
जनवरी की तरह।

¤¤¤

अंतिम विदाई

कहानी:- अनीषा पाण्डेय

रामपुर के पंडित रामकृष्ण जी एक किसान थे और अपने परिवार का पालन पोषण कृषि के माध्यम से करते थे। रामकृष्ण जी की माता के मृत्यु के उपरांत भाइयों ने उन्हें घर से बाहर कर दिया और अन्न का एक दाना भी नहीं दिया था।

घर से निकाल फेंकने के बावजूद भी वो अपने घर का संचालन बड़े अच्छे से कर रहे थे। उनके एक पुत्र और एक पुत्री पहले से ही थी। बारी थी अंतिम पुत्री की जिसका जन्म उनकी पत्नी व डॉक्टरों की इच्छा न होने के बावजूद भी हुआ था। आप सोच रहे होंगे कि डॉक्टरों की इच्छा जी है डॉक्टर की इच्छा क्यों नहीं थी। क्योंकि डॉक्टरों को लगता था कि मां और बेटी में एक ही जिंदा बचेगी तो सभी ने मां को बचाने का सुझाव दिया। परन्तु भगवान की इच्छा के बिना कुछ नहीं होता। सकुशल मां और बेटी दोनों बच गईं।

दूसरी बेटी के जन्म से ही पिता बहुत प्रसन्न रहते थे क्योंकि बेटी के जन्म के दो दिन बाद ही उनकी घर लेने की इच्छा पूर्ण हुई थी जिसे लेने के लिए वो दिन-रात मेहनत कर रहे थे। पिता पुत्री में बहुत स्नेह था। लोग कहते हैं कि हर घर में पुत्र को अधिक मान सम्मान मिलता है परंतु रामकृष्ण जी अपनी पुत्री को पुत्र से अधिक स्नेह करते थे। घर में किसी की हिम्मत नहीं थी कि, उसे कोई हाथ लगा दे या डांट दे। अगर डांट दे तो रामकृष्ण के गुस्से का उसे सामना करना पड़ता था इसलिए किसकी मजाल थी कि कोई उनकी लड़की को कुछ कहे।

धीरे-धीरे पुत्री बड़ी हुई लगभग बारह -तेरह वर्ष की, तब ही एक दुर्घटना घटी रामकृष्ण के भाइयों ने षड्यंत्र रचकर उनको मार डाला यह निर्मम घटना उनकी बेटी की आंखों के सामने हुई। जो अपने पापा को को इतना प्यार करती थी कि, पापा के साथ ही स्नान , खाना-पीना करती थी। पिता के बिन जो एक पल भी नहीं रह पाती थी। उसने न सोचा था कि, कभी वह अपने पिता को खून से लथपथ देखेगी।

पिता को हॉस्पिटल ले जाया जा रहा था, बेटी खड़ी देख रही थी। उसे कुछ समझ नहीं आ रहा था कि क्या हो रहा है, जानती भी कैसे? उसे तो मृत्यु शब्द का अर्थ भी नहीं मालूम था। रामकृष्ण को एक हॉस्पिटल से दूसरे हॉस्पिटल भेजा जा रहा था। पुत्री पापा ! पापा ! कहकर बस रोये जा रही थी। सब चीजें उसकी कल्पना से परे थीं। उनको गाड़ी से ले जाया जा रहा था, शायद यह अंतिम विदाई थी। पर पुत्री को कहा मालूम था कि, ये अंतिम विदाई थी। उसे लगता था कि, उसके पापा लौटकर आयेंगे और गले लगाकर बोलेंगे-'सब ठीक है। मैं यहीं हूं, मत रो। ' पर ये मात्र कल्पना ही थी। जब दूसरों के माध्यम से पुत्री को पता चला तो उसके मन में अनेक सवालों का गुबार उमड़ पड़ा। क्या लोग सच में कह रहे हैं? क्या सच में मेरे पापा वापस नहीं आयेगे? कभी उसका मन कहे कि, सब झूठ बोल रहे हैं। आयेंगे क्यों न आयेंगे? क्या मेरे बिन वो कहीं रह पाएंगे? नहीं, वो जरूर आयेंगे। मन में अनेक सवाल थे। एक दिन बाद सब जब कह रहे थे कि, अंतिम संस्कार करना होगा। उसके दिमाग में एक अनजाना डर-सा आ गया। क्या सच में वापस नहीं आयेंगे? रात के 8 और 9 के बीच का टाइम था एक एम्बुलेंस एक अजीब सी आवाज निकालती हुई उनके घर की तरफ ही आ रही थी, सब लोग द्वार में खड़े थे। तब भी पुत्री के मन में एक सवाल था कि क्या ये सब सच में हो रहा है या मैं सपने में हू? मृत रामकृष्ण को एंबुलेंस से बाहर निकाला गया और द्वार के चबूतरे में जमीन पर ही लिटा दिया गया। सब रो रहे थे पर उसकी पुत्री को तब भी लग रहा था कि वो वापस आयेंगे, जैसे फिल्मों में होता है। पूरी रात पापा ! पापा ! कहती खाट का परवा (पाटी) पकड़े वो रोये जा रही थी। उसको लगता था कि सपना खुलेगा और उसके पापा उसे गले से लगा लेगे। पूरी रात बीत गई, सवेरा हुआ और उनको अंतिम संस्कार के लिए ले जाने लगे। पुत्री रोए जा रही थी पर उसे यकीन हो गया था शायद उसके पापा अब नहीं आयेंगे। वापस आने की कल्पना सिर्फ फिल्मों में ही पूरी होती है, हकीकत में नहीं।

¤¤¤

एक और स्वर्ग, हमारा कश्मीर

संस्मरण:- गुडविन मसीह

वह दिन मेरे लिए किसी स्वर्णिम दिन से कम नहीं था, जिस दिन मुझे कश्मीर की सुरम्य वादियों का सुहाना सफर करने का मौका मिला।

इक्कीस फरवरी दो हज़ार तेईस का वह दिन, सुबह नौ बजकर चालीस मिनट पर जम्मू तवी तक जाने वाली सियालदाह एक्सप्रेस बरेली जंक्शन के प्लेटफार्म नंबर तीन पर आकर रूकी।

हमारा रिजर्वेशन एसी के, बोगी नंबर बी 6, में था, हम कुल चौदह प्राणी थे, जो एक साथ कश्मीर के सफर पर रवाना हुए थे। हम सभी ने अपना अपना सामान बोगी में चढ़ाया और अपनी अपनी सीट पर कब्जा जमा लिया। ठीक दस बजे ट्रेन ने अपनी चिर परिचित भाषा में सीटी बजाई और किसी कीड़े की तरह धीरे धीरे प्लेटफार्म से रेंगने लगी।

देखते ही देखते ट्रेन ने अपनी गति बढ़ा दी और हवा से बातें करने लगी। रास्ते के सभी खेत खलियान, नदी पोखर, गांव शहर, पशु पक्षियों और छोटे बड़े स्टेशनों को पीछे छोड़ते हुए हमारी ट्रेन धड़धड़ाती हुई तेज़ रफ्तार से दौड़ रही थी।

लगातार दो तीन घंटे तक दौड़ते रहने के बाद यानि दोपहर के बारह बज कर चालीस मिनट पर ट्रेन मुरादाबाद रेलवे स्टेशन पर पहुंचकर कुछ देर के लिए खड़ी हो गई, जैसे भागते भागते थक गई हो और सुस्ताने के लिए रुकी हो। मुरादाबाद आते ही पेंट्री कार के अटेंडेंट ने हम सबसे पूछा कि हमें खाने में क्या चाहिए वेज या नॉन वेज? हम सबने उसे अपनी अपनी पसंद बता दी।

दोपहर को क़रीब डेढ़ दो बजे ट्रेन जब लक्सर पहुंची तभी हम सबका खाना आ गया। खाने में दाल, मटर पनीर की सब्जी, रोटी चावल और दही के अलावा अचार भी था। हम सब ने खाना खाया और अपनी अपनी सीट पर पसर गए। रुड़की से सहारनपुर होते हुए हमारी ट्रेन लगभग शाम को चार बजे अंबाला छावनी पहुंची। अंबाला छावनी में हम सबने शाम की चाय के साथ हल्के नाश्ते का स्वाद चखा।

हमारी ट्रेन फिर हवा से बातें करने लगी। शाम के ठीक छह बजकर चालीस मिनट पर लुधियाना आया, आठ बजे पठानकोट जंक्शन, नौ बजे पठानकोट और फिर रात को करीब ग्यारह बजे हमारी ट्रेन ने जम्मू रेलवे स्टेशन पर पहुंचकर अपना सफर समाप्त कर दिया। हम सबने बड़ी सावधानी से अपना अपना सामान उतारा और ओवर ब्रिज के रास्ते से प्लेटफार्म के बाहर आ गए। बरेली की अपेक्षा जम्मू में हमें सर्दी कुछ ज्यादा ही महसूस हुई।

रात को जम्मू में रुकने का हमारा कोई इरादा नहीं था, हमें रात को ही बनिहाल निकलना था, लेकिन जम्मू पहुंचने के बाद पता चला कि रास्ते में पहाड़ खिसक जाने की वजह से आगे बनिहाल जाने का रास्ता बंद है, न कोई आगे जा सकता और न कोई वहां से जम्मू आ सकता।

क्या करें, क्या न करें इसी सोच विचार में काफी समय गुजर गया। सर्दी की तेज हवाएं हमारे शरीर में कंपकपी पैदा कर रही थीं। हमारे सामने अब रात गुजारने का संकट गहरा रहा था। हम सब यही सोच रहे थे कि सर्दी की वह भयानक रात कहां और कैसे गुजारी जाए?

लेकिन हमें ज्यादा सोचना नहीं पड़ा।

रेलवे स्टेशन के पास ही वैष्णवी डोर मैट्री है। जो किसी होटल से कम नहीं है। उसी में हम सबने रात गुजारने का निर्णय लिया। हम सबका रजिस्ट्रेशन हुआ और हमें आसानी से बिस्तर मिल गए। हम सब पूरी रात पैर फैलाकर सोए।

बाइस फरवरी को हमें जम्मू के सड़क मार्ग से बनिहाल रेलवे स्टेशन पहुंचना था, वहां से श्रीनगर के लिए ट्रेन लेनी थी। श्रीनगर रेलवे स्टेशन से टैक्सी से डल झील जाना था। डल झील के पास ही हमारा होटल बुक था।

सुबह छह बजे तक हम सब, नहा धोकर तैयार हो गए, लिफ्ट की सहायता से अपना अपना सामान लेकर नीचे आए। ग्राउंड फ्लोर पर ही डोर मैट्री की कैंटीन है, उसी में हम सबने मन मुताबिक नाश्ता किया और सुहावने मौसम का मज़ा लेते हुए, मॉर्निंग वॉक करके जम्मू रेलवे स्टेशन से क़रीब तीन किलोमीटर का पैदल सफर करके हमने लोकल बस स्टैंड पहुंचने का मन बनाया, क्योंकि मौसम बहुत अच्छा था, ठंडी ठंडी हवा तन मन को सहला रही थी। धूप का नामोनिशान नहीं था।

लोकल बस स्टैंड से हमें बनिहाल के लिए बस लेनी थी। हम सभी बहुत खुश थे, कश्मीर पहुंचने का उत्साह हमें रोमांचित कर रहा था। करीब एक घंटे पैदल चलने के बाद हम सब बस स्टैंड पहुंच गए। बस स्टैंड पर पहुंचकर एक बार फिर हमारा उत्साह ठंडा पड़ गया, सब उदास हो गए। फूल की तरह खिले हमारे चेहरे यह जानकर कि आगे का रोड अभी भी बंद है, हम आज आगे नहीं जा सकेंगे, मुरझा गए। समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें, क्या न करें?

एक दो घंटों की मेहनत मशक्कत के बाद एक प्राइवेट बस ने हमें राम वन तक ले जाने की जिम्मेदारी ले ली। बस वाले ने हमें यह भी यकीन दिलाया कि राम वन से बनिहाल तक के लिए हमें कोई न कोई लोकल सवारी ज़रूर मिल जाएगी। यह सोचकर कि हमारा एक दिन खराब न हो, हम सबके मुरझाए हुए चेहरे एक बार फिर खिल उठे। हम सब बस में सवार होकर राम वन के लिए रवाना हो गए।

जैसे जैसे हम कश्मीर की तरफ बढ़ रहे थे, वैसे वैसे हमारा जोश और उत्साह भी बढ़ रहा था। टेढ़े मेढे, ऊंचे नीचे, घुमावदार पहाड़ी रास्तों से गुजरते हुए लगभग चार पांच घंटों का रोमांचक सफर तय करके हम लोग राम वन पहुंच गए। लेकिन रामवन पहुंचने के बाद पता चला कि वहां तो कल से अभी तक कई किलो मीटर का लम्बा जाम लगा हुआ है, जिसमें सैकड़ों छोटी बड़ी गाड़ियां फंसी हुई हैं। जबकि कल रात से रास्ता साफ करने का काम युद्ध स्तर पर चल रहा है, फिर भी रास्ता साफ़ नहीं हो पा रहा था। उम्मीद थी शाम चार पांच बजे तक रास्ता खुल जाएगा और हम बनिहाल रेलवे स्टेशन तक पहुंच जाएंगे। जाम में फंसे सैकड़ों लोग भूखे प्यासे इधर उधर भटक रहे थे। हम भी दिनभर रास्ता खुलने की उम्मीद में वहां बैठे रहे। हमारे किसी भी साथी ने कुछ खाया भी नहीं था, सब सुबह से भूखे थे।

शाम को छह बजे खबर मिली कि रास्ता साफ हो चुका है और धीरे धीरे करके गाडियां निकाली जा रही हैं। इतना सुनते ही हम सबकी भूख प्यास और दिनभर की थकान गायव हो गई। शाम के क़रीब

साढ़े छह बजे हमारी बस वाले ने भी अपनी गाड़ी आगे बढ़ाई तो फिर सबके उतरे हुए और थके हुए चेहरों की रौनक बढ़ी।

राम वन से बनिहाल तक की दूरी लगभग नब्बे किलोमीटर थी, वह भी ऊंची ऊंची दुर्गम पहाड़ियों के बीच से होकर गुजरने वाली सड़क थी, उस दूरी को तय करने में करीब पांच से सात घंटों का सफर था।

रामबन से निकलते ही रात का सन्नाटा हमें डराने लगा, क्योंकि पहाड़ों का सफर रात को बड़े चैलेंज से भरा होता है। फिर भी हम सब ऊंघते हुए, हिचकोले खाते हुए अपने अपने ईष्ट देवों को स्मरण करते हुए रात के करीब बारह एक बजे बनिहाल के रेलवे स्टेशन पहुंच गए।

भूख के मारे सबका बुरा हाल था। बस से उतरते ही सबसे पहले हमने खाना तलाशा। रेलवे स्टेशन के पास ही दो छोटे छोटे खाने के होटल मिल गए। हम सबने वहां राजमा चावल खाकर अपनी भूख

मिटाई। खाना खाने के बाद, चिंता सताई रात बिताने की। क्योंकि वहां से हमारी ट्रेन सुबह सात बजे थी। बनियाल बहुत छोटा सा पहाड़ी रेलवे स्टेशन है, वहां रात को कोई ट्रेन भी नहीं चलती है। इसलिए स्टेशन पर पूरी तरह सन्नाटा छाया रहता है।

ऊंचे ऊंचे पहाड़ों की गहरी गुफाओं में दुबका हुआ बनिहाल का छोटा सा रेलवे स्टेशन एकदम खाली पड़ा था। चारों तरफ गहन सन्नाटा पसरा हुआ था। रेलवे स्टेशन के आस पास के सभी होटल और रिजॉर्ट्स पहले से फुल थे, एक भी होटल या रिजॉर्ट्स खाली नहीं था। स्टेशन पर वही गाड़ी खड़ी थी, जिसे सुबह को बनिहाल से कश्मीर जाना था। लिहाजा हम सबने उसी में रात बिताने का मन बना लिया और गाड़ी में सवार हो गए। लेकिन ठंड के मारे किसी को नींद नहीं आ रही थी। स्टेशन का पानी भी बर्फ की तरह जमा हुआ था। टंकी खोलते ही हाथ सिकुड़ रहे थे। उस स्टेशन पर चार पांच घंटे हम सबने कैसे गुजारे, कभी भूल नहीं पाएंगे।

सुबह सात बजे बनिहाल से श्रीनगर को ट्रेन जाने वाली थी। साढ़े छह बजे टिकट खिड़की खुल गई। हम सबने टिकट लिए और ट्रेन में आकर बैठ गए। ट्रेन अपने निर्धारित समय से चली। ट्रेन के चलते ही रात भर की थकान दूर होने लगी। सामने जो दृश्य ट्रेन में से दिखाई दे रहे थे, वह वहिंगम थे। ऐसा लग रहा था जैसे हम सब सपना देख रहे हों। दोनों तरफ सफेद बर्फ से ढकी हुई ऊंची ऊंची पर्वत श्रृंखलाए बरबस ही सबका ध्यान अपनी तरफ आकर्षित कर रही थीं।

बनिहाल रेल मार्ग से श्रीनगर रेलवे स्टेशन की दूरी लगभग छियानवे किलोमीटर की है, जिसे हमने करीब तीन से चार घंटों में पूरा कर लिया।

सुबह के करीब दस बजे हम सब श्रीनगर रेलवे स्टेशन पर थे और आंखें फाड़ फाड़कर चारों तरफ के खूबसूरत नजारों को देखकर भावविभोर हो रहे थे और उन नजारों को अपने अपने कैमरों में कैद कर रहे थे। फिर हम सबने दो तीन ग्रुप फ़ोटो लिए और प्लेटफार्म से बाहर जाने वाले रास्ते से बाहर की तरफ चल दिए।

श्रीनगर का रेलवे स्टेशन बहुत बड़ा नहीं है। लेकिन उसने हम सबको प्रभावित बहुत किया। स्टेशन की पूरी बिल्डिंग लकड़ी से बनी है। जिस पर खूबसूरत नक्काशी थी। आर्मी का दबदबा पूरे स्टेशन पर देखने को मिला। स्टेशन पर तैनात आर्मी के सिपाहियों और स्टेशन के आस पास मार्च फास्ट करतीं आर्मी जवानों की टुकड़ियों को देखकर ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे हम श्रीनगर रेलवे स्टेशन पर नहीं किसी आर्मी हेड क्वार्टर में आ गए हों।

स्टेशन के बाहर हमारी टैक्सी पहले से हमारा इंतजार कर रही थी। हमारे टैक्सी ड्राइवर बिलाल बहुत ही इंट्रस्टिंग पर्सन थे। उम्र तो उनकी खूब थी फिर भी बहुत चुस्त दुरुस्त, फुर्तीले और तेज तर्रार थे। हम लोगों के टैक्सी में बैठते ही उनका बोलना शुरू हो गया। जब तक हम उनके साथ टेक्सी में रहे तब तक वह चुप नहीं बैठे। हमें, हमारे गंतव्य तक पहुंचते पहुंचते उन्होंने पूरी कश्मीर के बारे में हमें सबकुछ विस्तार से बता दिया।

हम जिस होटल में ठहरे थे, वह डल झील की उत्तर दिशा में स्थित है। जिसकी खिड़की से बाहर का व्यू हमें अपनी ओर आकर्षित करता था। झील में तैरते सैंकड़ों रंग बिरंगे शिकारे, हाउस बोट और स्टीमर ऐसे दिखाई दे रहे थे, जैसे सैंकड़ों रंग बिरंगे पक्षी झुंड बनाकर पानी पर तैर रहे हों, पानी के संग हठखेलियां कर रहे हों, या रेस लगा रहे हों।

ऊंची ऊंची पर्वत श्रृंखलाओ की गोद में बह रही बावन किलो मीटर लंबे क्षेत्रफल में फैली डल झील देश और दुनिया के कोने कोने से आए सैलानियों का हंसकर स्वागत करती है। कश्मीर के आस पास की झीलों को अपने आपसे जोड़ती हुई यह डल झील अपने यौवन और नैसर्गिक सौंदर्य पर इतराती और इठलाती हुई महसूस होती है।

डल झील के किनारे सुबह सूर्योदय के समय का दृश्य मनमोहक होता है। कुदरत के उस नज़ारे को देखने के लिए दुनिया भर से आए सैलानियों का डल झील किनारे तांता लग जाता है। झील के पानी पर तैरती उगते हुए सूर्य की लालिमा बरबस ही सबका मन मोह लेती है।

बहुत से सैलानी सुबह सवेरे शिकारे की सैर पर निकल पड़ते हैं और सारा दिन झील के पानी पर तैरते शिकारे में हिचकोले खाते हुए कश्मीर की सुरमय वादियों का मज़ा लेते हुए, झील के बीचोबीच बने मिनी बाज़ार की दुकानों से सामान खरीदकर और वहीं बने रेस्टोरेंट में कश्मीरी खाने का लुत्फ उठाते हुए सूर्यास्त के समय तक वापस आते हैं। डल झील में सूर्यास्त का नज़ारा तो और भी दर्शनीय होता है।

डल झील के चारों मुहानों पर लगे वाटर फॉल का भी अपना अलग

आकर्षण है। रात को वाटर फॉल के समय लेजर लाईटों में रंग बिरंगी रोशनी बरबस ही कश्मीर आने वालों का मन मोह लेती हैं। डल झील का आकर्षण दिन में ही ख़त्म नहीं हो जाता है, बहुत से सैलानी आधी रात को चांद की रोशनी में भी शिकारे की सैर पर निकल पड़ते हैं। चांद की रोशनी में झील के पानी पर बनती चांद की तस्वीर बहुत ही लुभावनी होती है।

हमने देखा बहुत सारे सैलानी रात को खाना खाकर होटल से बाहर निकल आते हैं और झील के किनारे किनारे टहलते हैं। ज्यादातर कश्मीर में न्यू कपल आते हैं और कश्मीर की ठंडी ठंडी वादियों का मज़ा लेते हैं।

हम श्रीनगर रेलवे स्टेशन से दोपहर को श्रीनगर (कश्मीर की डल झील) पहुंचे। होटल पहुंचकर पहले हम सब गीजर के गर्म पानी से नहाकर फ्रेश हुए, उसके बाद लंच किया फिर पूरे दो घण्टे रेस्ट

करने के बाद शाम को करीब चार बजे हम डल झील की सैर करने निकले। वैसे भी कश्मीर की शाम जल्दी ढलती है।

डल झील के किनारे कदम रखते ही हाउस बोट और शिकारों के मालिक हमें लुभाने लगे, शिकारा सैर के लिए हमें उकसाने लगे। लेकिन हम सब अपना मन बना चुके थे कि हमें आज शिकारा सैर पर नहीं जाना है। हम सब उस शाम डल झील की खूबसूरती को बस पैदल चलकर ही निहारना चाहते थे।

डल झील के किनारे मेले जेसी चहल पहल थी। हजारों की तादात में सैलानी वहां दिखाई दे रहे थे। किनारे किनारे, थोड़ी थोड़ी दूर पर चाय, कावा, फास्ट फूड और नॉनवेज, मूंगफली, चना जोरगराम, पानी के बताशे, फ्रूट चाट आदि की दुकानों के अलावा रेडीमेड, कपड़ों, घर के सजावटी आइटम्स, जड़ी बूटियों और गेम खिलाने वालों की संख्या भी सैलानियों से कम नहीं थी।

जैसे जैसे शाम ढल रही थी, वैसे वैसे डल झील की रौनक भी बढ़ रही थी। देखते ही देखते वहां लोगों का हुजूम जमा हो गया। झील के किनारे और आस पास के बाज़ार की लाइटें जलने लगीं। लाईटें जलते ही झील की खूबसूरती में कई गुना इजाफा हो गया और वहां का नज़ारा देखने लायक हो गया। ऐसा लग रहा था, जैसे चांद के साथ फलक के सारे सितारे ज़मीन पर उतर आए हों। ऐसी चहल पहल कि वहां से वापस आने का मन ही नहीं हो रहा था। लेकिन वापस तो आना था।

हमें वापस आते आते रात के आठ बज चुके थे। आते ही हम सबने रात का खाना खाया। हमारे खाने में सब वेजिटेरियन था। दाल चावल, रोटी सब्जी, रायता, अचार। खाना इतना स्वादिष्ट था कि पेट भरने के बाद भी किसी का मन नहीं भर रहा था। रात्रि भोजन के बाद हम सब ऊपर अपने अपने कमरों में चले गए। एक कमरे में हम चार चार लोग ठहरे थे। सर्दी भी कड़ाके की पड़ रही थी। रात को ग्यारह बजे तक हम सब हंसी मजाक करते रहे। एक दूसरे को अब तक किए गए सफर की खूबियां और खामियां गिनाते रहे। उसके बाद एक एक करके सबको नींद आ गई।

चौबीस फरवरी की सुबह आठ बजे तक हम सब गीजर के गरम गरम पानी से नहा तैयार हुए और नीचे आकर हम सबने कश्मीर का आलू पराठा और मक्खन से नाश्ता किया। जब तक हमने नाश्ता किया, तब तक हमारी टैक्सी भी आ गई। हम सब टैक्सी में सवार होकर गुलमर्ग के लिए रवाना हो गए।

ऊंची ऊंची पर्वत श्रृंखलाओ के मध्य से सांप की तरह लहराती, बल खाती कोलतार की काली, साफ सुथरी सड़क से गुजरते हुए हम गुलमर्ग की तरफ जा रहे थे। सबके मन जिज्ञासु तो थे ही। गुलमर्ग की जिन हसीन वादियों को हम फिल्मों में या फिर तस्वीरों में देखा करते थे, उन्हें साक्षात देखने का अवसर मिल रहा था। इसलिए हम सबकी खुशी का कोई ठिकाना नहीं था। हम सब बहुत खुश थे, क्योंकि हम पृथ्वी का स्वर्ग कहे जाने वाले कश्मीर में जो थे।

हमारी टैक्सी जैसे जैसे गुलमर्ग की हसीन वादियों को छू रही थी, वैसे वैसे हमारी धड़कने भी तेज़ हो रही थीं। ठंड से ठिठुरती और कांपती चारों तरफ सफेद बर्फ की चादर ओढ़े पहाड़ों की चोटियां हमारा स्वागत करने के लिए बेताब हो रही थीं।

श्रीनगर डल झील से गुलमर्ग सड़क मार्ग से करीब पैंसठ किलोमीटर की दूरी पर है। हमें ऐसा प्रतीत हो रहा था, जैसे चीड़, चिनार और देवदार के ऊंचे ऊंचे गगनचुंबी वृक्ष हमारा कश्मीर आने पर दिल खोलकर स्वागत कर रहे थे।

हम सभी के मोबाइल फ़ोन के कैमरे टैक्सी की खिड़की से बाहर झांकने लगे और वहां के मनोरम दृश्यों को अलग अलग एंगिल से कैद करने लगे। सब मस्त मस्त वीडियो बनाकर अपने अपने स्टेटस पर चिपकाकर अपने परिवार के लोगों, परिचितों और दोस्तों को कश्मीर का नज़ारा दिखाने लगे, कि देखो कश्मीर कितना सुंदर है। कैसे यहां की हरियाली, और बर्फ से ढंकी पहाड़ों की चोटियां यहां आने वालों का मन मोहती हैं। कैसे सबको लुभाती और ललचाती हैं।

करीब दो से ढ़ाई घंटे का बर्फीला सफर तय करके हम मनटंग पहुंचे, जहां से गुलमर्ग का बहिंगम दृश्य दृष्टिपात हो रहा था। मनटंग पहुंचकर हम सबने किराए पर बर्फ में चलने के लिए जूते, जैकेट और कैप लिए। क्योंकि नॉर्मल जूते पहनकर बर्फ पर चलना मुश्किल होता है, बार बार पैर फिसलते हैं, जिससे चोट लगने का डर बना रहता है। जूते, जैकेट और कैप किराए पर लेने के बाद हम सब टैक्सी में सवार होकर गुलमर्ग के लिए रवाना हो गए। अब शुरू हुआ वह सफर, जिसका हम सब बेसब्री से इंतज़ार कर रहे थे। तीन से चार फिट, कहीं कहीं तो पांच से सात फीट सफेद बर्फ वहां के वृक्षों, घरों और होटलों पर बिखरा हुआ था। ज़मीन तो पूरी तरह बर्फीली थी। ऐसा लग रहा था, मानों कश्मीर की सड़कें सीमेंट की नहीं बर्फ की बनी हों।

चारों तरफ बर्फ ही बर्फ दिखाई दे रही थी। घुमावदार रास्तों से होकर जब हमारी टैक्सी ऊपर की तरफ़ बढ़ रही थी, तब मन भावविभोर हो रहा था। गुलमर्ग के रास्ते के उस एक एक पल को, एक एक दृश्य को हम सब अपने अपने कैमरे में क़ैद कर रहे थे। मन मानने को तैयार ही नहीं हो रहा था कि हमारी प्रकृति, हमारी धरा इतनी भी खूबसूरत हो सकती है। लेकिन आंखों को यकीन करना पड़ रहा था क्योंकि उस अदभुत नजारे को हम अपनी आंखों से देख रहे थे, हाथो से छू रहे थे।

अंततः वह घड़ी भी आ गई, जिसके लिए हम सब उतावले और बेकरार थे। हमारी टैक्सी गुलमर्ग की उन हसीन वादियों के बीचों बीच आकर खड़ी हो गई, जिन हसीन वादियों के नज़ारों को करीब से देखने की हसरत हम वर्षों से दिल में पाले हुए थे।

हमारे चारों तरफ़ बर्फ से ढकी ऊंची ऊंची पहाड़ियां थीं। उन अदभुत नज़ारों को देखकर हम सब भावविभोर हो रहे थे। सब कुछ हमें सपने जैसा लग रहा था। हम बार बार बर्फ को अपनी मुट्ठी में भरकर देख रहे थे कि यह सच है या सपना।

हमारे अलावा देश के कोने कोने से आए हजारों सैलानियों की भीड़ वहां के उस बहिंगाम और अद्भुत नज़ारों को आंखें फाड़ फाड़ कर देख रही थी।

टैक्सी से उतरते ही हमारे ईर्द गिर्द दर्जन भर से भी ज्यादा वह लोग इकट्ठे हो गए, जो हमें इस बात के लिए रिझा रहे थे कि गुलमर्ग की बर्फ से ढंकी उन खूबसूरत वादियों को वह हमें कैसे घुमाएंगे। कई सिलेश गाड़ियों वाले, स्कीन स्कूटी वाले, स्केटिंग और स्कीइंग वाले, चाय और कावा पिलाने वाले हमारे आगे पीछे चलने लगे और बताने लगे कि बिना उनकी गाइडेंस के हमारा बर्फ में चलना कितना मुश्किल और खतरनाक होगा, हम बर्फ में फिसल कर चोटिल हो जायेंगे, फिसलने और चोटिल होने के खतरों से बचाते हुए वह हमें बड़ी सावधानी से घुमाएंगे।

हम पहले से जानते थे कि हर टूरिस्ट प्लेसिस पर ऐसा ही होता है। वहां के लोग बाहर से आने वाले लोगों को डराते हैं, ताकि वह उनके साथ जाएं और उनको उनकी मजदूरी मिले। इसलिए हम किसी के बहकावे में नहीं आए। उनकी बातों को अनसुना करके सीधे उस रेस्टोरेंट में चले गए, जिस रेस्टोरेंट में हमें लंच करना था।

रेस्टोरेंट में हम सबने आलू के गरम गरम पराठे बनवाए, जिन्हें हमने मक्खन, दही और अचार के साथ खाया, साथ में गरमा गरम चाय भी पी। स्लेज गाड़ियों वाले अभी भी हमारे ईर्द गिर्द मौजूद थे और हमें रिझा रहे थे कि हम उनकी स्लेज से गुलमर्ग की बर्फीली वादियों में घूमें। लेकिन हम किसी की तरफ ध्यान न देकर आलू के पराठों का स्वाद लेते रहे, वह भी हंसी मज़ाक और मौज मस्ती के साथ। नाश्ता करने के बाद हम धीरे धीरे, बड़ी सावधानी के साथ बर्फ की सड़क पर चलने लगे। गुलमर्ग की सात आठ वादियों में हज़ारों की संख्या में सैलानी भ्रमण कर रहे थे और वहां के खूबसूरत नज़ारों को अपने कैमरों में कैद कर रहे थे। दूर दूर तक फैलीं गुलमर्ग की नैसर्गिक वादियां बरबस ही सबका मन मोह रही थीं।

फ़ोटो लवर, फ़ोटो क्लिक कर रहे थे, वीडियो लवर वीडियो बना

रहे थे, कोई बर्फ में कूद रहा था, तो कोई बर्फ के गोले बनाकर एक दूसरे पर फेक रहा था। हम सब भी अपने अपने मोबाइल कैमरों में उन खूबसूरत दृश्यों को कैद करते हुए आगे बढ़ने लगे।

पन्द्रह से बीस, कहीं कहीं इससे भी और अधिक फीट ऊंची बर्फ की घाटियों और चोटियों को छूने के लिए उन पर बमुश्किल चढ़कर आनंदित हो रहे थे। हालांकि इतनी ऊंची ऊंची बर्फ़ की पहाड़ियों पर चढ़ पाना सबके लिए मुश्किल हो रहा था। एक तो ठंडी ठंडी हवाएं चल रही थीं ऊपर से रिमझिम रिमझिम बारिश भी हो रही थी। ठंड के मारे सबका बुरा हाल था, फिर भी किसी का उत्साह और जोश कम नहीं हो रहा था। सब पीछे हटने की बजाय आगे ही बढ़ रहे थे। गुलमर्ग की स्नो वैली अपने दामन में जिस प्राकृतिक सौंदर्य को समेटे हुए थी, उसे देखकर न तो सफर की थकान महसूस हो रही थी, और न ही कोई डर था। वहां के खूबसूरत नज़ारों को देखकर इंसान खुद व खुद सब भूल जाता है। सच कहूं तो गुलमर्ग किसी जन्नत से कम नहीं है। चारों तरफ ऊंचे ऊंचे आसमान को छूते देवदार, चीड़ और चिनार के हरे हरे वृक्षों से लिपटी बर्फ़ की सफेद मीनारें अनोखा दृश्य बना रही थीं। उन नज़ारों को देखकर हिंदी फिल्मों की याद आ रही थी।

गुलमर्ग की उन्हीं हसीन वादियों में बने प्राचीन मंदिर और चर्च का भी अपना अलग महत्व है। जो गुलमर्ग घूमने आता है, वही, वहां के चर्च और मंदिर को भी देखना नहीं भूलता है। दोनों की अपनी अपनी मान्यता है। दोनों उतने ही पुराने हैं, जितना पुराना कश्मीर है। करीब चार से पांच घंटे हमने गुलमर्ग की हसीन वादियों के आगोश में बिताए। प्रकृति से बातचीत की, उसे छूकर देखा, अपनी बाहों में समेटा और एक बार फिर आने का वायदा करके हमने गुलमर्ग से विदा ली।

गुलमर्ग की यादों, ख्वाबो और खयालों में खोए हुए हम शाम को साढ़े सात बजे डल झील के किनारे अपने होटल में वापस आ गए। होटल आकर सबसे पहले हमने एक एक कप गरम गरम चाय पी। अपने कपड़े चेंज किए और गुलमर्ग के दिनभर के अनुभव आपस में साझा करने के बाद रात को क़रीब नौ बजे रात्रि भोजन के लिए हम सब नीचे होटल में आ गए।

होटल वाला हमारा ही इंतज़ार कर रहा था इसलिए हमें खाने का ज्यादा इंतजार नहीं करना पड़ा। लगभग पंद्रह मिनट के अंदर हम सबके सामने भोजन थाल सज चुके थे। सबने भर पेट भोजन किया। भोजन करने के बाद हम सब कतार बनाकर काफी देर तक डल झील के किनारे किनारे टहलते रहे।

ऊंचे ऊंचे पहाड़ों की तलहटी पर बसे लोगों के घरों और होटलों में जुगनुओं की तरह जगमगाते दूधिया सफेद बल्बों की रौशनी डल झील के थरथराते पानी पर बहुत सुंदर दृश्य बना रही थी। ऐसा लग रहा था जैसे पानी के अंदर भी सैकड़ों बल्ब टिमटिमा रहे हों।

घूमते घूमते जब सबको थकान महसूस होने लगी, तब सब ऊपर होटल में आ गए। और अगली सुबह की तैयारी करके सब अपनी अपनी रजाइयों और कंबलों में दुबक गए। सर्दी की ठिठुरन पूरे शरीर को ऐसे हिला रही थी, जैसे कोई इंसान किसी के शरीर को पकड़कर हिला रहा हो।

पच्चीस फरवरी की सुबह करीब आठ बजे तक हम सब नहाकर धोकर पूरी तरह तैयार होकर होटल से नीचे उतरे। नीचे उतरकर हम सबने रेस्टोरेंट में हेल्दी नाश्ता किया। नाश्ता करते समय ही टैक्सी ड्राइवर का फ़ोन आ गया कि वह पांच मिनट के अंदर हमारे होटल के पास पहुंच रहा है। नाश्ता करके हम सब रेस्टोरेंट से बाहर निकलकर उसका इंतज़ार करने लगे।

टैक्सी आते ही हम सब पहलगांव जाने के लिए उसमें सवार हो गए। कुछ ही समय में हमारी टैक्सी पहलगांव की ओर जाने वाली सड़क पर दौड़ने लगी। श्रीनगर डल झील पीछे छूटता जा रहा था और पहलगांव करीब आता जा रहा था।

कश्मीर की सफेद बर्फ ओढ़े ऊंची ऊंची वादियां हमारे साथ साथ चल रही थीं। वादियों की बर्फीली चोटियों पर सूर्य की तेज़ किरणें पड़ रही थीं और वह चांदी की तरह चमक रही थीं। हमारे साथ के सभी लोग टैक्सी के अंदर से ही वहां के अदभुत नजारों को अपने अपने कैमरों में कैद कर रहे थे। साथ ही सब म्यूजिक का मज़ा भी ले रहे थे। नाच रहे थे, गा रहे थे और सफर का भरपूर लुत्फ उठा रहे थे।

घुमावदार पहाड़ी रास्तों पर दौड़ती हुई हमारी टैक्सी, पुलवामा आर्मी हेडक्वार्टर के सामने खड़ी हो गई, जहां से हमने आर्मी के जवानों की गश्त देखी। गश्ति काफिला गुजर जाने के बाद, हम एप्पल वैली पहुंचे। कई किलोमीटर के क्षेत्रफल में फैली एप्पल वैली का अपना एक अलग नज़ारा था। हमनें अपनी टैक्सी एप्पल वैली के बीचोबीच बने एक भव्य रेस्टोरेंट में रोकी। वहां पर हमनें हल्का फुल्का नाश्ता किया। उसके बाद आसपास एप्पल जूस की दूकानों और एजेंसियों

का जायजा लिया। वहां हमनें कई किस्म के सेब देखे और उनका स्वाद भी चखा, जूस भी पिया।

कश्मीर का गोल्डन सेब सबको बहुत पसन्द आया। हम सबने गोल्डन सेब खरीदे। उसके बाद आगे पहलगांव के सफर पर चल दिए। श्रीनगर से करीब सौ किलोमीटर का सफ़र पूरा करते हुए पहलगांव के टैक्सी स्टैंड का रास्ता पकड़ लिया। पहाड़ों की गोद में, बहुत बड़े मैदान में पहलगांव का टैक्सी स्टैंड बना हुआ था, जिसमें कई सौ टैक्सियां पहले से खड़ी थीं, जिससे यह अनुमान लगाया जा सकता था कि हजारों की संख्या में सैलानी वहां घूमने के लिए आए हुए हैं।

टैक्सी से बाहर निकलते ही हमारा सामना वहां के नैसर्गिक और प्राकृतिक सौंदर्य से हुआ। जिन्होंने हम सब का मन मोह लिया। हज़ारों फिट ऊंचे पहाड़ों की चोटियां हमारा स्वागत करने के लिए तत्पर दिखीं।

पहलगांव में घूमने के लिए बीस से पच्चीस किलोमीटर के क्षेत्रफल में पांच वैलियां हैं। उन वैलियों को घूमने के लिए के लिए करीब दस हज़ार फिट ऊंचे पर पहुंचना होता है। सभी वैलियों के रास्ते बहुत ज्यादा सकरे और ऊबड़ खाबड़ होने की वजह से वहां तक पहुंचने के लिए दो ही साधन हैं। पहला खच्चर से और दूसरा पैदल यात्रा करके।

पैदल यात्रियों के लिए रास्ता बहुत ही जोखिम भरा था, क्योंकि रास्तों में गहरी गहरी खाईयां, नालियां, छोटे बड़े झरने बहते हुए मिलते हैं, यह सभी नाले और झरने हमेशा बर्फ से ढके रहते हैं, जिनमें धसने और फंसने का हमेशा डर बना रहता है।

खच्चरों की वज़ह से रास्तों में बदबूदार कीचड़ भी बहुत होता है, जिससे हर समय फिसलने का भय बना रहता है। इसीलिए नब्बे प्रतिशत लोग खच्चरों के माध्यम से ही पहलगांव की खूबसूरत वादियों का नज़ारा देखने जाते हैं।

पैदल यात्रा जितनी रोमांचक और उत्साहजनक थी उतनी ही जोखिमभरी भी थी, क्योंकि अधिकांश लोगों को बर्फ में फिसलते हुए देखकर रूह कांप रही थी। फिर भी घुमावदार, कच्चे, पथरीले और बर्फीले पहाड़ी रास्तों से गुजरते हुए मज़ा आ रहा था। बर्फ में फिसलकर गिरना और गिरकर उठना फिर आगे बढ़ना, उसका भी अपना अलग ही मजा था।

रास्ते में एक से बढ़कर एक खूबसूरत नज़ारे जो हम पैदल चलने वाले देख रहे थे, उन मस्त नजारों को खच्चर पर बैठे लोग नहीं देख पा रहे थे।

रास्ते भर हमें पहाड़ों के अदभुत नज़ारे देखने को मिले, कल कल बहते झरनों की आवाजें, मधुर संगीत की तरह सुनाई दे रही थीं। ऊंचे ऊंचे देवदार, चीड़ चिनार के पेड़ों के बीच बिछी पांच छः फिट ऊंची बर्फ़ की सफेद सड़क हमारे कैमरों को खूब ललचा रही थी। इसलिये हम जगह जगह रुककर उन खूबसूरत नज़ारों को वीडियो के रुप में अपने कैमरों में कैद कर रहे थे, तस्वीरें उतार रहे थे और वीडियो कॉल करके अपने मित्रों और परिचितों को ललचा रहे थे।

हंसते गाते, चीखते चिल्लाते, शोर मचाते, बर्फ़ के साथ खेलते और मस्ती करते हुए हमे क़रीब इक्कीस किलोमीटर की ऊंचाई पर स्थित बराज वैली तक पहुंचने में दो से तीन घंटों का समय लगा। बराज वैली जिसे पहलगांव का मिनी स्वीटजर लैंड भी कहते हैं, पहुंचे तो वहां का अनुपम सौंदर्य देखकर मन खुशी से फूला नहीं समा रहा था। करीब दो सौ एकड़ में फैली यह वैली पूरी तरह बर्फ़ से ढकी हुई थी। वहां पर स्कीनीइंग और ट्रैकिंग का भी मज़ा उठाया जा रहा था। उस वैली की खूबसूरत वादियों को देखने के लिए वहां हजारों की संख्या में सैलानी मौजूद थे, जबकि वहां का मौसम बहुत ही ठंडा था, बारिश भी हो रही थी।

वैली में एंट्री करने के लिए तीस रुपए प्रति व्यक्ति टिकट था, जिसे खरीदने के बाद ही अंदर प्रवेश किया जा सकता था। हम सब टिकट लेकर अंदर पहुंचे।

हज़ारों फिट की ऊंचाई पर स्थित वैली में मेले जैसा महौल था। वहां हर तरह की चाय, कॉफी, कावा, कोल्ड ड्रिंक, फास्ट फूड, गरम गरम समोसे, गरम गरम पकौड़ियां, मैगी, चिप्स, कुरकुरे, नमकीन के अलावा और भी खाने की बहुत सारी चीज़ें आसानी से मिल रही थीं, बस उनके दाम जरूर आसमान छू रहे थे।

चाय कॉफी के स्टालों पर भीड़ बहुत थी। अपना नंबर आने के लिए लोगों को काफी इन्तजार करना पड़ रहा था। फोटो लवर, फ़ोटो क्लिक कर रहे थे, वीडियो बनाने वाले वीडियो बना रहे थे।

वहां से कुछ ही किलोमीटर की दूरी पर बेताब वैली थी, जिसकी सुंदरता को देशभर में सराहा जाता है। बेताब वैली के प्राकृतिक

सौंदर्य को हिंदी की कई फिल्मों में दिखाया गया है, जिसमें फ़िल्म बेताव और बजरंगी भाई काफी चर्चित फिल्मों में से हैं। कहा तो यह भी जाता है कि बेताब वैली का नाम, फ़िल्म बेताब की शूटिंग के बाद ही बेताब वैली पड़ा।

पहल गांव की बैराज वैली और बेताब वैली में हमने चार पांच घंटों तक खूब मस्ती की। मसाला मैगी खाई, चाय पी उसके बाद गिरते पड़ते, उठते उठाते हुए हम सब नीचे उतर आए। हमारी टैक्सी का ड्राइवर हमारा बेसब्री से इन्तजार कर रहा था। हम सबको देखकर उसके चेहरे पे चमक आ गई। हम सब जल्दी जल्दी टैक्सी में सवार हुए और उसने टैक्सी श्रीनगर की तरफ़ दौड़ा दी। लगभग तीन घंटे के अंदर हम सब डल झील यानि अपने ठिकाने पर आ गए।

हम सब ने होटल आकर अपनी अपनी ड्रेसेज चेंज की। कावा पिया, जिससे शरीर की सर्दी दूर हो गई। जो शरीर कुछ देर पहले सर्दी से थरथरा रहा था, कावा पीते ही नॉर्मल हो गया। एक घंटे रेस्ट करने के बाद हम सब रात्रि भोजन के लिए नीचे रेस्टोरेंट में आ गए। उस दिन हमारे खाने में कड़ी चावल और मिक्स वेज के साथ करारी करारी रोटियां थीं। हम सबने उस स्वादिष्ट भोजन को चाव से खाया। हमारे बाद खाने का नंबर एक दूसरे टूरिस्ट ग्रुप था इसलिए हम सब खाना खाकर रेस्टोरेंट से बाहर आ गए ताकि वह लोग भी समय से खाना खा सकें।

खाना खाने के बाद हम सब डल झील के किनारे किनारे घूमते घामते, बातचीत करते और हंसते हंसाते हुए लगभग एक से दो किलोमीटर दूर निकल गए। फिर वहीं खड़े होकर कुछ देर डल झील की खूबसूरती को निहारते रहे। रात में भी डल झील का सौंदर्य समाप्त नहीं होता है, बल्कि वह अपने पूरे शबाब पर होती है। हवा के साथ झील में उठने वाली लहरें बिजली के बल्बों की रोशनी में झिलमिलाती नज़र आ रही थीं, जिन्हें देखना अच्छा लग रहा था। कुछ देर वहां ठहरने के बाद हम वापस अपने होटल आ गए। होटल आकर अपने अपने घरों पर फ़ोन करके सबने बताया कि आज हम कहां घूमने गए और वहां क्या क्या किया। क्या खाया, क्या पिया। उसके बाद दूसरे दिन यानि 26 फरवरी का प्रोग्राम सैट करने के साथ साथ अपनी अपनी ड्रेसेज भी तैयार करके लगभग रात के ग्यारह बजे सब सो गए।

छब्बीस फरवरी की सुबह सात बजे तक हम सब नहाकर पूरी तरह जाने के लिए तैयार हो गए। उसके बाद सब नीचे रेस्टोरेंट में आ गए। रेस्टोरेंट वाले ने जल्दी जल्दी हम सबको करारे करारे आलू के पराठे, दही और अचार के साथ खाने को दिए, साथ में गरम गरम चाय ने पराठों का स्वाद और बढ़ा दिया। कश्मीर का पराठा इतना हैवी होता है कि बहुत से लोग एक पराठा भी पूरा नहीं खा पाते हैं। हम लोग नाश्ता कर ही रहे थे, तब तक हमारी टैक्सी आ गई। टैक्सी ड्राइवर बिलाल को मालूम था कि हम आज सोनमर्ग जाने वाले हैं। ठीक सुबह के आठ बजे हम सब टैक्सी में सवार हो गए। इतनी जल्दी इसलिए क्योंकि हमारा मानना था कि जितनी जल्दी निकलेंगे उतना ही देर तक यानि ज्यादा से ज्यादा समय तक घूम लेंगे। वरना जल्दबाजी में बहुत सारी अच्छी जगह घूमने से रह जाती हैं और फिर बाद में अफसोस होता है।

मौसम विभाग की चेतावनी के मुताबिक पूरे दिन बारिश का माहौल बना रहा, जिसकी वजह से कश्मीर की सर्दी और अधिक बढ़ गई। लेकिन सोनमर्ग घूमने की चाह में शरीर को सर्दी का कुछ भी अहसास नहीं हो रहा था।

डल झील से सोनमर्ग की दूरी लगभग एक सौ दो किलोमीटर की है। जिसे तय करने में मजा आ रहा था। वही साफ सुथरे, घुमावदार ऊंचे नीचे पहाड़ी रास्ते और उनके चारों तरफ फैली ऊंची ऊंची बर्फ़ से ढकी पहाड़ों की चोटियां बरबस ही हम सबका मन मोह रही थीं।

जैसे जैसे हम सोनमर्ग की तरफ़ बढ रहे थे, वैसे वैसे हमारा उत्साह भी बढ़ रहा था। सोनमर्ग से करीब बीस किलोमीटर पहले ही बर्फ के गहरे रास्ते और गलियां देखकर मन में थोड़ा भय उत्पन्न हुआ। डर लग रहा था कि कहीं बर्फ के गगनचुंबी टीले गिरकर हमें दबा न दें? हमारी टैक्सी बर्फ की पतली गुफाओं सरीखी सकरी गलियों से गुजरने लगी। सड़क के दोनों तरफ़ क़रीब पचास पचास फिट ऊंची बर्फ़ की दीवारें खड़ी थीं। लगातार भयंकर बर्फबारी होने की वजह से आस पास के सभी घर और होटल बर्फ से पूरी तरह ढक गए थे। बस उनके होने का अहसास हो पा रहा था।

नीचे हजारों फिट गहरी खाईयां और ऊपर बर्फ की सकरी सड़क पर रेंगती हमारी टैक्सी बार बार फिसल रही थी तो डरके मारे सबकी आवाजें बंद हो गईं। टैक्सी में एकदम सन्नाटा पसर गया। मन ही मन सब अपने अपने ईष्ट देवों को याद कर रहे थे।

सोनमर्ग के मुहाने तक पहुंचते पहुंचते बर्फ काफी बढ़ चुकी थी और सोनमर्ग जाने वाली गाड़ियां फिसलने लगी थीं इसलिए सभी गाड़ियों को जहां के तहां रोक दिया गया। किसी भी गाड़ी को आगे

जाने नहीं दिया गया। कुछ ही देर में वहां गाड़ियों की एक लंबी कतार लग गई।

सभी सैलानी अपनी अपनी गाड़ियों से उतरकर धीरे धीरे पैदल ही सोनमर्ग की बर्फीली वैलियों की तरफ़ बढ़ने लगे। हम सब भी उनके पीछे पीछे चल दिए। वहां तो पैदल चलना भी मुश्किल हो रहा था। ज़रा सा पैर इधर उधर होते ही फिसलकर धड़ाम धड़ाम गिर रहे थे। जरा सी भी लापरवाही हमारे लिए कष्टदायक हो सकती थी। इसलिए हम सब बड़ी सावधानी से चलते हुए जूते वालों की दूकान तक पहुंच गए। वहां से हम सबने बर्फ में चलने के लिए गम बूट किराए पर लेकर पहने, तब कहीं आराम से चल पाए।

जूते पहनने के बाद जब बर्फ में फिसलकर गिरने का भय समाप्त हुआ, तब सबने गरम गरम भुट्टे खाए और सोनमर्ग की बर्फ से ढकी ऊंची ऊंची वैलियों में घूमने का मज़ा आने लगा। सोनमर्ग की वैली काफी बड़े क्षेत्रफल में फैली है, जिसकी ऊंचाई समुद्र तल से लगभग डेढ़ हज़ार फिट ऊंची हैं और सीधी दीवार की तरह अडिग खड़ी हैं।

सोनमर्ग का रोमांचकारी दृश्य देख मन भावविभोर हो गया। वहां हजारों की संख्या में देश के कोने कोने से सैलानी आए हुए थे। आने वाले सैलानियों में बच्चे, बूढ़े और आदमी औरतों के अलावा न्यू मैरिड कपल ज्यादा दिखाई दे रहे थे, जो वहां अपना हनीमून मनाने के लिए आए थे।

सोनमर्ग की दिल को दहला देने वाली ऊंची ऊंची वैलियों में स्कूटी, स्कीनिंग और स्लेश राइडिंग का सबके ऊपर खुमार चढ़ा हुआ था। बर्फ की बारिश अपने पूरे शबाब पर थी। लगभग सारे लोग अपने अपने मोबाइल फोन से फोटो क्लिक कर रहे थे। स्थानीय फोटोग्राफर्स की भी भीड़ थी। उनसे भी काफी लोग फोटो खिंचवा रहे थे और वीडियो भी बना रहे थे। काफी लोग कड़ाके की सर्दी में कावा और चाय की चुस्की लगा रहे थे। कुछ कॉफी और मैगी का, तो बहुत सारे लोग उबले हुए गरम गरम अंडों का लुत्फ ले रहे थे। जब सोनमर्ग में बर्फ का तूफ़ान आया, तब हम सबकी हालत देखने लायक थी। सबकी सिट्टी पिट्टी गुम हो गई। किसी को भी कोई नज़र नहीं आ रहा था। बर्फीली तेज हवाओं ने सबके अंदर कंपकपी पैदा कर दी। हम सबके हाथ पैर सुन्न पड़ने लगे। वहां के उस मौसम को देखकर हम सब घबरा गए। वहां तैनात सिक्योरिटी गार्ड सभी सैलानियों को ऊपर से नीचे बुलाने लगे। हम सब जल्दी जल्दी नीचे उतरे।

नीचे आकर हम सबने गरम गरम चाय पी, मैगी खाई तब शारीर में कुछ जान आई। हम सबका शरीर जब कुछ गरम हुआ, तब हमने वैली से बाहर खड़ी अपनी गाड़ी की तरफ़ रुख किया। वैली से क़रीब दो किलोमीटर की दूरी पर खड़ी हमारी टैक्सी तक जाने में हमें काफी दिक्कत हुई और वक्त भी लगा।

रात को क़रीब आठ बजे हम सब श्रीनगर स्थित होटल पर पहुंचे। होटल पहुंच कर हम सबने अपने अपने गीले कपड़ों को, जो सोनमर्ग की बर्फीली बारिश में भीग गए थे, चेंज किए। रात्रि नौ बजे हमने नीचे रेस्टोरेंट में आकर खाना खाया, और वापस होटल पहुंचकर कंबल और रजाई में घुसकर गपशप करने लगे। गपशप करते हुए हम सब कब सो गए, किसी को पता ही नहीं चला।

अगले दिन सत्ताइस फरवरी की सुबह से लेकर शाम को रात्रि भोज तक हम सबने श्रीनगर और डल झील के आसपास का पूरा इलाका घूमा। पहले हम सब लाल चौक गए, फिर निशात बाग, शालीमार बाग, चश्मे शाही, परी महल गुलमोहर पार्क घूमा। उसी रात हम सबने शॉपिंग की। गरम कपड़े खरीदे, मिठाई और ड्राई फ्रूट्स खरीदे।

अगली सुबह यानि अठठाईस फ़रवरी को हमें वापस बरेली आना था इसलिए रात को ही हमने अपना अपना सामान पैक कर लिया ताकि सुबह को परेशानी न हो। उस रात हम सब बहुत देर तक जागते रहे और कश्मीर की खट्टी मीठी यादों को समेटते रहे। सुबह को हम जल्दी उठकर, नहा धोकर पूरी तरह तैयार होकर नीचे रेस्टोरेंट में आ गए। हम सबने वही चिरपरिचित आलू के पराठे बनवाए और गरम गरम चाय से खाए। हमारी टैक्सी आ चुकी थी। इतने दिनों तक हम जिस होटल में रहे उस होटल के मालिक और उसके परिवार से हमारा रिश्ता बहुत गहरा हो गया था। आने से पहले उसने हम सबको कावा पिलवाया। हम सबसे दुबारा कश्मीर आने का वादा लेकर हमें अपने होटल से विदा किया। रेस्टोरेंट वाले भाई से भी हमारी अच्छी पहचान हो गई। उसने और उसके स्टाफ ने भी हमसे दुबारा कश्मीर आने की दावत देकर हमें विदा किया। हम सब जब अपना अपना सामान टैक्सी में रखकर बैठने लगे, तब वहां के सब लोगों के चेहरे ऐसे उतर गए जैसे उनका अपना कोई खास उनसे हमेशा के लिए बिछड़ रहा हो।

हमारी टैक्सी जम्मू के लिए रवाना हो ली। जैसे जैसे हम कश्मीर से दूर हो रहे थे, वैसे वैसे मन बेचैन हो रहा था। ऐसा लग रहा था, जैसे

हम अपना सब कुछ पीछे छोड़ रहे हैं। दस दिनों में कश्मीर पूरी तरह अपना लगने लगा था। आसपास सबसे अच्छी मित्रता हो गई थी। सबके हंसते मुस्कुराते चेहरे बार बार नज़र के सामने आ रहे थे। हमारे टैक्सी ड्राइवर बिलाल और उनकी बातें तो शायद ही हम कभी भूल पाएं। पूरे रास्ते वह हमसे यही पूछते रहे कि हमें कश्मीर कैसा लगा, हमनें कश्मीर को अच्छे से घूमा या नहीं, हमनें क्या क्या खाया, क्या पिया और कश्मीर से अपने घर वालों के लिए क्या क्या खरीदा?

हम सब बिलाल भाई के हर सवाल का जवाब अच्छे से दे रहे थे, जिसे सुनकर बिलाल भाई हंस देते थे। इन बीते दस दिनों में बिलाल भाई हमसे अच्छी तरह घुल मिल गए थे। हम सबके नाम भी उन्हें याद हो गए थे।

लगातार चार पांच घंटों तक टैक्सी चलती रही। वही घुमावदार पहाड़ी रास्ते गुजरते रहे। दोपहर के क़रीब एक बजे बिलाल भाई ने एक ऐसी जगह टैक्सी रोक दी, जहां ड्राई फ्रूट्स और सेब की थोक दुकानें थीं। बिलाल भाई ने हमसे कहा, जिसने भी कश्मीर से ड्राई फ्रूट्स और सेब नहीं खरीदे हैं, वह यहां से खरीद ले। क्योंकि यहां कश्मीर से बहुत सस्ता सामान मिलता है। इतना सुनते ही हम सब ड्राई फ्रूट्स की दुकानों में घुस गए। वाकई अखरोट, बादाम, काजू के अलावा वहां सारे ड्राई फ्रूट्स बिक रहे थे, वह भी बहुत कम कीमत में। हम सबने वहां से अखरोट, बादाम, काजू और किशमिश के अलावा कावा और गरम मसाले खरीदे।

बिलाल भाई ने कहा कि हम लोग लंच भी कर सकते हैं। लेकिन हम लोगों ने लंच न करके बस ऐसे ही हल्का फुल्का नाश्ता कर लिया। क्योंकि सुबह से लगातार टैक्सी में बैठकर सफर करने की वज़ह से सबका मन अजीब सा हो गया था।

एक घंटे का रेस्ट करने के बाद बिलाल भाई ने सबको टैक्सी में बैठने को कहा। हम सब टैक्सी में बैठ गए। बिलाल भाई ने टैक्सी आगे बढ़ा दी। हम सब लगभग थक चुके थे। पहले जैसा जोश और उत्साह किसी में भी बाकी नहीं बचा था। सब चुपचाप बैठे थे और जम्मू पहुंचने का इंतजार कर रहे थे। सबको चुप देखकर बिलाल भाई ने फिर बोलना शुरू कर दिया। वह हम सब के अंदर जैसे ऊर्जा भर रहे थे। वह हमें बोलने के लिए उकसा रहे थे। लेकिन हमारे पास बोलने के लिए कुछ भी नहीं था।

शाम सात बजे हम सब जम्मू पहुंच गए। वैष्णवी डोर मेट्री के सामने आकर बिलाल भाई ने टैक्सी रोक दी। सबने अपना अपना सामान टैक्सी से उतारा। उसके बाद बिलाल भाई का सबने आभार व्यक्त किया। हमसे विदा लेते समय बिलाल भाई की आंखें छलक आईं। उन्हें देखकर हम सब भी भावुक हो गए। वह रात हमने वैष्णवी डोर मेट्री में बिताई, क्योंकि सुबह सात बजे जम्मू से बरेली के लिए हमारी ट्रेन थी। अगली सुबह एक बार फिर वैष्णवी डोर मेट्री में हम सबने सुबह का नाश्ता किया, चाय पी और अपनी ट्रेन में सवार हो गए।

¤¤¤

शौकीन अम्मा की साड़ी

लघु कथा:- अनुपमा तिवाड़ी

पड़ोस की अम्मा बचपन से ही साड़ी पहनने की शौकीन थीं। वे बतातीं कि वे जब छोटी थीं तब मजे – मजे में अपनी माँ की साड़ी लपेट लिया करती थीं और कहती थीं कि अब वे मम्मी बन गई हैं। वे और उनके जैसे बच्चे यूँ घर – घर खेल खेलते थे। जब कभी कोई पूछता कि तुम बड़ी हो कर क्या बनोगी? तो वे कहतीं कि मैं मम्मी बनूँगी। क्योंकि उन्हें लगता कि साड़ी पहनने से वे मम्मी बन जाएंगी। उसके बाद थोड़ी और बड़ी हुईं तब वे तौलिए को अपनी स्कर्ट में टाँक कर साड़ी की तरह पहन लेतीं। जब उनकी माँ आतीं तो जल्दी से स्कर्ट से तौलिया उतारना भी आसान होता।

थोड़ी बड़ी हुईं तो एक बार अपनी ताईजी को एक सुंदर साड़ी पहने देखा। उसके मन में आया कि वह भी इस तरह की साड़ी अपनी शादी में खरीदेंगी। जो भी हो वह आस अधूरी रह गई। जब बेटा हुआ तो मन किया कि वह भी पीला पहनेंगी। उसके बाद घाटचोला की साड़ी देखी, फिर लहरिया लेकिन नहीं ले पाई वे मनपसंद साड़ियाँ। अब अम्मा बूढ़ी हैं। घर में सब साड़ी पहनने को कहते हैं लेकिन अब अम्मा कहती हैं बड़ी आफत लगती है साड़ी पहनने में। अब तो वे घाघरा और चोली पर छोटी – सी ओढ़नी डाले फिरती हैं।

¤¤¤

क्षमा करना पापा

कहानी:- डॉ. रजनीकांत

उसके पिता उससे अक्सर कहते - बेटा! तुम्हारा शरीर बलिष्ठ और मन सुंदर होना चाहिए। तुम्हारे कंधे चौड़े होने चाहियें। तुम्हें अपनी शक्ति में वृद्धि करनी है। जिसका शरीर बलिष्ठ है उससे सभी लोग डरते हैं आज शक्ति का समय है। जिसके हाथ में ताकत है दूसरे उनसे डरते हैं। एक पुत्र उसके बाप की ताकत होता है। ये कंधे मेरी अर्थी उठाने के काम आएंगे। उसे याद है वह छोटा था तब। उसकी समझ में कुछ नहीं आया था तब। पिता उसके शरीर पर तेल मालिश करते। बाजू जांघों पर खूब तेल लगाते। दोनों बाप बेटा जोगिंग करते बहुत दूर निकल जाते। पिता पुत्र में खूब संवाद होता। छोटी से छोटी बात भी वह उससे सांझा करते। अब वह थोड़ा समझदार भी हो गया था। उसे अपने अच्छे बुरे का पता भी लगने लगा था। वह अपने पिता से हर बात कर लेता। जरा भी न छुपाता। पढ़ने में वह तेज था। रतन के पिता स्कूल में अध्यापक थे। हर काम अपने हाथों से करते। बेटे को काम का महत्व समझाते। अपने हाथ से खुद काम करने से आदमी पारंगत हो जाता है।

रतन के पिता ने बचपन में खूब ठोकरें खाई थीं। माँ छोटे होते ही चल बसी। चाचा चाचियों ने पाला। सरीक तो सरीक होते हैं। उनसे सौतेला व्यवहार होता। वह चुपचाप वक्त काटते रहे। पिता लाहौर में मुंशी थे एक वकील के पास। बड़ी बहिन ने पूरा ख्याल रखा। अपनी मेहनत के बूते वह स्कूल में अध्यापक नियुक्त हुए। तब शिक्षा की बहुत इज्जत थी। उन्हें कोई व्यसन न था। वह रतन को समझाते - देखो बेटा! यह हमारा व्यवहार ही है जो हमें समाज में अच्छा दर्जा दिलाता है। इसी समाज में चोर डाकू हैं तो इसी समाज में भद्र पुरुष भी हैं। अच्छाई करो अच्छा ही मिलेगा। नेकियाँ बांटते चलो। ईमानदारी फूलती जरूर है। सभी बातें रतन ने गाँठ बाँध ली। रतन के पिता अक्सर कहते - बेटा! जो इस संसार में आया है वह जायेगा अवश्य। पिता का दायित्व बेटे को संभालना पड़ता है। यह कटु सत्य है बेटा। इसमें कोई दुराव छिपाव नहीं। यह जीवन का सत्य है। हमें सच्चाई से मुख कभी नहीं मोड़ना चहिये।

रतन को याद है वह जब छोटा सा था। अपने मंझले बाबा के साथ किसी के मृत्यु शोक पर गाँव गया था। औरतें बुरी तरह छाती पीट रही थीं। बाल मन समझ नहीं पा रहा था। रतन विस्फारित नेत्रों से सभी लोगों को देख रहा था। चेहरे पर विषाद की रेखाएं साफ दिख रही थीं। दारुण दृश्य था। मृतक कोई युवक था। उसकी माँ बार बार पछाड़ खाकर बेहोश हो रही थी। औरतें वैण डाल रही थीं। बल सुलभ मन में वह दृश्य भुलाये से नहीं भूला था। शैशव में कई घटनाएं मन पर अंकित होकर रह जाती हैं। जब रतन के पिता मृत्यु की बातें करते तो वह उनके मुख पर हाथ रख देता। शायद वह उसके भय को खत्म करना चाहते थे। रतन के पिता उसे निर्भय बनाना चाहते थे। रतन कभी मन्दिर में जाता। पुजारी से प्रश्न पूछता - बाबा! मरने के बाद कहाँ जाते हैं?कभी मन्दिर में रखी मूर्तियों को निहारता। यह मूर्तियाँ उसे कोई संतोषजनक उत्तर न दे पातीं। अब रतन गभरू हो गया था। मुछ्फुट गभरू। छोटी छोटी दाढ़ी उसके मुख पर उग आई थी। मूंछें भी आ रहीं थीं। कोई उसे छेड़ देता - आईयां मुछां किन्हूँ पुछां?। यानी जब बच्चा मुच्छ फुट गबरू हो जाये। जब बाप का जूता बेटे को आने लगे तो उससे एक मित्र का

सा व्यवहार करना चाहिए।। रतन आरंभ से आज्ञाकारी बालक था। कहीं भी जाना हो अपने माता पिता से पूछकर जाता। सुबह बावड़ी से पानी का घड़ा ले आता। गंदम की बोरी कंधे पर रखकर घराट से आट्टा पिसा कर ले आता। रास्ते में सोचता आता - क्या सभी जने प्रभु को प्यारे होंगे। उसके बाबा, मंझले बाबा, हरिया ताऊ, पिरथी चाचा इतने अच्छे लोग। इतने प्यारे लोग। क्या सभी एक दिन इस धरा से चले जायेंगे। अगले पल सोचता यह विचार मेरे मन आया ही क्यों?गुरुजनों से प्रश्न पूछता। पर उसे संतोष न होता। एक दिन उसके अपने बाबा की मृत्यु का समाचार मिला। वह बहुत रोया था। बाबा से उसे बहुत लगाव था। वे उसके लिए ढेर सारे आम ले आते। अनार ले आते उसको अपने साथ कोहले ले जाते वहां वह गुड़ बनने के प्रक्रिया को बड़े तन्मयता से देखता। बाबा की मृत्यु पर नाई ने उसके, उसके पिता, चाचा और ताऊ सभी के सिर के सारे बाल काट दिए, । उसका सिर सफाचट था। वह पिता की गंभीर मुद्रा को देखता। वह कितने गमगीन थे। हंसता चेहरा मुरझा गया था। गुमसुम

से हो गये थे। घर की स्त्रियों ने ने सफेद वस्त्र धारण कर लिए थे। ताऊ और चाचा के चेहरों पर विषाद की रेखाएं तैर रही थीं।

तब बिजली गाँव में कहाँ थी?लैंप जलाये जाते। या ढिबरी की रोशनी होती। रतन सबके चेहरे पढ़ता। दिन को लोग शोक प्रकट करने आते। कई दिन यह सिलसिला चलता रहा। सभी रतन के बाबा की तारीफ करते। उनके अच्छे गुणों का बखान करते। यह भी ठीक है कि आदमी अपने सुखों को सबसे ज्यादा याद करता है। एक दिन रतन के बाबा और पिता साथ साथ थे। बाबा ने कहना शुरू किया

- बेटा! मैंने तुम लोगों को कोई सुख नहीं दिया। तुम्हारी परवरिश भी ठीक तरह से नहीं कर सका। मुंशीगिरी में तुम्हें ज्यादा पढ़ा भी न सका। तुम्हें माँ का प्यार भी नहीं दे सका। अपने भाईयों के साथ मिलकर चलना। तुम समझदार हो। अपने भाईयों से पूरा सहयोग करना। और। अपनी बिधवा भाभी का ख्याल रखना। मृत्यु तो निश्चित है। बस बेटों का कन्धा मिल जाए बस। इसलिए बेटों की चाहना की जाती है। रतन बाबा की बैटन को बड़े ध्यान से सुन रहा था।

रतन बाबा की आकस्मिक मृत्यु पर एक बारगी काँप गया था। उसने पहली बार पापा को रोते हुए देखा था। बाबा की मृत्यु पर पिता चाचा ताऊ को अपने कंधों पर अर्थी को ले जाते देखा था। बाबा की बातें रतन को याद आ रही थीं। आदमी तो अपने सुखों को रोता है। आदमी का स्वर्ग नर्क यहीं तो है। उसके कर्म उसे अच्छा या बुरा इंसान बनाते हैं। बाबा के संस्मरण बहुत दिन तक याद किये जाते रहे। फिर एक शाम उसके पिता बाबा की एक फोटो मढ़ाकर बाजार से ले आये। दीवार में कील गाढ़कर फोटो टांग दी गई। फोटो पर एक हार पहना दिया गया बाबा के साथ गुजरे दिन सभी उसके मन मस्तिष्क पर आ जा रहे थे। कहाँ चले जाते हैं अपने प्रिय जन?वह अक्सर सोचता। बाबा साथ खवाड़े जाना, सुहागा झूटना, कमांद के लिए भटेड़ जाना, गन्ने चूसना, गर्म गुड़ खाना, मीठी पुतली खाना! सब याद आ रहा था। उनका कोई लोकगीत गुनगुनाना, सब याद आ रहा था।

रतन को वह दिन भूला नहीं। जब उसके पिता पदभार मुक्त हुए थे। उनके सहयोगी अध्यापकों ने उनकी मुक्त कंठ से प्रशंसा की। पांच - सात पंचायत प्रधानों ने उनके परमार्थ सेवा, कर्तव्य निष्ठा और ईमानदारी का गुण गान किया। उसे अपने पिता पर गर्व महसूस हो रहा था। पिता आप महान हैं। पिता जी का गला हारों से अटा पड़ा था। स्कूल वाले बाजे गाजे के साथ उन्हें घर तक छोड़ने आये थे। लोग उन्हें प्यार से होनहार मास्टरजी 'कहते थे। लोगों के प्यार से पिता जी अभिभूत थे। पदभार मुक्त होने के बाद यहीं से उनकी उलटी गिनती शुरू हो गई। जहाँ पहले अपने घर में रतन के पिता जी का स्वागत होता। वहां उनका स्वागत कटाक्षों से होने लगा। हर बात में तानों का सामना करना पड़ता। - सारा दिन बस अख़बार पढ़ते रहोगे। आप तो स्कूल में ही ठीक थे। रतन की माँ का स्वर अक्सर सुनने को मिलता - बिलकुल। निकम्मे हो गये हो आप। इतनी देर में दो काम संवार लेते।

- मास्टर जी सोचते कल तक तो मैं अच्छा था अब क्या हो गया?अब कौन से सुरखाब के पर निकल आए मेरे! वह कुर्सी से उठ जाते। पता नहीं रतन की माँ को अख़बार से चिढ़ थी।

दोनों लडके नौकरी में थे। दोनों बाहर रहते थे। बुरे दिन आते देर नहीं लगते। आदमी सोने में हाथ डाले मिट्टी हो जाता है। मास्टर जी ने अपनी पैतृक संपत्ति संभाली हुई थी। गाँव की जमीन, घर, का पूरा ख्याल करते। भाई भाभी कहते - हमारे इतनी खैरों के पेड़ हैं।

हमे पता है कि खैर की लकड़ी फुटों के हिसाब से बिकती है। घाह पतराह, बांसों का इतना पैसा आता है। हमे कोई पता नहीं। जो हिसाब मास्टर कर देता है। हमारे हिस्से के पैसे हमे देर सवेर मिल जाते हैं। सारा हिसाब तो मास्टर जी करते हैं, हमें क्या पाता कितने पैसे आते हैं। हमने कौन सी हिसाब की कापी देखी है।। जो हिस्से में आते होंगे हमे मिल जाते हैं। मास्टर हेराफेरी करता होगा तो कोई बात नहीं। हमारे ही परिवार का सदस्य है खा जाता है तो कोई बात नहीं, अपना ही तो है। बड़ी भाभी मुहल्लों वालों से मास्टर जी की नुक्ताचीनी कर जाती। लोग मास्कटर जी को भी बता देते कि भाभी क्या कह रही थी।

मास्टर जी चुप्पी लगा जाते। पर उनके। अपने घर में क्लेश पड़ जाता। - और करो अपने रिश्तेदारों की देखभाल। , यह सरीक

किसी के नहीं हैं। ये तो स्वार्थों से बंधे हैं।। आप जितना मर्जी इनको घी में डुबो दो। आपको समझाये कौन?और बनो हरीश चन्द्र सरीक तो सरीक होते हैं। रतन के बापू। आपने मेरे सारे गहने देवर देव की शादी में दे दिए थे। याद करो मैं तो झूठ ही बोलती हूँ। उन्होंने क्या दिया आपको?ताने मेहने। मकान गिरा था याद करो। तब मैंने दो महीने वहीँ डेरा जमाया था। तब कहाँ थे आपके देवर भाभी?एफ डी आपने तुड़वाई। और जब मकान बनकर तैयार हो गया तो आकर लगे कहने। ऐसा बनना था, वैसे बनना चाहिए था। कोई तब आया था पूछने। मोहल्ले वालों से जाकर मैं लड़ती रही।

- रतन की माँ! तू बस ऐसे ही बोलती रहती है। भाई भाई कोई बेगाने थोड़े होते हैं। उनकी कोई मजबूरियां रही होंगी। ऐसे ही नाराज होती रहती हो। कुछ भी हों हैं तो अपने ही। मास्टर जी के स्वर में मुलामियत थी।

मास्टर जी पुराने जद्दी घर का पूरा हिसाब रखते। साल में जो आमदनी होती उनका हिस्सा अपने भाईयों भाभी में वितरित कर आते। पूरी संपति जायदाद का हिसाब किताब उन्हीं के पास था। लेन देन उन्हीं के हाथ में था। फिर भी बड़ी भाभी और छोटा भाई पीछे से बातें करते। खुद आगे न आते। माँ का स्वभाव चिडचिड़ा हो गया था। छोटी छोटी बातों को लेकर दोनों में तनातनी रहने लगती। वह मास्टर जी पर बरस पड़ती। मनमुटाव बढ़ने लगा। दोनों में समझौता करवाने वाला कोई भी न था। तनाव दोनों के चेहरे पर रहने लगा। सदैव प्रसन्न चित रहने वाले मास्टर जी दिल ही दिल में कुढ़ने लगे।

उनके दिल की बात सुनने के लिए कोई अपना न था। किससे बातें करते?दोनों बच्चे अपनी पत्नियाँ लेकर नौकरियों पर चले गये, मास्टर जी दुःख को खुद पीते रहे। उन्होंने। माल पशु भी पाल रखा था। मास्टर जी चाहते थे कि इन पशुओं को बेच देते हैं। और आजाद होकर घूमने फिरने निकल चलते हैं, पर रतन की माँ का अपना तर्क था, बच्चों को घी जोड़कर दे देंगे, शहरों में पता नहीं कैसा नकली घी मिलता है। यह तो हमारा अपने घर का निकाला घी है! माल पशुओं को लेकर आये दिन दोनों पति पत्नी में तकरार होने लगी थी।

अत्यधिक कमजोरी के कारण मास्टर जी जल्दी तनाव में आ जाते। एक दो बार खेत में काम करते हुए बेहोश भी हो गये थे। अपनी बीमारी किसी को बताते नहीं थे। एक दिन घर में उनकी भाभी आई हुई थी। गाँव के पैसों को लेकर उनके साथ लड़ पड़ी। उसने आज कुछ ज्यादा ही कह दिया। मास्टर जी ने दिल को लगा लिया। मास्टर जी गिरते ही बेहोश हो गये। उधर बड़ी भाभी ने पैसे उठाये और बस अड्डे से दिल्ली की बस पकड़ ली।

मास्टर जी जब होश में आये। उन्हें स्ग्लावयं पर नि हुई। पूरी आयु जिन लोगोंके लिए झोंक दी। उन्होंने यह सिला दिया। रतन की माँ को अब बोलने का अवसर मिल गया।

रतन के पिता! मैं न कहती थी इन सरीकों पर कोई भरोसा नहीं। देखा अपनी भाभी को। आपकी राजी ख़ुशी तक नहीं पूछी। पैसे उठाये। बैग में डाले। अपना बैग उठाया और दिल्ल के लिए चल दी। और करो इनकी चाकरी। यह नहीं सुधरने वाले। मास्टर जी लंबी चुप्पी लगा गये।

अब तो सुबह शाम उठते बैठते रतन की माँ केलिए अपनी सखी सहेलियों और रिश्तेदारों के मध्य। यही चर्चा का विषय था, उधर मास्टरजी ने घर की बातों की चर्चा आम नहीं करते थे। मास्टर जी खाट पर पड़े पड़े। सोचने लगते - बच्चे अपने अपने चले गये। बेगम को अपनी पड़ी रहती है, हमारा फ़िक्र कौन करे?रात दिन सोचते सोचते अपने में उलझे रहते। आखिर। किस से अपनी दिल की बात की जाये?। कहीं से तो मन की शांति मिले। खुद मन से लड़ते रहते। किसी न किसी काम में व्यस्त रहते। एक दिन मिया बीवी में एक बार पशुओं को लेकर फिर तकरार हुई। रात के तीसरे पहर घर से बैग में दो जोड़ी कपड़े लेकर। हरिद्वार की बस में बैठ गये। बस स्टेंड

से गऊ घाट चले गये। गंगा नदी काफी चढ़ी हुई थी। श्रद्धालुओं की काफी बाढ़ आई हुई थी। स्पीकर पर गुमशुदा हुए बच्चो के खोने पाने वालों के नाम उद्घोषित किये जा रहे थे। बराबर स्पीकर पर अनाउंस किया जा रहा था गंगा नदी का जल स्तर बढ़ रहा है, नदी के बीच में ना जाएँ।। तट पर बैठकर नहायें। मास्टर जी ने वस्त्र खोलने शुरू कर दिए। आव ना देखा ना देखा ताव। जल समाधि के लिए गंगा में छलांग लगा दी। एक युवा कांस्टेबल ने उन्हें ऐसा करते देख लिया उस उत्साही कांस्टेबल ने भी छलांग लगा दी। मास्टर जी

को पकडकर किनारे पर ले आया।

- ताऊ जी! आपने छलांग लगाते जरा नहीं सोचा कि आपके पीछे अपने बच्चे अनाथ हो जायेंगे। यह कायरता कहाँ से आ गयी आपमें?यह मानुस देह बड़े तप से मिलती है। आप इसे ऐसे ही नष्ट करने चले थे। युवा कांस्टेबल मास्टरजी को समझा बुझा कर बस स्टेंड जाकर बस में बिठा आया। मास्टरजी को बड़े बेटे रतन से बड़ा लगाव था। उन्होंने रतन के पास जाने को ठान ली! और सीधी चंडीगढ़ की बस पकड़ ली। रतन के पास दो चार दिन रहने के बाद उसके समझाने पर मास्टरजी घर वापिस लौट आये।

रतन जब भी छुट्टियों में घर आता पिता की आत्मीयता भरी बातें सुनने को मिलती। राजनीति धर्म गृहस्थ समाज की बातें होती। बाप बेटे में देर रात तक बातें करते। उस दिन रतन खेत में पापा के साथ गुड़ाई कर रहा था। माँ भी साथ थी। - रतन! मेरी बात ध्यान से सुन। अपनी माँ का चेक अप शहर में किसी अच्छे डॉक्रटर से करवाओ। इसके शरीर को पता नहीं कितनी बीमारियाँ होंगी इसे? मेरा कहना तो मानती नहीं। तुम मनाकर देखो। पापा की कमर झुक गई थी। सभी गुडाई में व्यस्त थे।

- जरुर कराऊंगा, पर आप नुझे बताओ आप इतने उदास क्यों रहते हैं। मैंने आपको इतने उदास कभी नहीं देखा। सच सच बताना। पापा, आपको अपने बेटे की कसम।

- बेटा कुछ भी तो नहीं। तू ऐसे ही चिंता करने लगता है। कहते कहते उनकी आखें भर आई - तो अब आप भी अपने बच्चों से छिपाएंगे। कुछ नहीं बतायेंगे।

- तुमसे मैंने पहले कुछ छिपाया है क्या?

- कुछ तो बात है पापा। जो आपके होठों से आते आते ठहर रही है।

- तेरी माँ को मेरी इज्जत की कोई परवाह नहीं होती। जो मन में आये बोल देती है। चाहे अगले के दिल पर चोट लग जाए। बच्चे, दो प्यार के बोलों केलिए मैं तरस जाता हूँ। किससे बोलूँ?दूसरों के सामने मेरी लाह पाह करने में इसे मजा आता है। मैं तो आज तक इसकी बातों पर पर्दे ही डालता आया हूँ। हमारे घर की बात बाहर ना जाये। पर किसी बात की कोई हद होती है।

हाँ सभी दोष मेरा है। इनसे जरा पूछो इनकी बड़ी भाभी इन्हें बेहोश छोड़ कर चली गई। अपने सरीकों को तो जद्दी घर के पैसों से मतलब है और रिश्तेदारी से इन्हें क्या लेना देना? मैं तो इन्हें कहती हूँ कि छोडो ऐसे हिसाब किताब को। जेब से पैसे खर्च करके आप गाँव चले रहते हो उन्हें इसका कोई अहसास है क्या? जली आग लगानी ऐसे पैसों को, हमारे लिए इनकी पेंशन के पैसे ही बहुत हैं। अपने खेतों से साल भर के लिए अनाज मिल जाता है। क्यारियों में खाने की सब्जी हो जाती है।

- किसी को तो आगे आना पड़ेगा। लोग हमारी प्रशंसा ही करते हैं कि मुंशी जी का लड़का मास्टर अच्छा निकला जो अपने बड़े बुजुर्गों की जद्दी जमीन जायदाद की हिफाजत कर रहा है। अगर मेरी सिफत होती है तो इसी के साथ गाँव में तेरी इज्जत भी हुई ना।

- ऐसी इज्जत आपको ही मुबारक। मैं पूरी जिन्दगी भर खपती रही हूँ। आज तेरे पिता अपने भाई भाभियों की तरफदारी करते हैं, अब तू ही बता कि। मैं क्या करूं?

बात बढ़ चुकी थी। दोनों तरफ से अहं की तलवारें खिंच चुकी थी।। पशु डंगर को लेकर रोज़ होती झड़पों ने दोनों के मध्य तनाव को बढ़ा दिया था।। मास्टर जी का उठाना बैठना सरदार अतर सिंह की दुकान पर था। बहुत सज्जन पुरुष थे सरदार जी। मीठी वाणी। उनकी दो पत्नियाँ थीं। किंतु औलाद एक से भी नहीं थी। बहुतेरे टेस्ट भी करवाए। पीर फकीरों के डेरे पर माथा भी रगड़ा। तांत्रिकों के चक्कर भी लगाये पर नतीजा वही ढाक के वही तीन पात। अतरसिंह बीच से टूट चुके थे। वह मौन रहने लगे थे। - सरदार जी! आदमी सोचता कुच्छ है और ऊपर वाले को और ही मंजूर होता है। अब नुझे देख लीजिये। दो दो बेटे हैं। दोनों मेरे से दूर। पोते पोतियाँ होते हुए हम दोनों अकेले हैं।। कोई हमारे पास नहीं। यह तो मोह माया के जाल है सरदार जी। आदमी की मन की शान्ति चाहिए। और किस चीज की जरूरत है उसे?

- पर मास्टर जी! आदमी तो सामाजिक प्राणी है। लोग पता नहीं क्या क्या कहते हैं मेरे बारे में। तरह तरह की अफवाहें उड़ाते हैं मेरे बारे में। - सरदार जी! हमने - दुनिया से क्या लेना देना। दुनिया कि माने तो एक दिन भी गुजारना मुश्किल हो जाये। मास्टर जी कहते! मास्टर जी को रह रह कर बेहोशी के दौरे पड़ने लगे थे।

पारिवारिक चिकित्सक से परामर्श लिया गया। डॉक्टर ने ताकत के

इंजेक्शन लगाए। एक दिन। रात को तगड़ा दौरा पड़ा, उन्हें। ग्लूकोस चढाया गया। मास्टर जी को गगरेट चिकित्सालय ले जाया गया।। सरदार जी अपनी गाड़ी में ले आये। उन्होंने रतन की माँ को कहा - मास्टरनी जी आपने जरा भी चिंता नी करनी। मैं हूँ न। बहुत पैसे हैं मेरे पास। मैं उनको बचा लूँगा। आपने जरा भी आँख में पानी नहीं लाना।

डा० शर्मा ने उन्हें देखा। उन्हें खूबी पसीना आ रहा था। दवाईयां लिखकर दी गईं। सरदार जी मास्टर जी को अपनी पीठ पर लादे एक वार्ड से दूसरे वार्ड घूमते रहे। उनकी सेवा करते रहे। केमिस्ट की दुकान से दवाई आ गई। मास्टर जी ने औषधि का एक ही घूँट भरा। दवाई गिरकर गले तक आ गई थी। रतन की माँ सामने थी।

- घर किसे छोड़ आई? मास्टर जी का अस्फुट स्वर निकला। उनका सिर एक ओर लुढक गया। - - मैं हार गया मास्टरनी जी, वाहेगुरु ने मेरी नहीं सुनी। बच्चों को क्या जवाब दूंगा मैं? सरदार अतरसिंह वह वहीँ फर्श पर बैठ गये। फूट फूट कर रो रहे थे। उनकी टांगें जवाब दे गई थीं। डाक्टर ने बताया की जो औषधि पहले दी गई थी वही रिएक्शन कर गयी थी।

- मास्टर जी बुझदिली दिखा गये, मुझसे पहले चले गये। सरदार जी बुक्का फाड़कर रो रहे थे। मास्टरनी को तो जैसे सांप सूंघ गया था। इतनी जल्दी यह सब हो गया था कि किसी को पता भी नहीं चला। - देख मास्टरनी जो होना था सो हो गया। तू हौसला रख। सभी को सूचना दे दे अब। अपने बच्चों को बुला ले सरदारजी जी आँखों में आंसू टपक रहे थे। पता कौन सा रिश्ता था उनका मास्टर जी के साथ। एक अनाम रिश्ता था शायद, मानवता का रिश्ता। एक पवित्र रिश्ता। पूरे गाँव में मास्टर जी की देहावसान की खबर फ़ैल गई थी। सुबह सभी लोग इकठे हो गये थे। पंडित अयोध्यादास ने कहा - बच्चों का इंतजार जरुर करना, बहिन जी। मास्टर जी की अर्थी में बच्चों का कंधा जरुरी है। मास्टर जी देवता जैसे इन्सान थे, ऐसे देवता इस जहाँ में बहुत कम मिलते हैं।

- कल शाम को तो मिले थे मुझे मास्टर जी घास का बोझ सिर पर लादे हुए। - मेरे बच्चों को अमरुद और नाशपाती देकर गये थे परसों ही। सभी उनका गुणगान कर रहे थे। वह थे प्रशंसा के काबिल। सभी कह रहे थे। मुंह बोली बहिन पुष्पा, उसके दोनों लडके और सब आ गये थे मास्टरनी को होश कहाँ था?उसके सिर से उसका साईं उठ गया था। उसका रो रो के बुरा हाल था। पुष्पा के लडके गुड्डू की ड्यूटी लगाई गई की वह मास्टर जी के दोनों लडकों को टेलीफोन के माध्यम से खबर दे दे! गुड्डू ने मास्टर जी की डायरी उल्ट पलट कर देखी कहीं से उनका टेलीफोन नंबर मिल जाये। उसने आकर बताया कि भाई तो कहीं टूर पर चला गया है। और उसने किसी पास पडौस में संदेश छोड़ दिया है।

काफी लोग समाचार को सुनकर आ गये थे। मौसम काफी खराब हो चला था। आकाश में बादल उमड़ घुमड़ रहे थे। पुष्पा भी कहने लगी - भाभी! तू कहाँ पचड़े में पड़ेगी। अब तो पूरा गाँव जुट गया है। ऊपर से कहीं बरसात न शुरू हो जाए। और मुसीबत खड़ी हो जाएगी। भाई की मिटटी कहाँ खराब होते देखेगी तू। जो प्रभु को मंजूर। - बच्चों को क्या जवाब दूँगी?उनके कंधे किस दिन काम आएंगे?

- गुड्डू तो कह रहा था बड़ा लड़का टूर पर कहीं गया है, न जाने कब आये, कब उसे खबर मिले?मास्टर भाई का शरीर भी काला पड़ रहा है। भाई तो चला गया। अब शरीर सपुर्दे ख़ाक करने में ही भलाई है। पुष्प के घर वाले का स्वर था।। - मुझे कुछ नहीं पता जो आप सब करें मुझे मंजूर है। मास्टरनी ने स्वीकृति प्रदान कर दी थी। पुष्पा के दोनों बेटे अर्थी को कन्धा दिए हुए थे। अंतिम यात्रा में हजारों लोग जमा थे। सभी के आँखों में आंसू थे।

शाम को रतन और उसका छोटा भाई पहुंच गये थे। सभी रिश्तेदार भी आ जा रहे थे। - कहाँ हैं पिता जी? उसकी रुलाई थम नहीं रही थी। - बेटा उनका तो अंतिम संस्कार कर दिया गया है। - यह कंधे किसलिए मजबूत किये थे पिता जी ने। काहे को इतनी मालिश की थी। रतन की आँखें लाल सुर्ख थीं। - बेटा! मैं तुम लोगों की गुनहगार हूँ। क्या करती मेरे बच्चे?मैं अकेली पड़ गई थी। मुझे कुच्छ समझ नहीं आ रहा था।

- हमारा इंतजार न कर सके आप। पापा के अंतिम दर्शन भी न करने दिए आपने। रतन अपनी जगह से उठ गया। पिता की तस्वीर के पास जाकर रोता हुआ कहने लगा - पिता जी! मुझे मुआफ़ कर देना। मैं आपकी अर्थी को कंधा न दे सका। मैं आपका नालायक बेटा सिद्ध हुआ। मुझसे अच्छा तो सरदार अतर सिंह था, जो आपकी सेवा करता रहा।। आपसे किया वायदा न निभा सका। मुझे क्षमा कर देना। जोर जोर से कंधे दीवार में मारने शुरू कर दिए। कंधे में लोहा लगने से रक्त बह चला था।

¤¤¤

कवर फ़ायर

लघु कथा:- सुधाकर मिश्रा

बड़े सबेरे ऊंघता-अनमना सा जंगल, कुत्तों की भौं-भौं से दहल उठा। अचानक उठे इस कोलाहल से छोटे-मोटे प्राणी, इधर-उधर दुबकने लगे और पंछी तेज़ कलरव करते हुए पेड़ों के ऊपर मंडराने लगे। मामला वनराज शेर तक पहुँचा। पता चला कि कुत्तों के एक समूह द्वारा, योजनाबद्ध तरीक़े से हिरण, खरगोश और अन्य छोटे-छोटे प्राणियों का चुन-चुनकर शिकार किया जा रहा है। अन्य सभी प्राणियों के लिए संतोष की बात यह थी, कि कुत्तों के दूसरे समूह द्वारा इस प्रकार के शिकार का भारी विरोध भी किया जा रहा था।

जंगल में आग की तरह यह ख़बर फैलते ही कुत्तों के दोनों समूह के नेतृत्व को राजदरबार में तलब किया गया। सारी वास्तुस्थिति से अवगत होने के बाद, शिकारी कुत्तों के नेतृत्व को यही रवैया रहने पर, भविष्य में गंभीर अंज़ाम भुगतने की चेतावनी दी गई। वहीं कुत्तों के दूसरे नेतृत्व की भूरि-भूरि प्रशंसा भी की गई तथा अच्छे काम के लिए उनका उत्साह वर्धन किया गया। मंत्रिमंडल की गुप्त मंत्रणा के लिए मंत्रिमंडल के सदस्यों के अलावा, बाकी दरबारियों को रवाना कर दिया गया। मंत्रणा के बाद मंत्रिमंडलीय सदस्यों को योजनानुसार ख़ास स्थानों पर भेज कर तुरंत ख़बर देने का आदेश दिया गया।

महामंत्री बघीरा, पहाड़ी पर बैठकर जंगल का चारों ओर मुआयना कर रहा था, कि उसकी दृष्टि काफ़ी दूर घने पेड़ों की आड़ लेकर बैठे कुत्तों के एक बड़े झुंड की ओर पड़ी। सशंकित बघीरा, स्थिति का जायज़ा लेने के लिए अपने ख़ास गुप्तचर तेंदुए को झुंड की ओर भेजा।

तुरत-फ़ुरत बघीरा और तेंदुआ, राजाज्ञानुसार पुनः राजभवन में प्रतीक्षारत राजा शेर के समक्ष उपस्थित हुए। राजा को गुप्तचर तेंदुए द्वारा बताया गया कि "दरअसल कुत्तों के दोनों समूह एक ही हैं। दोनों पक्ष ख़ुशी-ख़ुशी आपस में गलबहियाँ कर रहे थे। अपने समूह को जंगल में कानून का उल्लंघन करने के बावजूद, स्वयं को सुरक्षित रखने के लिए आपकी आंखों में धूल झोंक रहे हैं। "

"कहना क्या चाहते हो?" शेर दहाड़ उठा।
"महाराजआपके दंड से बचने का उन्होंने ये तरीक़ा निकाला था कि दोनों समूह साथ में शिकार कर दावत उड़ाएंगे। तत्पश्चात् आपके गुस्से से बचने के लिए, दो समूहों में बंटकर, एक समूह दिखावे के लिए, जिससे किसी को शक ना हो, दूसरे समूह का विरोध करेंगे, लेकिन अपना गुप्त अभियान साथ में जारी रखेंगे। "

"ओह! ये बात है?, उनकी इतनी हिम्मत?, उन्होंने जंगल के कानून को क्या इंसानों का कानून समझ रखा है?, इसका दंड उन्हें अवश्य मिलेगा। "

वनराज द्वारा कुत्तों के नेतृत्व को, शीघ्रातिशीघ्र दरबार में उपस्थित होने का आदेश दिया गया। उनके उपस्थित होते ही आगबबूला होकर शेर ने दहाड़ लगाई।

"महाराज! दुहाईदुहाई" डर के मारे काँपते, गिरते - पड़ते हुए कुत्ते गिड़गिड़ाने लगे।

"एक तो तुम परदेसियों को इस शांतिप्रिय जंगल में शरण दी गई। मिलजुलकर रहने के बजाय तुम सभी गद्दारी पर उतर आए?फिर भी तुम सभी की जान बख़्शते हुए, अभी और इसी वक़्त जंगल निकाला दिया जाता है। तुम्हारी आदतों में सुधार आने के पश्चात् ही तुम्हारे भविष्य का फैसला किया जाएगा। " "महाराज उन्होंने शरण माँगी और हमने भरोसा किया। लेकिन भविष्य में ऐसी ग़लती न दोहराई जाए। " दरबार से कुत्तों के जाते ही बघीरा, राजा शेर से क्षमा सहित निवेदन करता है। ¤¤¤

खाली बेंच

कहानी:- रामनगीना मौर्य

"आपको थोड़ी देर इन्तजार करना पड़ेगा। बड़े-साहब अभी डी.पी. सी. की मीटिंग में व्यस्त हैं। अगर मीटिंग लम्बी खिंच गयी, तो वो वहीं से लण्च के लिए भी निकल सकते हैं, फिर लण्च बाद उनके आने पर ही आपके ट्रॉन्सफर-लेटर पर दस्तखत हो पायेगा। आप ऐसा करिये, तब-तक कोई और काम-धाम हो तो निबटा कर आ जाइये। ये शहर तो वैसे भी ऐतिहासिक इमारतों, पर्यटन-स्थलों के लिए जग-प्रसिद्ध है। चिड़ियाघर भी पास में ही है। आप चाहें तो वहां भी घूमने जा सकते हैं। "

चाय पिलाने के बाद बड़े-बाबू ने सुझाव दिया। रमन के लिए लखनऊ शहर एकदम नया था, फिर वो यहां किसी को जानता भी तो नहीं था। ट्रॉन्सफर-लेटर तैयार होते-होते दोपहर होने को आयी थी। सारे कागज-पत्तर तैयार हो गये तो पता चला कि बड़े-साहब आज सुबह से ही अलग-अलग मीटिंग्स में व्यस्त हैं। उनके मीटिंग्स से फुर्सत होने के पश्चात ही ट्रॉन्सफर-लेटर पर दस्तखत हो पायेंगे। रमन ने सोचा था कि ट्रॉन्सफर-लेटर मिल जाता तो ये भी पता चल जाता कि किस शहर में ज्वॉइनिंग देनी है, फिर उसी अनुसार वो आगे की तैयारी करता। नये शहर में किराये का मकान ढूंढ़ने के बाद गांव से पत्नी, बच्चों को भी तो लाना होगा।

"अरे भई रमन साहब! आप किस सोच में पड़ गये?" रमन इसी उधेड़बुन में था कि बड़े-बाबू ने उसकी तन्द्रा भंग की।

"जी, फिलहाल तो अभी मुझे यहां कोई काम-वाम नहीं था। फिर मैं यहां किसी को जानता भी तो नहीं? घूमना-फिरना तो वैसे भी इत्मिनान का काम होता है। कभी मौंका मिला तो पत्नी, बच्चों के साथ अवश्य घूमने आऊंगा। यहां आसपास कोई ढ़ंग का सस्ता होटल या ढ़ाबा हो तो बता दीजिए, तब-तक मैं भी कुछ खा-पी आता हूँ। " रमन ने जिज्ञासा की।

"हांये ठीक रहेगा। ऐसा करिये, आप जैसे ही मेन-गेट से बाहर निकलेंगे, सड़क के दोनों पटरियों पर दो-चार होटल या ढ़ाबे हैं, वहां मत जाइयेगा। वे काफी महंगे हैं। आप सड़क उस पार निकल जाइयेगा। थोड़ा आगे गंज की तरफ चलेंगे तो आपको सरदार जी का एक ढ़ाबा मिलेगा, वहां ग्राहकों की खूब भींड़ होती है। वहां का खाना भी ठीक है, और सस्ता भी पड़ेगा। " बड़े बाबू ने रमन को सुझाया।

"ठीक है! फिर मैं डेढ़-दो घण्टे बाद ही आता हूँ। " रमन ने अपना बैग उठाते हुए बड़े-बाबू से इजाजत लेनी चाही।

"बिलकुल! इत्मिनान से आइये। ये अपना भारी बैग लेकर कहां तक टहले-घूमेंगे? यहीं रख दीजिए, मेरे पास ही। " रमन के बैग में दो जोड़ी कमीज-पैण्ट, चादर, तौलिया, एक मैंगजीन, आज का अखबार और दैनन्दिन के कुछ जरूरी सामान ही थे। बैग ज्यादा भारी नहीं था।

"जी, मुझे कोई दिक्कत नहीं होगी, बैग हल्का ही है। "

"फिर भी, घूमने-फिरने में ऑड्ड तो लगता ही है, कहां लादे-लादे फिरेंगे? इसमें कोई मूल्यवान वस्तु तो नहीं है, जो इसे यहां रखने से डर रहे हैंहें-हें-हें। " ये बातें हंसते हुए कह कर बड़े-बाबू ने रमन को निरूत्तर कर दिया।

"अरे नहीं सर जी! ऐसी कोई बात नहीं। "

"तो लाइये दीजिए, मैं इसे अपनी ऑलमारी में रखवा देता हूँ। आप इत्मिनान से जाइये। खाइये-पीजिए, घूमिए-फिरिये, डेढ़-दो घण्टे बाद आइयेगा। तब-तक आपको सब काम रेडी मिलेगा। "

"जी, धन्यवाद। " कहते रमन अपना बैग वहीं बड़े-बाबू के पास ही छोड़कर, हेड ऑफिस-बिल्डिंग से बाहर निकल आया। सड़क की दोनों पटरियों पर, दो-तीन ढ़ाबों के साथ-साथ ही चाय-समोसे, बाटी-चोखा, आदि के ठेले भी खड़े दिखे। रमन को बड़े जोरों की भूख लग रही थी। उसने सोचा पहले चल कर भर-पेट खाना ही खा

लिया जाय। यही सोच वो बड़े-बाबू के बताये अनुसार सड़क उस पार गंज की तरफ चलने लगा।

लगभग एक फर्लांग दूर से ही रमन को वो ढ़ाबा दिखा। ढ़ाबे के सामने खड़ी दुपहिया-चौपहिया वाहनों की कतार देखकर उसने सहज अंदाजा लग लिया कि यही सरदार जी का ढ़ाबा है। ढ़ाबे के सामने खासा भींड़ थीं। वहां पहुंचने पर रमन ने देखा कि सरदार जी के ढ़ाबे के अन्दर भी अच्छी-खासी भींड़ है। कोने की एक टेबल पर सिर्फ तीन आदमी ही बैठे दिखे। वो भी जल्दी से वहां पहुंचकर खाली सीट पर बैठ गया। थोड़ी ही देर में उसकी टेबल के सामने ऑर्डर लेने के लिए एक बैरा नमूदार हुआ। मीनू जानने के बाद उसने बैरे से एक प्लेट दालफ्राई, एक सूखी सब्जी, हाफ पनीर और दो मिस्सी-रोटी लाने का ऑर्डर दिया।

वहां भोजन करके रमन को लगा कि ढ़ाबे का खाना वाकई बहुत लजीज था। उसने बड़े-बाबू को मन-ही-मन धन्यवाद दिया। खाने का बिल चुकता करने की बारी आई तो उसने पाया कि यहां भर-पेट भोजन भी अत्यन्त सस्ता है। बिल चुकता करने के उपरान्त, काउण्टर पर रखी प्लेट से मुट्ठी-भर सौंफ और मिश्री मुँह में लेकर चबाते हुए वो ढ़ाबे से बाहर आ गया। हेड-ऑफिस से निकले उसे, अभी आध-पौन घण्टे ही हुए थे। उसने सोचाथोड़ी दूर आगे चल कर मार्केट में ही घूम आया जाय। क्यूं न थोड़ी 'विण्डो-शॉपिंग' ही कर ली जाय? यही सोच कर वो आगे बढ़ गया। सामने जनपथ-मार्केट था। जेब में हाथ डाले-डाले, दुकानों के सामने से गुजरते, एक-दो दुकानों में मोल-भाव करते हुए उसने उस मार्केट का एक चक्कर लगाया। कुछ खरीदने की इच्छा नहीं हुई। वो जल्दी ही वहां से ऊब गया।

जनपथ-मार्केट से बाहर निकल कर अब वो फुटपाथ पर धीमें-धीमें चहलकदमीं करते आगे बढ़ रहा था। फुटपाथ पर ही एक जगह किनारे, उसे पुराने मैंगजीन्स, किताबों आदि की एक दुकान दिखी। किताबें, और उनका संग्रह रमन की कमजोरी हैं। पढ़ने- लिखने के शौक के कारण या समझ लीजिए समय बिताने के उद्देश्य से, वो उसी दुकान के सामने रूक गया। एक पुरानी मैंगजीन उठा कर उसके पन्ने उलटने-पलटने लगा। तभी उसकी निगाह एक किताब पर पड़ी। वो किताब उसके पसंदीदा रचनाकार की कहानी संग्रह थी। मुख-पृष्ठ पर उनका नाम देखते ही, किताब खरीदने के लिए उसका मन मचल उठा। किताब उठा कर देखा। किताब हॉर्ड-बाउण्ड संस्करण में होने के कारण महंगी थी, परन्तु पुराने संस्करण की होने के कारण, थोड़ी बारगेनिंग के बाद दुकानदार, उसे वो किताब सस्ते में ही बेचने को तैयार हो गया। उसने झट वो किताब खरीद ली, और थोड़ी दूर पर ही पॉर्क के सामने लगी एक बेंच पर बैठकर, उसे इत्मिनान से उलटने-पलटने लगा।

आदतन या कह लीजिए फितरतन। रमन की आदत है, किसी भी किताब को खरीद कर सबसे पहले वो ये इत्मिनान हो लेना चाहता है कि उसके सभी पन्ने दुरूस्त तो हैं न!पुरानी किताबों में तो खासतौर पर ध्यान रखना पड़ता है।

खैरपढ़ने वाले ने किताब को बहुत ही संभाल कर पढ़ा था। एक-दो जगह किताब के अन्दर के पन्ने जरूर मुड़े हुए मिले। शायदपढ़ने वाले ने मोड़ दिया हो। फिर सीधा करना भूल गया हो। या बाद में आगे पढ़ेगा, निशान लगाने वास्ते मोड़ दिया हो। ये भी हो सकता है कि वहीं तक पढ़ कर छोड़ दिया हो। कुछ कहा नहीं जा सकता।

हां एक बात और गौरतलब थी कि किसी-किसी कहानी में कुछ पंक्तियों को अण्डर-लाइन भी किया गया था। किताब के पन्ने पलटते

उनमें से दो-चार पंक्तियों को उसने दुहराया भी। पंक्तियां अच्छी थीं। रमन की भी आदत है, पढ़ते समय पेंसिल या पेन लेकर ही बैठता है, और जरूरी या खास महत्व की पंक्तियों को वो भी अण्डर-लाइन करता चलता है।

किताबों के मामले में रमन की एक और भी खास आदत है, पढ़ने से पहले, लेखक का जीवन-परिचय, पुरोवाक्, भूमिका, किसे समर्पित

किया गया है। किताब के अन्दर और बाहरी ब्लर्बस पर लिखी बातों को वो अवश्य पढ़ता है।

किताब के पहले ही सफहा पर किसी ने किसी को ये किताब, 'सप्रेम-भेंट' की थी, परन्तु भेंट प्राप्तकर्ता ने कदाचित पढ़ने के उपरान्त या इसे निष्प्रयोज्य समझते हुए यहां फुटपाथ पर बेच दिया था। किताब के पिछले पन्नों पर, पढ़ने वाले ने पेंसिल से कुछ जरूरी बातें भी पेज नम्बर डालते, नोट की थीं। फुटपाथ पर बेचने से पहले उसे इरेजर से मिटाने की भी कोशिश गयी थी, जिस कारण लिखी हुई बातें पठनीय नहीं थी। हांपर किसी का नाम जरूर पठनीय था। रमन ने गौर किया कि चश्में को ऊपर-नीचे खिसकाकर ध्यान से देखने पर शायद'अनन्या' लिखा प्रतीत हो रहा था!

किताब, उलटते- पलटते- देखते- पढ़ते, उसमें जितनी भी कहानियां थीं, वो एकबारगी लगभग सभी के शीर्षक देख गया। समय बिताने के लिए पढ़ने वास्ते, वो उनमें से कोई छोटी कहानी छांटने लगा। परन्तु सभी कहानियां, काफी बड़ी-बड़ी थीं। चूंकि रमन के पास इतना समय नहीं था कि कोई भी कहानी, एक बैठकी में समाप्त की जा सकती हो, सो वो फिर से उस किताब को अनमने ढ़ंग उलटने-पलटने लगा।

किताब को उलटते-पलटते रमन ने देखा कि किताब के मुख-पृष्ठ पर किसी रेलवे-स्टेशन का स्केच बना हुआ है। पीछे ऊंची पहाड़ियां दिख रहीं हैं। चित्रकार ने शायदकिसी हिल-स्टेशन की कल्पना की थी? स्केच में दूर जाती कोयले के इंजन वाली एक ट्रेन, कुछ डिब्बे, और उसका पिछला हिस्सा भी दिख रहा था।

वहां बैठा-बैठा किताब के पन्नों को उलटते-पलटते, थोड़ी देर तक वो उस किताब की छुवन, उसकी सोंधी महक में ही खोया रहा।

इन्हीं सब कवायदों के बीच अचानक रमन का ध्यान, एक बार फिर किताब के मुखपृष्ठ पर गया। उसे आश्चर्य हुआ कि उसने किताब के मुख-पृष्ठ को अब तक गौर से देखा क्यों नहीं? किताब के मुख-पृष्ठ पर रेलवे-स्टेशन का जो स्केच बना हुआ था, उसमें एक बेंच भी दिखाई दिया, जो खाली था। चित्रकार द्वारा, शायदट्रेन छूटने के बाद, की स्थिति में उस छोटे से पहाड़ी रेलवे -स्टेशन और उसके आसपास के दृश्य की कल्पना की गयी थी।

किताब के मुख-पृष्ठ पर उस खाली बेंच को देख कर रमन लगभग बाइस-तेइस साल पहले के अपने बीते दिनों की यादों के फ्लैश-बैक में चला गया।

उसे अच्छी तरह याद हैकॉलेज की पढ़ाई पूरी करके, विश्वविद्यालय में पी.एच.ड़ी में एडमिशन लेने के साथ ही वो सिविल-सेवा परीक्षाओं की तैयारी में भी जुट गया था। एक-डेढ साल के भीतर, दो-तीन जगह कम्पटीशन में बैठा भी। अंततः उसकी मेहनत रंग लायी। परिवहन विभाग में सुपरवाइजर के पद के लिए उसका चयन हो गया।

उसे आज भी याद है, सुपरवाइजर पद के इण्टरव्यू के लिए उसके पास ढंग के जूते नहीं थे, जिसे उसने अपने दोस्त शेखर से मांगे थे। प्रवेश-परीक्षा का अंतिम-परिणाम निकलने के एक-डेढ़ महीने बाद, पोस्टिंग के लिए नैनीताल ऑफिस से कॉल-लेटर आया था। रमन ने इससे पहले अपने जीवन में कभी पर्वतीय अंचलों की यात्रा नहीं की थी। पहाड़ की भौगोलिक परिस्थितियों से वो पूरी तरह अनजान था। जाहिर है, पहाड़ पर जाने और वहां के मौसम, भौगोलिक परिस्थितियों आदि को लेकर, वो मन-ही-मन अत्यन्त उत्साहित था।

नैनीताल पहुंचने के लिए उसे अपने शहर से लगभग छः सौ किलोमीटर की यात्रा तय करनी थी। एक अनजान परिवेश में, बल्कि कह लीजिए अपने शहर से इतनी दूर जाने का उसके लिए ये पहला मौंका था। नौकरी के लिए घर से इतनी दूर जाना था। मन में पहली नौकरी पाने का जोश-उत्साह तो था ही, परन्तु कुछ अनजान आशंकाएं भी रह-रह कर उसके दिलोदिमाग पर छा जातीं। पहली नौकरी मिलने पर मन में क्या-क्या विचार उठ रहे होंगे, गूंगे के गुड़ मानिन्द उस अनुभव को शब्दों के माध्यम, साझा करना उसके लिए सम्भव नहीं।

चूंकि पहाड़ के मौसम से वो पूरी तरह अनजान था, फिर वो, कहीं भी सफर में जाते समय अपने साथ ज्यादा सामान इत्यादि लेकर चलने का हिमायती भी नहीं रहा। हालांकि, ये आदत उसके पिता जी की भी रही। उनका भी मानना था कि सफर में सामान जितना ही कम होगा, सफर उतना ही आसान होगा। इसलिए वो भी अपने बैग में, घर से सिर्फ दो जोड़ी पैण्ट-शर्ट, एक चादर, एक शॉल, एक तौलिया, एक पायजामा, दो जोड़ी अण्डरवियर, बनियान, कुछ पैसे और बोरियत से बचने वास्ते एक किताब लेकर ही नैनीताल जाने के लिए निकला था। अभी ठीक-ठीक याद नहीं, शायदसितम्बर या अक्टूबर का महीना रहा होगा। उसे ट्रेन से लखनऊ से काठगोदाम तक, फिर काठगोदाम में उतर कर, बस से नैनीताल की यात्रा करनी थी।

काठगोदाम से जब उसकी बस चली तो खिड़की से दिखने वाला चतुर्दिक का प्राकृतिक वातावरण मन को प्रफुल्लित कर देने वाला था। हल्की ठण्डक भी लगने लगी थी। उसने अपने बैग से शॉल निकाल कर ओढ़ लिया। पहले कुछ दूर की सड़क समतल मिली, लेकिन जल्द ही पहाड़ की चढ़ाई प्रारम्भ हो गयी।

सर्पीले आकार की सड़कें, कहीं ऊंचे पहाड़, तीव्र चढ़ाई, तो कहीं गहरी खाईं। खाईं की तरफ देखते ही कलेजा मुंह को आ जाता। कुछ यात्री तो उल्टियां करते भी दिखे। मारे डर के आंखें खुद-ब-खुद बन्द हो जातीं, पर अगले ही पल सड़क के दोनों तरफ की हरियाली, ऊंचे दरख्त देखकर रमन का मन अत्यन्त प्रफुल्लित हो उठता। दूर पहाड़ों से उठता धुआं, स्वप्न सरीखे लगता। कहीं-कहीं

रूईनुमा बादलों के छोटे-बड़े गुच्छों के आ जाने से हल्का धुंधलका सा भी छा जाता। चहुंओर का वातावरण देख कर बिलकुल स्वर्गिक आनन्द, का सा आभास हो रहा था।

सुदूर दिखते साल-सागौन के वृक्ष, चतुर्दिक पलाश, शिरीष, बुरूंश के पेड़-पौधे, पहाड़ के सर्पीले रास्तों पर रेंगती गाड़ियां, अत्यन्त मन-लुभावन दृश्यावली रच रहीं थीं। रास्ते में कई जगह महिलाएं, लकड़ियां काटते, अपने जानवरों को चराते, पानी ढ़ोते दिखीं। पहाड़ों का नैसर्गिक, मन-लुभावन सौन्दर्य देखते, पूरे रास्ते वो खुद के भाग्य पर इतराता रहा। काठगोदाम से नैनीताल की वो पहली बस यात्रा उसे जीवन भर याद रहेगी।

रास्ते में एक जगह चाय-पानी के लिए बस रूकी। रमन को बड़े जोर की भूख लग रही थी। पता नहीं ये पहाड़ के खुशनुमा मौसम का असर था, या नई-नई नौकरी पर जाने का उत्साह? ढ़ेरों विचारों से ऊभ-चूभ होते, बस से उतरकर, बदन खीचते, भरपूर अंगड़ाई लेते, अन्य मुसाफिरों संग वो भी सड़क किनारे स्थित ढ़ाबे की ओर बढ़ गया। रमन ने भी बाकी यात्रियों संग पनीर पकौड़ा, बन्द मक्खन खाया और चाय पिया। पानी ठण्डा था, परन्तु अति-स्वादिष्ट लग रहा था। उसने जी-भर कर पानी पिया।

पहली नौकरी, तिस पर नई जगह को लेकर रमन के मन में, ढ़ेरों आशंकाएं- सम्भावनाएं, तो कभी अपने पैरों पर खड़े होने का इत्मिनान-भाव, अपार सन्तोषभाव, रास्ते- भर उमड़- घुमड़ होते रहे। लगभग दो घण्टे की यात्रा के उपरान्त, उसकी बसनैनीताल बस-स्टेशन पर आ खड़ी हुई। बस से उतरते ही सामने, दूर तक फैली नैनीताल झील दिखी। जो झील अब तक चित्रों या उसकी कल्पनाओं में रची-बसी थी, उस दिन बिलकुल रमन के सामने थी। झील को साक्षातअपने सामने देख तत्काल ही उस झील में कभी राजेश खन्ना, आशा पारिख के ऊपर फिल्माए गये, गाने'जिस गली में तेरा घर न हो बालमां' की यादें, ताजा हो आयीं।

खैरझील और उसके चतुर्दिक आसमान छूते पहाड़ों की प्राकृतिक सुन्दरता को देख कर उसे यकीन ही नहीं हो रहा था कि इतना सुरम्य-स्थल हमारी धरती पर है। बस-स्टेशन और उसके आसपास खासा चहल-पहल का सा दृश्य था। बस-स्टेशन पर स्थानीय लोगों के साथ-साथ, अलग-अलग जगहों से आये ज्यादातर सैलानी ही दिख रहे थे।

बस से उतरकर, बस-स्टेशन के टिकट-काउण्टर पर ही रमन ने परिवहन विभाग के दफ्तर का पता पूछा, उस दिन का अखबार खरीदा और काउण्टर-क्लर्क के बताये अनुसार, वो अपना बैग पीठ पर लटकाए, परिवहन विभाग के दफ्तर की ओर पैदल ही चल पड़ा। परिवहन विभाग का दफ्तर ज्यादा दूर नहीं था। वहां पहुंचकर उसने सबसे पहले बड़े-बाबू, जिन्हें वहां दफ्तर में मौजूद सभी लोग 'जोशी जी' कहते, सम्बोधित कर रहे थे, के समक्ष अपनी उपस्थिति दर्ज करायी। रमन के अलावा चार और कैण्डीडेट्स भी, जो वहां पहले से ही पहुंचे थे, बैठे मिले। उनसे परिचय हुआ। सिर्फ एक को छोड़ कर बाकी सभी चार जन, मैदानी इलाकों से आये थे। उस एक कैण्डीडेट को छोड़ कर बाकियों में से किसी को भी पहाड़ के मौसम, वहां की भौगोलिक-स्थिति के बारे में, विशेष जानकारी नहीं थी।

पांचों कैण्डीडेट्स की नई-नई पोस्टिंग होनी थी। कुछ औपचारिकताएं, कुछ वेरीफिकेशन्स भी होने थे। जिस कारण पोस्टिंग-लेटर्स के बनने में समय लग रहा था। इस बीच सभी कैण्डीडेट्स दफ्तर के इर्द-गिर्द घूमते-टहलते, एक-दूसरे से बतियाते, एक-दूसरे के बारे में अधिक से अधिक जानने का प्रयास करने के साथ-साथ, दूर दिख रहे वनाच्छादित, हरे-भरे पहाड़ों की खूबसूरती में खोये रहे। सभी कैण्डीडेट्स अत्यन्त उत्साहित थे। रमन के जेहन में, पहाड़ को पृष्ठभूमि में रख कर लिखी गयीं, कुछ

कविताएं, कहानियां, उपन्यासों और कुछ फिल्मों की स्मृतियां भी रह-रह कर ऊभ-चूभ होती रहीं।

चूंकि लण्च का समय हो गया था, और अभी तक उन्हें पोस्टिंग-लेटर्स नहीं मिल सके थे, अतः उन सभी कैण्डीडेट्स ने कहीं चल कर खाना, खाने का प्रोग्राम बनाया। बड़े-बाबू को बताकर, सभी कैण्डीडेट्स पुनः बस-स्टेशन की तरफ आ गये। वहीं उन सबने एक होटल में भरपेट भोजन किया।

भोजन के उपरान्त सभी पांचो कैण्डीडेट्स, तल्लीताल से मल्लीताल होते हुए, नैनी झील के किनारे-किनारे धीमें-धीमें टहलते, बतियाते, नैना देवी मंदिर में दर्शन के उपरांत पहाड़ की आबोहवा, झील की खूबसूरती में खोये, अगल-बगल से निकलते कुछ नव-विवाहित जोड़ों, सैलानियों को देखते, मुस्कुराते आगे बढ़ते चलते रहे। पूरा रास्ता सैलानियों की चहल-पहल से अंटा पड़ा था।

आगे एक खुले मैदान में कुछ दुकानें, जो रंग-बिरंगी गरम कपड़ों से सजी-धजी थीं, के सामने, कड़ाके की ठण्ड न होने के वाबजूद, कई सारे सैलानी मफलर, दस्ताने, शॉल आदि खरीदते, मोल-भाव करते दिखे। वे कैण्डीडेट्स भी थोड़ी देर के लिए वहीं रूक कर लोगों को मोल-भाव करते देखते रहे। उन्होंने देखा कि वहां और चीजों के अलावा, किसिम-किसिम के डिजायनों की खूबसूरत मोमबत्तियां

भी बिक रहीं थीं। चूंकि जगह नई थी, और उन कैण्डीडेट्स के पास ज्यादा पैसे भी नहीं थे। अतः उन्होंने वहां से ज्यादा- कुछ खरीदना नहीं चाहा, परन्तु मोमबत्तियां देख कर उनका मन ललचा गया। सोनैनीताल यात्रा की यादें संजोने वास्ते, उन्होंने अलग-अलग रंगों, डिजायनों की दो-दो, चार-चार पीस, मोमबत्तियां अवश्य खरीदीं।

रमन को ध्यान हैवो रंग-बिरंगी मोमबत्तियां इतनी खूबसूरत थीं कि बाद के वर्षों में उसने उन्हें जलाने के प्रयोजन में तो कभी इस्तेमाल ही नहीं किया। हां, लेकिन एक-दो पीस, किसी को गिफ्ट अवश्य कर दिया था। एक पीस तो उसने अभी भी घर में ही कहीं सहेज कर रखी होगी।

वहां मौजूद फोटोग्रॉफर्स, सैलानियों के फोटो खींचकर, उन्हें डेवलप कर, उनके ठहरने के स्थानों पर देने का वादा करते भी दिखे। कुछ स्थानीय बच्चे झील के किनारे खड़े होकर मछलियों को दाना डालते भी दिखे।

उनका इरादा तो चाइना पीक देखने का भी था, परंतु शाम ढ़लने लगी थी। उन्होंने सुना था कि पहाड़ों पर यदि धूप खिली हुई हो, तो दिन बहुत ही खुशनुमा लगते हैं, पर जल्द ही शाम भी ढ़ल जाती है, उस दिन ये मंजर, उन्होंने अपनी आंखों से देख भी लिया था। शीघ्र ही सभी कैण्डीडेट्स मुख्यालय वापस लौट आये।

मुख्यालय वापस लौटने पर उन सभी को पोस्टिंग-लेटर्स तैयार मिले। रमन की पोस्टिंग, नैनीताल से लगभग डेढ़ सौ किलोमीटर दूर, एक मैदानी जगह पर हुई थी। वहां जाने के रास्ते के बारे में पूछने पर बड़े-बाबू ने ही उसे रास्ता समझाते हुए ये भी बताया कि“आपकी बस का टाइम हो गया है। आप जल्दी निकलिए। यही आखिरी बस है। अगर ये बस छूट गयी तो आप यहां की ठण्डक में परेशान हो जायेंगे। वैसे यदि आप चाहें तो आज रात मेरे घर पर ही रूक सकते हैं, कल सुबह चले जाइयेगा। ”

“जीशुक्रिया, अभी तो टाइम है। मैं निकल सकता हूँ। ” ये कहते, रमन ने फौरन ही बाकी साथियों से विदा ली। रमन को छोड़, बाकी सभी कैण्डीडेट्स, उस रात नैनीताल में ही ठहरने वाले थे। रमन ने बस-स्टेशन की राह ली। वो जब बस-स्टेशन पर आया तो, वाकईआखिरी बस, जो सवारियों से लगभग भरी हुई थी, चलने के लिए तैयार खड़ी थी। बस में उसके घुसते ही, बस चल पड़ी। पहाड़ का जो मनोरम दृश्य, सुबह के सफर में दिखाई दिया था, अब हल्के अंधेरे की वजह से खिड़कियों के उस पार, साफ-साफ दिखाई नहीं दे रहा था। फिर ठण्ड की वजह से बाकी यात्रियों ने खिड़कियां भी बन्द कर रखीं थीं। धीरे-धीरे चहुंओर धुन्ध बढ़ने लगा था। बस हल्द्वानी बस-स्टेशन पर आकर रूकी। वापसी में, बस में मौजूद लोगों की बात-बतकहियां सुनते, उनसे बतियाते डेढ़-दो घण्टे का सफर कब खत्म हो गया, कुछ पता ही नहीं चला।

हल्द्वानी में नैनीताल की अपेक्षा मौसम उतना ठण्डा नहीं था, बल्कि थोड़ी देर पहले हुई बारिश की वजह से हल्की उमस भी थी।

बस से उतरकर आगे का रास्ता तय करने के लिए वहीं बस-अड्डे पर ही खड़ा, वो अगली बस का इन्तजार करने लगा। बस-अड्डे पर यात्रियों की काफी भींड़ थी। इस बीच रमन को भूख भी लग रही थी। उसने सोचा कि रात के सफर में आगे रास्ते में कहीं खाने को मिले-न-मिलेक्यों न यहीं बस-अड्डे पर ही कुछ खा-पी लिया जाय? यही सोच कर भोजन करने वास्ते, वो बस-अड्डे के बगल में बने ढ़ाबे की तरफ चला गया। दो लड़के, ढ़ाबे के सामने खड़े होकर ग्राहकों को भोजन करने, चाय-पानी करने वास्ते तेज-तेज आवाज में'चाय-पानी कर लोचाय-पानी कर लो'की आवाजें लगा रहे थे। रमन भी एक ढ़ाबे में घुस गया।

खाना, खाकर जब वो वापस आया तो बस-अड्डे पर यात्रियों की भींड़ काफी-कुछ छंट चुकी थी। काफी देर तक कोई बस नहीं आयी तो एकबारगी उसका मन हुआ कि रात-भर सफर करने, और नींद पूरी न होने से दिन-भर थकावट और ऊबांसी सी बनी रहेगी। ऐसे में नई जगह पर मातहतों, सहकर्मियों या उच्चाधिकारियों पर क्या पता अच्छा इम्प्रेशन न पड़े? पता नहीं वहां किन लोगों के साथ, कितनी देर तक काम करना है? कब, और कहां आराम करने को मिले? नई जगह पर नये लोग होंगे। रहने-ठहरने के इन्तजाम के बारे में भी कुछ नहीं पता। उत्सुकता और आशंका के मिले-जुले भाववश, उसके मन में अभी भी ढ़ेरों उथल-पुथल चल रहे थे। सो आगे के सफर पर जाने के बजाय उसने सोचा कि क्यों न बस-अड्डे पर ही कहीं, पंखे के नीचे, ठीक-ठाक जगह देख कर, चादर बिछाकर सोया जाये? सुबह होने पर आगे की यात्रा पर निकलना ठीक रहेगा।

बस-अड्डे पर उसने सरसरी निगाह दौड़ाई। पंखे के नीचे कहीं भी खाली जगह नहीं दिखी। रात्रि-विश्राम करने वाले यात्रियों ने पंखे के नीचे वाले फर्श के हिस्से पर बेतरह कब्जा जमा रखा था। लेटने की कहीं कोई गुंजायश नहीं दिख रही थी। कुछ मुसाफिरों के बच्चे जरूर मस्ती के मूड में घेरा बनाकर खेलते-दौड़ते नजर आये। उन बच्चों को खेलता देख, उन्हीं के बगल में, सुबह खरीदे गये अखबार को वो वहीं फर्श पर बिछाकर बैठ गया।

वहां बैठे-बैठे चतुर्दिक निगाहें घुमाते रमन ने ध्यान दिया कि उसके बगल के चौकोर खम्भे की ओट में, भिखारीनुमा दिख रहा एक अत्यन्त बूढ़ा आदमी, एक कुल्हड़ में चाय लिये बैठा, कंपकपाते हाथों, ब्रेड के टुकड़े चाय में डुबो-डुबो कर खा रहा था। बगल में एक बच्चा भी सोया हुआ था। रमन को उन दोनों पर बड़ी दया आयी। अपनी जगह से उठ कर यूं ही टहलते हुए वो उनके पास पहुंचा तो उस बूढ़े भिखारी ने रमन की तरफ सिर उठाकर सिर्फ देखा ही, मांगा कुछ नहीं। रमन ने अपनी जेब टटोली, और एक रूपये का एक सिक्का उसकी तरफ बढ़ा दिया। बूढ़ा भिखारी, बिना कोई प्रतिक्रिया दिये, यन्त्रवत उस सिक्के को अपनी जेब के हवाले करते, पुनः कांपते हाथों, चाय के कुल्हड़ में ब्रेड के टुकड़े डुबो-डुबो कर खाने में मशगूल हो गया। रमन भी बस-अड्डे के सामने की चाय के दुकान से एक चाय लेकर पुनः अपनी जगह पर आकर बैठ गया।

थोड़ी देर इधर-उधर देखते, समय बिताने की गरजवश, वो बस-अड्डे पर ही टिकट-खिड़की के बगल वाली दीवाल पर पेण्ट से लिखे हुए विभिन्न गंतव्य-स्थलों के नाम, यथाः काठगोदाम, रामनगर, देघाट, मानेला, भवाली, अल्मोड़ा, रानीखेत, रूद्रपुर, काशीपुर, हरिद्वार, कोटद्वार, लैन्सडाउन, नजीबाबाद, देहरादून, लोहाघाट, पिथौरागढ़, टनकपुर, बरेली, मुरादाबाद, मेरठ, नई दिल्ली, लखनऊ, के साथ-साथ, हल्द्वानी से उनकी दूरी तथा वहां के लिए जाने-आने वाली गाड़ियों के टाइम-टेबल, किराये आदि की सूची को सरसरी तौर पढ़ने लगा।

टिकट-खिड़की के ठीक ऊपर दीवाल पर ही स्थानीय मुख्य पर्यटन-स्थलों को दर्शाते हुए एक खूबसूरत रंगीन मानचित्र भी टंगा हुआ था।

वहां बैठे-बैठे अब उसे हल्की झपकी भी आने लगी थी। लेटने की गरजवश उसने अपने इधर-उधर नजरें दौड़ाईं। टिकट-खिड़की के बगल स्थित बेंच पर एक बूढ़ा आदमी लेटा था। उसके सिर पर एक पंखा जरूर चल जरूर रहा था, पर अत्यन्त ही मंथर गति से। चूंकि रमन जहां बैठा था, वहां पर्याप्त रोशनी नहीं थी, ऐसे में समय बिताने के लिए, वो अपने साथ लाई किताब भी नहीं पढ़ सकता था। थकावट के कारण उसे गहरी नींद भी आ रही थी। चहुंओर मच्छरों के भिनभिनाने-काटने से सुखद नींद की कल्पना ही बेकार थी।

रमन ने ध्यान दिया, टिकट-खिड़की के बगल स्थित बेंच पर लेटा वो बूढ़ा आदमी, थोड़ी देर बाद अपनी जगह से उठकर, तनिक लड़खड़ाते, सड़क उस पार जाकर, नाली के सामने पेशाब करने बैठ गया। चूंकि बेंच पर लेटा वो बूढ़ा आदमी जहां बैठा था, कम-अज-कम वहां एक पंखा तो चल ही रहा था, भले मंथर गति से ही सही, मच्छरों से थोड़ी राहत तो मिलती ही। फिर, वहां पर्याप्त रोशनी भी थी। रमन मन-ही-मन सोचने लगा कि काशवो बूढ़ा आदमी वहां दुबारा लौट कर न आता, ताकि वो उस जगह पर जाकर, अपने सोने का इन्तजाम कर लेता।

आश्चर्य किवो बूढ़ा आदमी पेशाब करने के बाद, अपने पतलून की

चेन बन्द करते, एक तरफ निकल गया, हालांकि वो अभी भी थोड़ा लड़खड़ा रहा था। रमन ने झट अपने बैग से चादर निकाली, वहां बेंच पर बिछाते, बैग को तकिया बनाकर लेटते, सोने की कोशिश में लग गया। पर मच्छरों के बारे में उसकी धारणा गलत साबित हुई, मच्छरों ने यहां भी उसका पीछा नहीं छोड़ा।

अगर ऐसा ही रहा, और ठीक से नींद नहीं आयी, तो मेरा यहां रात-भर रूकने का फायदा भी क्या? यही सोच कर रमन ने किसी धर्मशाला या होटल में रात बिताने की सोची। उसने तत्काल अपने असबाब समेटे और बस-अड्डे से बाहर आ गया। चूंकि, उसकी जेब में ज्यादा पैसे नहीं थे, और वो वहां के बारे में ज्यादा कुछ जानता भी नहीं था, सो उसने किसी धर्मशाला या सस्ते होटल में ही रात बिताने की सोची।

किसी सस्ते होटल या धर्मशाला की खोज में वो बस-अड्डे से काफी दूर निकल आया।

'विग से छुटकारा पायें। बांझपन का शर्तिया इलाज। " सड़क से थोड़ा हट कर, लगे एक ग्लोसाइन-बोर्ड पर उसकी निगाह चली गयी। ग्लोसाइन-बोर्ड के एक तरफ एक चिकित्सक की फोटो भी लगी थी। बड़ी-बड़ी मूंछें, सिर पर साफा। ऐसी धज में वो चिकित्सक कम, किसी अखाड़े के पहलवान ज्यादा लग रहे थे। हालांकि, उस समय उनके साफे से रमन ने यही अन्दाजा लगाया था कि क्या पता खुद ये महाशय खल्वाट खोपड़ी वाले हों, और दूसरों के सिर पर बाल उगाने का दावा कर रहे हों, इसीलिए बड़ा सा साफा बांध रखा हो। ग्लोसाइन-बोर्ड के दूसरी तरफ एक दम्पति की गोद में बैठे एक स्वस्थ-सुन्दर-सलोने और खिलखिलाते बच्चे की फोटो भी लगी थी।

रमन अब सड़क की जिस पटरी पर चल रहा था, उसके दूसरी तरफ की पटरी पर, एक जगह टिमटिमाती रोशनी में 'ठहरने का उचित इन्तजाम है। ' लगा बोर्ड दिखा। वो उधर ही चला गया। वो एक खस्ताहाल, सस्ता सा होटल था। काउण्टर पर एक बूढ़ा आदमी बैठा-बैठा ऊंघ रहा था। रमन ने काउण्टर पर अपनी हथेलियों के सहारे हल्के दस्तक दी।

"हलो!"
"ऊं-हूं-ऊं?" काउण्टर स्थित बूढ़ा आदमी झटके से उठा।
"मुझे एक कमरा चाहिए। "
"कहां से आए हैं?"
"बनारस से। यहां एक इण्टरव्यू देने के लिए आया था। "
"डीलक्स-रूम चाहिए कि साधारण?"
"स्टूडेण्ट हूँ। साधारण कमरा ही दे दीजिए। " पता नहीं क्यों? रमन ने उसे सही जानकारी देना उचित नहीं समझा।
"साधारण रूम के चालीस रूपये पड़ेंगे। "

"ठीक है दे दीजिए। " रमन ने हामी भरते, उसकी तरफ पचास रूपये का एक नोट बढ़ाया। उस बूढ़े आदमी ने रमन को दस रूपये लौटाते हुए एक रजिस्टर उसकी ओर बढ़ा दिया। उसने उस रजिस्टर में अपना नाम, और पते की जगह सिर्फ वाराणसी लिख दिया। काउण्टर पर पर्याप्त रोशनी न होने के कारण उस बूढ़े आदमी ने भी उस तरफ खास ध्यान नहीं दिया। रमन ने अन्दाजा लगाया, या तो वो बूढ़ा आदमी अनपढ़ था, या लापरवाह? खैरचालीस रूपये जमा करने के बाद उसने एक लड़के को पुकारा, और रमन को उसका कमरा दिखाने वास्ते, काउंटर के पीछे दीवाल पर लगी खूंटियों से लटकी चाभियों में से एक चाभी निकलकर उसके साथ भेज दिया। रमन का कमरा दूसरी मंजिल पर था।

साथ आए उस लड़के के जाने के बाद रमन ने कमरे का सरसरी तौर मुआयना किया। खासा सीलन भरा कमरा था। तखत पर बिछा हुआ गद्दा पुराना लग रहा था, लेकिन उस पर बिछी हुई चादर साफ-धुली हुई थी। हांउंगलियों से एक रेखा खींचते हुए, मेज और कुर्सियों पर जमीं धूल की परत का अंदाजा आसानी से लगाया जा सकता था। गुसलखाने का दरवाज़ा खोलने पर वाशबेसिन और टॉयलेट सीट की गंदगी देखकर साफ़ लग रहा था कि इनका इस्तेमाल काफ़ी समय से नहीं हुआ है। ऐसे में टॉयलेट के इस्तेमाल के बारे में सोचा ही नहीं जा सकता था। शायद कमरे के बाहर कोई सामूहिक टॉयलेट हो उसने अंदाज़ा लगाया। नहाने वास्ते नल की टोटी के नीचे कोई बाल्टी नहीं दिखी। हां! एक टूटा मग ज़रूर कोने में लुढ़का हुआ मिला। उसने गुसलखाने का दरवाज़ा झट से बंद किया। इतने गंदे कमरे में रात बिताने की बात सोचकर ही उसे उबकाई आ रही थी। खैर मज़बूरी जो न कराए।

चूंकि रात ज्यादा हो रही थी, सो रमन ने बिना एक पल भी गंवाए, तत्काल अपनी चादर तखत पर पड़े चादर के ऊपर ही बिछाया, और एक नम्बर पर पंखा खोलते, शॉल ओढ़ कर सो गया। उसे लेटे अभी पन्द्रह-बीस मिनट ही बीते होंगे कि दरवाजे पर हल्की दस्तक हुई। चूंकि नयी जगह होने के कारण झट नींद आना सम्भव नहीं था। रमन अभी करवटें बदल ही रहा था कि उस दस्तक से वो चौंक कर उठ बैठा।

"कौन?" उसने धीमें से ही पूछा।

"बाबू जी पानी लाया था। रख लीजिए। रात को प्यास लगेगी तो कहां जायेंगे? बाथरूम में लगी टंकी का पानी, पीने योग्य नहीं है। " उस लड़के की आवाज पर रमन की जान में जान आयी। उसने उठकर दरवाजा खोला। वही लड़का था।
"यहां का टॉयलेट तो बहुत गंदा है। कोई और इंतजाम नहीं है क्या?" रमन ने उस लड़के से पूछा।
"जी, बाबू जी, यह टॉयलेट चोक है। काम नहीं करता। पेशाब आदि की हाजत महसूस हो, तो आप दरवाजे से निकलकर बाईं तरफ़ गलियारे में चले जाइएगा। वहां सब इंतजाम है। नहाने - धोने वास्ते चौबीसों घंटे पानी भी आता है। हां! पीने का पानी एक जग में कम पड़े, तो नीचे काउंटर के बगल में ही फ़िल्टर लगा है, आप वहां जाकर साफ़ पानी भर लेना। " कहते वो लड़का साथ लाए पानी से भरा स्टील जग और एक खाली गिलास, वहीं टेबल पर रख कर चला गया। उसके जाते ही रमन ने जब दरवाजा बन्द किया, तो उसकी निगाह दरवाजे के पीछे लगे आइने पर गई। आइना धुंधलाया - सा था, जिसे हल्के हाथों पोंछने पर उसे अपने चेहरे पर उग आई हल्की दाढ़ी भी दिखी। सुबह शेव भी करना होगा। यही सोचते वापस बिस्तर पर आकर वह सोने की कोशिश करने लगा।

रमन अभी नई नौकरी, पोस्टिंग की नई जगह, वहां के लोगों, अपने काम आदि के बारे में सोच ही रहा था कि, दरवाजे पर फिर कुछ हलचल सी मालूम हुई। उसके मन में कुछ आशंका सी भी हुई। इस बार वो आहिस्ते उठकर दरवाजे तक आया। तभी दरवाजे पर एक हल्की दस्तक हुई।

"कौन है?" इस बार रमन ने हिम्मत करके तनिक तेज और कड़कदार आवाज में पूछा।

"चौकीदार हूँ बाबू जी। " आवाज सुनकर रमन के मन में अजीब सी आशंका हुई। उसने दरवाजे में ही उभर आयीं दरारों से झांक कर देखा। दूसरी तरफ उसे वहां कोई चौकीदार नहीं दिखाई दिया। शायदआगे बढ़ गया हो? पर बरामदे में ही उसे दो लम्बे-लम्बे दढ़ियल से आदमी खड़े, धीमें-धीमें कुछ बतियाते दिखे। पता नहीं क्यों, उनके हाव-भाव देख कर रमन का मन अनजान भय और आशंका से भर उठा। वैसे तो वो पुनः बिस्तर पर आकर लेट गया, परन्तु संयत नहीं हो पा रहा था। अनजान मुसाफिरों संग गाहे - बगाहे लूटपाट या आतंक की ढ़ेरों सुनी - सुनाई घटनाएं उसके दिलो - दिमाग में दस्तक देने लगीं। रमन अजीब उलझन में था, और घुटन भी महसूस कर रहा था।

फिर कुछ सोचउसने अचानक ही उस होटल को छोड़ने का निर्णय लिया। अगले ही पल वो अपनी चादर, शॉल आदि बैग में ठूंसते, दरवाजे पर ताला लगाते, नीचे उतर कर काउण्टर के सामने आ खड़ा हुआ। काउण्टर पर बैठा वो बूढ़ा आदमी अभी भी जग रहा था, और बीड़ी पी रहा था।

"क्या हुआ बाबू जी? कहीं जाना है क्या..?" उसने रमन को यूं अचानक, बैग सहित सामने खड़े देख कर पूछा।

"हांमुझे अभी-अभी अचानक याद आया। कल दिल्ली में सुबह - सुबह मेरा एक इण्टरव्यू है। मुझे अभी रात वाली बस से निकलना होगा। मैं ये होटल छोड़ रहा हूँ। " पता नहीं कहां से रमन के अन्तर्मन, शायद छठी-इन्द्रिय इसी को कहते हों?, ने पुनः झूठ का सहारा लेने का परामर्श दिया, और उसने फौरन ही उससे झूठ-मूठ का कह दिया। बहरहालवो किसी भी बहाने वहां से निकलना चाहता था।

"पर हम आपके पैसे वापस नहीं कर सकते?"
"कोई बात नहींमैं समझ सकता हूँ। ये रही आपकी चाभी। "

"आप इस रजिस्टर में अपना 'चेक-ऑउट टाइम' डाल दीजिए। " ये कहते उस बूढ़े आदमी ने अपना रजिस्टर रमन की ओर बढ़ा दिया। इसी बीच वो दोनों लम्बे दढ़ियल से दिखते आदमी भी रमन के बगल से होकर गुजरते, होटल से बाहर जाते दिखे, और मुख्य-मार्ग पर थोड़ी दूर आगे जाकर अंधेरे में कहीं गुम हो गये।

रमन अभी भी खुद को प्रकृतिस्थ महसूस नहीं कर रहा था। शायदअनजान जगह, या कम उम्र और जीवनानुभव की कमीवश ऐसा हो?

खैरहोटल छोड़ने के बाद, अब उसके पास बस-अड्डे की तरफ बढ़ने, और उस बस-अड्डे पर ही रात बिताने के अलावा और कोई चारा नहीं था। कुछ ही पल में वो एक बार फिर उसी बस-अड्डे पर आ गया था। अब वहां इक्का-दुक्का लोग ही फर्श पर लेटे दिख रहे थे। मुसाफिरों की चहल-पहल भी बन्द हो गयी थी। मन्द-मन्द, परन्तु सुहावनी हवा चल रही थी। बस-अड्डे का माहौल लगभग शान्त था, सिवाय बीच-बीच में बस-अड्डे के पास वाले ढ़ाबे से किसी लड़के के'चाय-चाय'की आवाज लगाने के।

रमन अब सोने के लिए, बस-अड्डे पर कोई मुफीद जगह तलाश ही रहा था कि अचानक उसकी निगाह, टिकट-खिड़की के बगल स्थित उसी बेंच पर चली गयी, जिसे वो थोड़ी देर पहले उपेक्षित छोड़ गया था। वो बेंच अभी भी खाली पड़ी थी। शायदउसके आने के इन्तजार में! अनजाने में हम जिनकी उपेक्षा कर देते हैं, कभी - कभी वहीं पनाह मिलती है। सोचते हुएरमन ने उस खाली बेंच को भरपूरप्यार भरी नजरों से देखा। बेंच को अभी भी खाली देखकर, उसे उस पर असीम प्यार भाव उमड़ आया, और रात बिताने की गरजवश वो उस 'खाली बेंच' की ओर बढ़ गया।

"अंकल जी, क्या टाइम हो रहा है?" बेंच पर बैठे रमन के सामने से गुजरते एक लड़के ने उसकी तन्द्रा भंग की थी। वो अचानक फ्लैश-बैक से वापस आया।

"साढ़े तीन बजे हैं। " रमन ने कलाई घड़ी देखते उस लड़के को टाइम बताया। रमन को यहां बेंच पर बैठे-बैठे लगभग डेढ़ घण्टे से भी ज्यादा हो गये थे। अब तक तो बड़े-साहब भी लण्च से वापस आ गये होंगे! उम्मीद है अब तक उसका ट्रॉन्सफर-लेटर भी तैयार हो गया होगा! यही सोचउसने फुटपाथ से खरीदी उस किताब को झट बन्द करते, किताब के मुखपष्ठ को एक बार फिर से गौर से निहारते, तनिक मुस्कुराते, उसे बगल में दबाए, वो वापस मुख्यालय की ओर जल्दी-जल्दी बढ़ने लगा।

¤¤¤

माँ! माँ! में भेद!

लघु कथा:- छगन लाल व्यास

आज उसकी माँ पूर्व समझौते के तहत छोटे भाई के पास से उसके वहाँ आ रही थी। वह अति प्रसन्न था कि माँ की सेवा का उसे सुअवसर प्राप्त होगा। दूसरी तरफ उसकी पत्नी बड़बड़ा रही थीं-'यहाँ आकर उसकी केवल प्रशंसा करेंगी -कि उसने ऐसे रखा!उसकी पत्नी एक पल भी मेरे से दूर नहीं खिसकी!मुझे पूछकर और मेरे पसंद की सदैव सब्जी बनाकर एक एक गरमागरम रोटी परोसते हुए मेरी खूब सेवा की!मुझे तनिक भी कष्ट नहीं होने दिया, उन दोनों की कोई होड़ ही नहीं!"

जब वह हथेली के छाले की तरह रखती है तब यहाँ क्या पड़ा है!पड़ी रहो वहीं!यहॉ क्यों आ रही हो?वह लगातार बोल रही थीं।

लेकिन। इस महीने हमारी बारी है तो वह आयेंगी ही। कल वहीं चल बसे तो सभी को शक होंगा कि माँ ने सब वसीयत उसी को दे दी होंगी।

किसे चाहिए उसका एक पैसा भी!मैंने तो उस दिन भी कहा था और आज भी कह रही हूँ कि जो भी इनकी सेवा कर सके वह खुशी-खुशी ले जा सकता हैं। मेरे से उनके नखरे नहीं उठाये जा सकते है!मैं तो स्वयं भी बीमार!

मैं करूंगा सेवा। मेरी माँ है। कहता हुआ वह माँ को लेने रेलवे स्टेशन की तरफ़ रवाना हुआ।

उधर वह 'सिरदर्द'का बहाना बनाकर सो गयी। माँ का आगमन उसे तनिक भी नहीं सुहा रहा था। माँ इस बात को तुरंत समझ गयी लेकिन येन केन प्रकारेण समय पूर्ण कर दूसरे बेटे के घर की तरफ़ विदा हुई और उसके जी में जी आया।

हफ्ते भर से ही पत्नी की माँ का फोन आया- कि उसे बेटे व बहुएं बात बात पर डांटती हैं। मैं बड़ी दुखी हूँ।

माँ!तू मेरे पास आ जा। मैं व ये आपकी सेवा करेंगे।

आज उसकी माँ आ रही थीं। उसका मन बाग बाग हो रहा था। उसने अपने पति से कहा-'मेरी माँ को लेने आप शाम वाली बस पर जाना। '

आज तो साहब आवश्यक मीटिंग लेंगे अतः हो सकता है, समय नहीं मिले।

आप साहब की चमचागिरी में ही पड़े रहना। मैं खुद चली जाऊँगी। उसने तपते हुए कहा।

माँ के आने पर वह चौबीसों घंटे उसके इर्दगिर्द!उसके मुँह में मुँह डालकर बातें ही बातें!भाइयो-भाभियों की बुराइयों की बरखा सुन सुन दोनों खुश!माँ की सेवा ही उसका परम् धर्म। उसके पसंद की सब्जी-रोटी और घूमना-फिरना!

आदमी जब कभी इस सेवा पर ताना कसता वह आग-बबूला हो उठती। वह समझ रहा था -माँ। माँ में भेद।

¤¤¤

ग़ज़लें

ग़ज़ल:- नवीन माथुर पंचोली

1

बात नहीं हैरानी की।
अक़्सर जीत जवानी की।

सीधे दिखने वालों की,
आदत है शैतानी की।

जब तक बचपन ठहरा है,
फ़ितरत है नादानी की।

दिल का हर जज़्बा अपना,
ताकत है आसानी की।

चिंता जतला देती है,
सलवट इक पेशानी की।

रखती हैं थोथे मतलब,
रस्में सब बेमानी की।

2

जब कभी भी लगाम दूँगा तुझे।
चाल अपनी तमाम दूँगा तुझे।

मैं लड़ूँगा यहाँ अर्जुन की तरह,
जीत का एहतराम दूँगा तुझे।

देखकर दिल ख़ुशी से झूम उठे,
कोई ऐसा ईनाम दूँगा तुझे।

जब मिलेगा कहीं सफ़र में मुझे,
पास रुककर सलाम दूँगा तुझे।

और पहले कभी मिला न सुना,
एक ऐसा पयाम दूँगा तुझे।

3

आसमाँ को झुकाना चाहते हैं।
इल्म अपना जताना चाहते हैं।

धूप , पानी, हवा से दूर जाकर,
चाँद पर घर बनाना चाहते हैं।

इस जहाँ से अलग और अपनी,
एक दुनियाँ बसाना चाहते हैं।

हो इरादे सभी पूरे उन्हीं के,
बात अपनी मनाना चाहते हैं।

ओढ़कर भाव नकली, चेहरे पर,
रौब अपना जमाना चाहते हैं।

4

सवालों के जवाब चाहिए थे।
कहाँ हमको हिसाब चाहिए थे।

रही थी साथ जब ख़ुशियाँ हमारी,
कहाँ फिर वो ख़िताब चाहिए थे।

चरागों से हुआ मकान रोशन,
हमें कब माहताब चाहिए थे।

रिवायत रात की बता-जताकर,
कहाँ नींदों को ख़ाब चाहिए थे।

सजाया था हसीं चेहरा अग़र तो,
हमें थोड़ी नक़ाब चाहिए थे।

5

वक़्त मिला है जितना कम।
उतनी फुर्सत रक्खे हम।

हारे भी डरकर ख़ुद से,
जीते भी हम ख़ुद के दम।

आवाजें इन साँसों की,
जैसे पायल की छम छम।

जैसी मन की मस्ती है,
वैसा है तन का आलम।

ख़ुशियाँ देखी जब सबकी,
भूल गए हम अपना ग़म।

छलकी उतनी ही आँखें ,
जितनी है भीतर से नम।

दीपक की लाचारी है,
अपने ही नीचे का तम।

¤¤¤

खोया दिल

कविता:- वंदना झा

आई बरस, वर्षा की बहार,
मन ने प्रकृति से किया प्यार।
रूठता मनाता सूरज को घन ,
आनंद से अल्हादित है मन।

धिनक-धिंन बज रहे ज्यों ढाल ,
नाचते मयूर फैला पंख विशाल।
हरियाली ने किया हरित पान,
धरती ने किया हरा श्रृंगार।

दम-दम -दमकती दामिनी,
बादल कर रहे गीत गान।
फूल- पत्तों की सुंदर रंगोली,
तपती धरती पर आ गई है जान।

खो गया दिल देख बहार,
ढूंढूं मैं प्रकृति में दिन- रात।
बादलों के झुंड चल रहे ऐसे,
बैठ उन पर निकल जाऊं पार।

बहती नदियों की कल-कल धार,
उमड़ती-धूमडती ढूंढती किनार।
बिजली की चमक से चम- चम,
नाचती सी लगती नीर की धार।

¤¤¤

आदर्शों का ध्वज फहराएँ

गीत:- ज्ञानेन्द्र मोहन 'ज्ञान'

मनःपटल पर मार कुण्डली, बैठी हैं अगणित कुण्ठाएँ।
पूजन हित ये नहीं कदाचित, निष्ठा की खण्डित प्रतिमाएँ।

मस्त मगन हो निज वैभव में,
नाचे सुविधाभोगी काया।
नैतिकता को क्या समझेगी,
महिमामंडित कलुषित माया।

सतपथ को बाधित करती हैं, ये उन्मादी अभिलाषाएँ।

पगडण्डी को छोड़ उपज को,
कुचलेगी जब वैचारिकता।
निर्णय यदि निष्पक्ष न होंगे,
निश्चित भुगतेगी मानवता।

फिर सर्वेभवन्तु सुखिनः सी, फलित न होंगी कभी ऋचाएँ।

समता-समरसता के सुख में,
सुनते हैं सर्वस्व निहित है।
आयु नफरतों की छोटी है,

लेकिन प्रेम नहीं सीमित है।

द्वेष भाव की कारा तोड़ें, आदर्शों का ध्वज फहराएँ।

¤¤¤

हिन्दी लेखक परिवार
साहित्य एवं साहित्यकारों का एक मंच
साहित्य सुनने, पढ़ने एवम विचार करने के लिए
YouTube मंच
Instagram मंच
अनुभव पत्रिका
वेबसाईट
फेसबुक समूह
www.hindilekhak.com

कृत्रिम मेधा की मुस्कुराहट: खतरे की आहट

आलेख:- गुरमीत सिंह

नए गुलों की कशिश, बाग को महका रही है
ध्यान रखना, छिपे कांटों की आहट आ रही है

सूचनाओं से अर्जित ज्ञान ओर ज्ञान के गहन विश्लेषण से उपजा विज्ञान कोई नई घटना नहीं है। विज्ञान कोई पश्चिम की बपौती नहीं रही है। पृथक स्वरूप तथा नाम के साथ, सदियों पूर्व से भारत ने विज्ञान के पौधे को सींचा है, परंतु कालांतर में उत्पन्न विषम परिस्थितियों के कारण, इस विज्ञान के वृक्ष का विकास तथा प्रचार बाधित हुआ रहा। मंत्रों की शक्ति, ध्वनि का विज्ञान, मानव मनोविज्ञान, पंचतत्व की अवधारणा, यज्ञ तथा हवन के माध्यम से सकारात्मक ऊर्जाओं के विस्तार, योग तथा ध्यान साधना, इत्यादि अनेक विधाओं का विज्ञान भारत की देन है। भारत में उपजे विज्ञान की विशेषता यही रही कि, यह समस्त विधाएं, मानव के विकास, उत्थान तथा शांत जीवन शैली के लिए अत्यंत उपयोगी रहीं व आज भी हैं। इसका प्रमाण यही है कि, इन विधाओं पर पश्चिम में गहन विमर्श तथा शोध हो हो रहें हैं।

कृत्रिम मेधा क्या है?

कृत्रिम बुद्धिमत्ता की अवधारणा भी कोई नई विधा नहीं है। आज इसे यांत्रिकीय साधनों को मैनुअल मोड के स्थान पर ऑटो मोड पर निर्देशित तथा परिचालन करने के कौशल के रूप में देखा जा रहा है, परंतु सदियों पूर्व मंत्रों की ध्वनि तरंगों से आस्तित्व में विद्यमान डिवाइन प्राण ऊर्जा से निर्जीव प्राकृतिक उत्पादों को जीवंत कर सीधे आस्तित्व से जुड़ जाने की विधा आज भी वैज्ञानिकों तथा शोधकर्ताओं के लिए हैरानी का विषय है। मानव निर्मित यंत्रों के दूरस्थ निर्देशों से परिचालन की विधा, मुख्यत: टेलीफोन तथा वायुयानों के विकास के साथ प्रारंभ हुई थी, जब विद्युत चुम्बकीय तरंगों के माध्यम से निर्देशों को डीकोड कर यंत्रों ने इनका पालन करना प्रारंभ किया। यद्यपि कृत्रिम मेधा अथवा आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, के माध्यम से यंत्रों का परिचालन जीवन के उत्तरोत्तर विकास में सहायक होने की अवधारणा का प्रतीक है, परंतु जीवन अमृत को पाने की होड़ तो सदियों से असुर शक्तियों में भी रही है। ऐसी स्थिति में विज्ञान का हर आविष्कार वरदान के साथ साथ अभिशाप के रूप में भी दृष्टिगोचर होता रहा है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता की उपादेयता

विज्ञान तथा यांत्रिकी के नवीन आविष्कारों तथा शोधों में कृत्रिम मेधा के कौशल ने जबरदस्त विकास तथा उन्नयन किया है। वर्तमान मानवीय जीवन की चुनौतियों के निराकरण में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस काफी मदद कर रहा है। विशेषकर अंतरिक्ष के ज्ञान, चिकित्सा क्षेत्र, परिवहन क्षेत्र तथा कंप्यूटर आधारित सभी कौशल, कृत्रिम मेधा के उपयोग से निरंतर लाभान्वित हो रहे हैं। ए आई अब जटिल गणितीय गणनाओं पर आधारित सभी यंत्रों का परिचालन, उड़ान आधारित सेवाएं, जटिल सर्जरी, रक्षा के क्षेत्र संबंधी उपकरण, शिक्षा का क्षेत्र, सार्वजनिक आवागमन तथा अधोसंरचनों का निर्माण तथा संधारण, पर्यावरण की मॉनिटरिंग, विविध प्रकार के प्रबंधन क्षेत्र में मील का पत्थर साबित हो रहा है।

ए आई के कष्ट

ए आई के सदुपयोग को दृष्टिगत रखा जाए, तो वर्तमान जीवन, पिछली सभी शताब्दियों की तुलना में सर्वाधिक सुगम हो चला है, लेकिन इस तकनीक के आसन्न खतरें भी उतने ही भयावह हो सकते हैं। वैज्ञानिक आविष्कारों की श्रंखला में कृत्रिम बुद्धिमत्ता से युक्त यंत्रों का मानवीय सभ्यता के ऊपर हावी होने के संकट को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता। वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में ए आई से सर्वाधिक खतरा अलगाववादी तथा आंतकवादी ताकतें उत्पन्न कर सकती हैं। यदि समग्र मानवीय हितों को देखा जाए तो, विगत दशकों से नवीन आविष्कार तथा कंप्यूटर जनित क्रांति का सर्वाधिक दुरुपयोग इन्हीं ताकतों के द्वारा किया जा रहा है। यह स्थिति ठीक वैसी ही है, जैसे समुद्र मंथन में प्राप्त अमृत की चाह ने असुर शक्तियों ने सृष्टि को विनाश की ओर धकेल दिया था। उस काल खंड में तो देव दानव संग्राम से उपजे विष को नीलकंठ महादेव ने निष्प्रभावी कर दिया था, पर आज ए आई रूपी अमृत के कलश की रक्षा कैसे होगी। दूसरा महत्वपूर्ण संकट डिजिटल डकैतों से है, जो पल भर में दूसरों की कमाई की डकैती कर अदृश्य हो जाते हैं, ओर इनको चिन्हित करना भी दुष्कर हो रहा है। अब डार्क वेब के औजार ओर अधिक शक्तिशाली होकर, सीधे साधे लोगों के जीवन में तनाव तथा सर्वाइवल संकट तक उत्पन्न कर सकते हैं। अनैतिकता तथा चरित्रहीनता की दुकानों से किए जा रहे ब्लैकमेलिंग के क्रिया कलापों को रोकना अधिक दुष्कर होता जाएगा। जीवन के गुलशन में ए आई की महक से सम्मोहित होकर, अगर इस आसन्न संकट को नोटिस न किया गया तो, इसके विषैले कंटक मानवता को छिन्न भिन्न कर देंगें। जिस पॉकेट मोबाइल से जीवन संचालन सुगम बनाया गया है, वही जीवन की सुख शांति को ध्वस्त भी करने की क्षमता से युक्त हो जाएगा।

दुरुपयोग प्रतिरोधी कृत्रिम मेधा का विकास

जेनरेटिव आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस अब वास्तव में वरदान के साथ साथ अभिशाप होने की कहावत को सार्थक करने की स्थिति में आ गया है। अब इसके दुरुपयोग को रोकने के लिए प्रतिरोधक अस्त्रों तथा शास्त्रों का विकास भी उसी गति से करना आवश्यक हो गया है, जिसकी मुख्य जवाबदारी नैतिक रूप से जेनरेटिव ए आई के विकासकर्ताओं तथा प्रमोटर्स के द्वारा वहन करने की आवश्यकता है। एंटी मिस यूज मिसाइल के विविध प्रकल्पों की तैयारी का समय आ गया है, ताकि दिलकश गुलों में व्याप्त विष को भी निष्प्रभावी किया जा सके। ए आई का सर्वाधिक दुरुपयोग ड्रोन से होने की आशंका है, जो विध्वंसकारी ताकतों के लिए एक मुफीद यंत्र है। युवाओं को भ्रमित कर, ब्रेन वाश कर, समूहों को बनाने तथा उनसे विध्वंस कराने की जटिल प्रक्रियाओं की तुलना में आत्मघाती ड्रोन का प्रयोग आसान है, जो कि ए आई के समावेश से कड़ी सुरक्षा में भी सेंध लगा सकता है। क्या ही अच्छा हो कि, इन विषयों पर कौशल रखने वाले उपक्रम, प्रतिरक्षक कंप्यूटर प्रोग्रामिंग का विकास कर ऐसे ड्रोन को वापस उनके प्रस्थान स्थल पर भेज दें, जिससे दुरुपयोग करने वाले स्वयं ही अपने अस्त्र से नष्ट हो जाएं। इसी प्रकार डिजिटल डकैती तथा मर्यादाहीन ब्लैकमेलर्स के खिलाफ भी कृत्रिम बुद्धिमत्ता से युक्त प्रणालियों का विकास किया जा सकता है।

ए आई को सीखने की अर्हता

कृत्रिम बुद्धिमत्ता को विष के रूप में प्रयोग करने की विधा को असुर शक्तियों तक पहुंचने से रोकने के लिए भी वैश्विक स्तर पर ए आई के सार्वजानिक प्रशिक्षण को बंद करते हुए, कड़ी प्रतिस्पर्धा तथा मानवीय गुणों की परीक्षा की अनिवार्यता के साथ ही, इन विधाओं को सीखने तथा समझने की अनुमति देना चाहिए। इंटरनेट के सर्च इंजिन तथा सेवा प्रदाता भी यदि स्व संज्ञान लेते हुए, ए आई से संबंधित गूढ़ विधाओं को सिखाने वाले ऑनलाइन उपक्रमों को रोक सकें, तो असुर शक्तियों को सीखने तथा समझने के ऑनलाइन अवसर भी समाप्त कर उन्हें हतोत्साहित किया जा सकेगा।

महकते गुलशन का आनंद तभी, कांटों से भी निजात मिल जाए।
कृत्रिम मेधा भी तभी उपयोगी, जब जीवन को इसका साथ मिल जाए।

¤¤¤

बच्चों तुम जरा बच के रहो

कविता:- डॉ. गोपाल प्रसाद 'निर्दोष'

बच्चों तुम जरा बच के रहो
आलस्य से और बहाने से
बच्चों तुम जरा बच के रहो
भरी दुपहरी खूब नहाने से
बच्चों तुम जरा बच के रहो
आलस्य से और बहाने से

पक्षी जग जाते हैं मुँह अँधेरे
तुम भी जागना सुबह सबेरे
पैसा - पानी बचा के रखना
बचना तुम पानी बहाने से
बच्चों तुम जरा बच के रहो
आलस्य से और बहाने से

बुरा वो भी जो बुरे के साथ है
झूठ बोलना भी गलत बात है
बुरा हो या झूठा हो ठीक नहीं
नाम होता है अच्छा कहाने से
बच्चों तुम जरा बच के रहो
आलस्य से और बहाने से

देश हमारा महान है जान लो
गाँधी औ कलाम से ज्ञान लो
सत्य के आगे नत हो जाओ
आनंद लो सब को हँसाने से
बच्चों तुम जरा बच के रहो
आलस्य से और बहाने से

खूब खेलना और खूब पढ़ना
जीवन में हरदम आगे बढ़ना
शिक्षा हो या संस्कार, सबमें
हरदम आगे रहना जमाने से
बच्चों तुम जरा बच के रहो
आलस्य से और बहाने से

¤¤¤

निर्जन सा दुःख

कहानी:- गोपाल माथुर

बारामदे के कोने में एक छोटा सा बल्ब टिमटिमा रहा था। उसकी झिझकती हुई सी रोशनी कठिनाई से हम तक पहुँच पा रही थी। बारामदे के खम्बों पर अनेक बेलें चढ़ी हुई थीं, जो रेंगते रेंगते छत तक जा पहुँची थीं। बाहर लॉन में उल्टी लगी लाइटें रात के अँधेरे में अपना फीका प्रकाश जमीन पर बिखेर रही थीं। आकाश में चाँद पता नहीं था कि नहीं, लेकिन जहाँ हम बैठे हुए थे, वहाँ से दिखाई नहीं दे रहा था।

“मुझे आश्चर्य है कि आपने रहने के लिए यह वीराना चुना है !” मैंने अपना गिलास उठाया और एक घूँट भरी। व्हिस्की का झनझनाता स्वाद मेरी जीभ से होता हुआ नीचे उतर गया था।

“मुझे अपना एकान्त बहुत पसंद है। “, कर्नल ने गिलास में आइस बॉक्स से कुछ क्यूब्स डालते हुए कहा, “यह सवाल नहीं करता। बल्कि खुद को पहचानने में मदद ही करता है। ”

“लेकिन आदमी आखिर कब तक अकेले रह सकता है !” मेरा संशय अपने संदेहों की पोटली के साथ मुँह बाये खड़ा हुआ था। कुछ चीजों को मैं जानतसा तो था, पर खुद से परे रखने का प्रयास किया करता था। जानता था कि वे मेरे जीवन को असहज बना सकती हैं।

“जब तक वह रहना चाहे। एकान्त दुनिया के रास्ते बंद नहीं करता। वह आपको एक साथ दो दुनियाओं में होने का अवसर देता है। ” कर्नल ने अपने ठंडे गिलास पर उग आईं पानी की बूँदों पर अँगुली से एक छोटी सी लकीर खींची और सिप भरा।
“दो दुनिया?”

“एक वह, जिसमें आप होते हैं, और एक वह, जिसे आप अपने भीतर लिए चलते हैं। ” उन्होने पापड़ का एक टुकड़ा उठाते हुए कहा, “आप जब मन चाहे, एक दुनिया से दूसरी में जा सकते हैं और किसी को पता भी नहीं चलता। ”

मुझे उनकी बात उतनी विचित्र नहीं लगी, जितना उसे कहने का तरीका। लगा, जैसे कोई खेल हो, जिसे वे अकेले खेला करते हैं, जिसमें न जीत थी, न हार, लेकिन उसका खेला जाना अनिवार्य था। पहली बार मुझे उनके चारों ओर एक रहस्यमय घेरा सा महसूस हुआ था। वे उस घेरे में बिल्कुल शांत बैठे हुए थे, जैसे वह रहस्यमयता उनके जीवन का एक ऐसा हिस्सा हो, जिसे अब उन्होंने महसूस करना बंद कर दिया हो।

कुछ देर खामोशी छाई रही। वह संवादों की अनुपस्थिति से उभरी थी। किन्तु इसके बाद भी ऐसा लग नहीं रहा था कि हम खामोश बैठे हों। सामने दीवार पर एक छिपकली एक कीड़े पर घात लगाए बैठी हुई थी। मैंने वहाँ से अपनी नजरें हटा लीं। मैं किसी को भी शिकार करते हुए नहीं देख सकता।

फिर बिना किसी भूमिका के वे अपने सेना के दिनों के बारे में बताने लगे। सेना का अनुशासन, लड़ाइयाँ, सीमा पर होने वाली छुटपुट वारदातें। अनुमान लगा पाना कठिन था कि वे अपने उस अतीत के बारे में बता रहे थे, जो अब मृत था कि उस अतीत के बारे में, जो अब भी उनमें जीवित था। वे मुझे एक ऐसे व्यक्ति की तरह लगे, जो वर्तमान और अतीत की दहलीज पर खड़ा हुआ था।

“और यह कब हुआ?” मैंने झिझकते हुए पूछा। मेरा संकेत उनके

दायें पाँव की ओर था। वहाँ आर्टीफीशियल पाँव लगा हुआ था। "वे लड़ाई के दिन नहीं थे, लेकिन जब तनाव के दिन हों, तब भी सीमा पर हल्की फुल्की गोलाबारी चलती ही रहती है।। एक रात, जब मैं अपने सिपाहियों के साथ गश्त पर था, एक गोला ठीक हमारे पास आकर फटा। दो सिपाही घायल हुए और मेरे इस पाँव के चिथड़े उड़ गए। डॉक्टर्स को इसे काटना पड़ा। " उन्होंने कुछ ऐसे कहा, जैसे वे अपनी नहीं, किसी और की कहानी सुना रहे हों। मैं चुपचाप उन्हें सुन रहा था।

"फिर मैं सेना के किसी लायक नहीं रह गया था। मुझे पूरे सम्मान के साथ विदा कर दिया गया। सरकार ने मुझे पेट्रोल पंप ऑफर किया था, पर मैंने यहाँ जंगलात में यह जमीन लेना पसंद किया शहर से दूर एकान्त में, जहाँ मैं अपने साथ अपने तरीके से जी सकता हूँ।। आपने देखा ही होगा, मैंने अमरूद का बड़ा सा बगीचा लगा रखा है, जो मुझे व्यस्त रखता है। "

"और यह मकान?"
"यह पहले से ही था। पता नहीं किसका है ! मैंने बस इसे रहने लायक बनाया है। "

"बहुत सुन्दर है। कोई कल्पना भी नहीं कर सकता कि जंगल में इतना आकर्षक घर भी हो सकता है। "
कुछ देर खामोशी छाई रही। सहसा वे अपनी अपनी दुनिया में चले गए थे, बिना मुझे कुछ बताए। उनका एकांत उन्हें अपने दायरे में खींच कर ले गया था। शायद वे वहाँ जाना पसंद भी करते थे। मैंने ही मौन तोड़ा, "आपने बंगले की बाण्डरी पर गुलमोहर का पेड़ भी लगा रखा है।। आपको यह पेड़ पसंद है?"

"मुझे नहीं, मेरी पत्नी को बहुत पसंद हैं। पेड़ के दहकते लाला फूल उसे बहुत अच्छे लगते हैं। इस पेड़ की छांव में बैठना भी उसे अच्छा लगता है। उसे लगता है, जैसे वह किसी बुजुर्ग की छांव में बैठी हो" उन्होंने धीरे से कहा, जैसे वे अपनी नहीं, किसी दूसरे की पत्नी के बारे में बोल रहे हों।

"मुझे भी गुलमोहर पसंद है। " मैंने कहा, "विषेशकर जब वह फूलों से लकदक होता है। "

"आप एक पैग और लेना पसंद करेंगे?" उन्होंने अपना गिलास खाली करते हुए पूछा।

मैंने बिना कुछ कहे अपना गिलास उनकी ओर बढ़ा दिया। उन्होंने सधे हाथों से पैग बनाए। मैं उन्हें देखता रहा, लगा जैसे कोई फिल्म चल रही हो, जिसके वे एक महत्वपूर्ण किरदार हों।
"आप कहीं आते जाते नहीं?" मैंने यूँ ही पूछा। यह एक व्यर्थ सा प्रश्न था। कोई व्यक्ति बिना कहीं आए जाए भला कैसे रह सकता है !
"ज्यादा नहीं। हर इतवार सामान लेने मार्केट जाना होता है। वहीं लोगों से मुलाकात भी हो जाती है। सुनीता की भी आउटिंग हो जाती है। "
"सुनीता?"
"मेरी पत्नी। मैंने बताया न, कि मैं यहाँ अपनी पत्नी के साथ रहता हूँ। " उन्होंने सिर घुमाया और आवाज लगाई, "सुनीता।। "

थोड़ी देर सन्नाटा पसरा रहा। जैसे दूसरी ओर किसी ने सुना ही नहीं हो। वह, जिसका नाम सुनीता था, आवाज के उस तरफ थी और हम उसे देख नहीं सकते थे।। लेकिन यह नाम मेरे मन में ठहर गया था। तारे निकल आए थे पर चाँद कहीं दिखाई नहीं दे रहा था। यूँ तो आकाश साफ था, लेकिन एक मैला सा उजाला वहाँ ठिठका हुआ था, मानो उसने डूबते सूरज से कुछ आलोक चुरा लिया हो। यह चुराया हुआ आलोक ही अब उसका वैभव बन गया था। जब कोई पक्षी पेड़ों में फड़फड़ाता, खामोशी को बेधती हुई आवाज गूँज जाया करती थी। कोई उस पर घ्यान नहीं देता, न मैं और न ही वे।। रही बात सुनीता की, वह अब तक आई नहीं थी।

"वह किचिन में होगी। डिनर बनवा रही होगी। " उन्होंने अनुमान लगाया, जो सही भी हो सकता था। आखिर वे उसके पति थे ! एक उम्र साथ रहो, तो पति पत्नी एक दूसरे की कितनी ही बातें जान जाते हैं। मैंने अपना गिलास हाथ में उठाया और एक लम्बा सिप लिया। व्हिस्की ठंडी और स्ट्रोंग थी। वह मेरे गले से होते हुए भीतर उतर गई थी। उसकी उतरती आग मैं महसूस कर पा रहा था।

"मैंने आकर नाहक आपको परेशान कर दिया है। " मैंने शिष्टाचारवश कहा, हालांकि मैं आया नहीं था, उन्हीं के द्वारा बुलाया गया था। जंगल में पोस्टिंग होने के बाद यह पहला अवसर था, जब मैं किसी के घर यूँ खाने पर निमन्त्रित था।

"अब तक यहाँ जंगलात के जितने भी ऑफिसर आये हैं, मैंने सभी से परिचय जोड़ने का प्रयास किया है। फिर यहाँ दूर दूर तक और कोई है भी तो नहीं, जिससे बात की जाय !"
"पर आपको तो अपना एकांत पसंद है !"
"सवाल केवल मेरी पसंद नापसंद का नहीं है। सुनीता का भी तो है।

मुझे उसका भी तो ख्याल रखना पड़ता है। किसी से बात कर के वह दुनिया से जुड़ी रहती है। ”

वे उस सुनीता की बात कर रहे थे, जो उनकी आवाज सुनकर अभी तक आई नहीं थी। इस बीच उन्होंने भी अपना गिलास उठा लिया था और सिप लेने लगे थे। मुझे उनके चेहरे पर कोई उलझन नजर नहीं आई। बल्कि वे मुझे एक ऐसे व्यक्ति की तरह लगे, जिसे अपने अकेलेपन में भी खुश रहने का वरदान जन्म से ही मिल जाता है।
“रात को आपको यहाँ डर नहीं लगता?” मैंने पूछा।
“डर? कैसा डर? फौजी हूँ, बन्दूक साथ ही रखता हूँ। ”
“मेरा मतलब यह नहीं था।। रात-बिरात कुछ हो जाए, तो आस पास कोई अच्छा अस्पताल भी नहीं है। ”

वे हँस दिए, “अभी उम्र इतनी भी नहीं हुई कि इन बातों की चिन्ता करूँ। ” फिर उन्होंने अपने पाँव की ओर संकेत कर कहा, “और इसे अब किसी डॉक्टर की जरूरत है नहीं। ”

तभी बारामदे का दरवाजा खुलने की आवाज आई। एक महिला हमारी ओर आ रही थी। वहाँ उस समय इतना उजाला नहीं था कि मैं उसका चेहरा ठीक से देख पाता। फिर उसने अपना सिर साड़ी से ढक भी रखा था। उसके आने के व्यवधान से हमारे संवाद स्वतः ही ठहर गए थे।
“यह सुनीता है, मेरी पत्नी। और सुनीता, ये हैं मिस्टर योगेश, जंगल के नए फोरेस्टर। ”

“नमस्ते।। ” उसने दोनों हाथ जोड़ कर कहा और वहीं रखी एक कुर्सी पर बैठ गई।
तभी एक पक्षी जोर से चींखा और उसके पंखों के फड़फड़ाने की आवाजें हम भी चली आईं थीं। हम सब चौंक कर उस ओर देखने लगे थे।

चौंक मैं भी गया था, लेकिन पक्षी की आवाज से नहीं, बल्कि उस आवाज से, जो अभी अभी मैंने सुनी थी। वह सुनीता की आवाज थी। यह वही आवाज थी, जिसे बरसों पहले में एक मोड़ पर मुझसे बिछुड़ गई थी। मैं नहीं जानता था कि एक दिन बाईस बरस बाद वह मुझे इस तरह अचानक फिर सुनाई देगी। मैंने सुनीता की ओर देखा। बारामदे से आता हुआ प्रकाश उसके चेहरे पर सीधा पड़ रहा था। वह सिर झुकाए हुए बैठी हुई थी। यह वही थी, साड़ी में लिपटी हुई, उदास और खामोश। मैं सहसा सुन्न पड़ गया था।

“नमस्ते।। ” कठिनाई से मैं उसके अभिवादन का उत्तर दे पाया था। कर्नल ने ही संवाद आगे बढ़ाए, “ये यहाँ बोर होती रहती हैं। शहर में इनकी कोई सहेली भी नहीं है, जहाँ ये जा सकें। जब सामान लेने जाना होता है, तभी हम बाहर निकल पाते हैं। ”

“हाँ इतनी सुनसान जगह रहते रहते कोई भी आदमी ऊब जाए !” मैंने कठिनाई से कहा। “मैंने कई बार इनसे कहा कि अपनी माँ के घर हो आओ, पर ये वहाँ भी नहीं जातीं।। अब आप ही बताइये, क्या किया जाए?” कर्नल ने सिप लेते हुए कहा।

मेरा सारा ध्यान सुनीता की ओर लगा हुआ था। उनकी बात ठीक से सुन भी नहीं पाया। लेकिन यह अवश्य लगा, कि कुछ कहना आवश्यक है।

“आप यहाँ कब से रह रहे हैं?” मैंने पूछा।
“सेना के बाद से यहीं रह रहे हैं। ” कर्नल ने संक्षिप्त सा उत्तर दिया।
“और फैमिली।। मेरा मतलब बच्चे?”
“एक लड़का है, वह विंग कमाण्डर है। ”
“शादी हो गई उसकी?”
“नहीं, अभी नहीं हुई। शायद जल्दी ही हो जाए !”
“जल्दी कर दीजिए। घर में बहु आने से रौनक भी हो जाएगी और आप दोनों को एक मकसद भी मिल जाएगा। ”
“पर वह माने तब न !”
इन सारे संवादों के बीच सुनीता चुप बैठी रही थी, जैसे अनावश्यक रूप से बिठा दी गई हो, उसका काम केवल अपनी उपस्थिति दर्ज करना भर हो और संवादों को सुनना भी। मैं बेचैनी महसूस करने लगा था। अनेक सवाल सिर उठाने लगे थे।। क्या सुनीता अपनी इस स्थिति से खुश है? क्या उसने स्वयं कर्नल को यह एकांत चुनने में मदद की थी? क्या वह खुद अपने लिए एकांत चाहती थी?
मैंने अपने डिंªक की अंतिम सिप ली। वह अभी भी ठंडी थी। एक बेहद शीतल अंगारा सा देह में उतर गया था।। मैं महसूस कर रहा था, मानों मैंने एक भी घूँट नहीं पी हो। सारा सुरूर सुनीता की अनायास उपस्थिति के साथ ही उतर गया था। मैंने कभी स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थी कि जीवन में अब कभी मैं उससे मिल पाऊँगा। मैंने स्वयं को सँभाला। एक बार फिर मैं अपने पुराने दिनों में नहीं लौटना चाहता था। जो घटना घट रही थी, उसे सावधानी से सँभाले जाना अधिक आवश्यक था। रात के अँधेरे में वैसे भी कुछ स्पष्ट नहीं था।। वीराने में वह बंगला, वहाँ पसरी खामोशी, बारामदे में टिमटिमाटा हल्का पीला बल्ब, घुटी हुई सी रौशनी, बिना चाँद का आकाश, पेड़ों पर चीखते पाखी, शराब।। और बीता हुआ कल।

सहसा मुझे लगा, जैसे मैं किसी उदास फिल्म के फ्रेम में चला आया होऊँ।

तभी कर्नल की आवाज सुनाई दी, "डिनर में कितनी देर है?"
"तैयार है। " सुनीता ने कहा। यह पहला पूरा वाक्य था, जो अब तक मैं सुन पाया था।
"चलें?" उन्होंने मुझसे पूछा।
"चलिए। "
"आप और लेंगे?"
"जी नहीं। थैंक्स। "
इस बीच सुनीता उठ कर खड़ी हो गई थी। यह उसके अन्दर जाकर डिनर सर्व कराने का संकेत था। लेकिन कर्नल वैसे ही बैठे रहे। मैं भी उठ नहीं पाया। जब सुनीता ने देखा कि हम उसके साथ अन्दर नहीं जा रहे थे, वह चुपचाप चली गई।

उसके जाते ही वही पक्षी एक बार फिर जोर से चीखा। उसकी चीख एक दुःख के सागर सी हवा में बिखर गई थी, जो उतना विचलित नहीं कर रही थी, जितना कि खरोंच रही थी। उसे क्या दुःख था, यह कभी कोई जान नहीं पाएगा।

कर्नल ने अपने गिलास में एक पैग और बनाया। पीने से पहले उसे अपने गालों पर कुछ यूँ लगाया, मानो वे पीने नहीं, पीने के असमंजस की सीमा पर खड़े निर्णय नहीं कर पा रहे हों कि पी जाए अथवा नहीं ! लेकिन यह दुविधा अधिक देर तक रही नहीं। उन्होंने एक बड़ी सी सिप ली।

"कई बार मुझे लगता है कि इस एकांत में आकर मैंने सुनीता के साथ बड़ा गलत किया है।। कुम्लहा सी गई है। उसकी उदासी का एकमात्र कारण मुझे तो यहाँ का यह वीराना ही लगता है। " कर्नल साहब ने धीरे से कहा। शायद यही वह बात थी, जो उन्हें मन ही मन साल रही थी।

उनका दुःख अब मुझ तक सरक आया था। सूखा, निर्जन सा दुःख, जो किसी अभाव के कारण नहीं, खुद अभाव से उपजा था। उन स्थितियों का अभाव, जो यदि होतीं, तो उस खाली जगह को भरा जा सकता था, जो उनके नहीं होने से उत्पन्न हो गई थी। यह एक विषम परिस्थिति थी, जिसकी जटिलता और उद्वेग अक्सर अवसाद का कारण बनते हैं।

पहली बार मुझे कर्नल कुछ हताश से दिखाई दिए। यह हताशा उनके अपने निर्णय का परिणाम थी। शायद ही कोई निर्णय ऐसा होता हो, जो कालजन्य होता हो। अधिकांश निर्णय समय सापेक्ष होते हैं। आज लिया गया निर्णय कालांतर में गलत भी सिद्ध हो सकता है।। शायद उनका संकेत इसी प्राकृतिक सत्य की ओर था। मैंने अपना गिलास स्वयं ही भरा, हांलाकि मैं मना कर चुका था। लेकिन एक सीमा के बाद यह सब कौन याद रखता है, "
क्या जंगल के इस वीराने में रहने के निर्णय में आपकी पत्नी की भी सहमति थी?"

वे चौंक गए, जैसे उनकी किसी दुःखती रग पर हाथ रख दिया हो। सहसा उन्होंने कोई उत्तर भी नहीं दिया। वे सोच की ऐसी दुनिया में चले गए थे, जहाँ किसी भी दूसरे का प्रवेश वर्जित था। दुनिया के भीतर की दुनिया, जिसके अपने नियम कायदे होते हैं या फिर शायद नहीं होते हैं। भीतर की यह दुनिया इन्सान खुद बनाता है और देह के साथ ले भी जाता है, बिना कोई निशान छोड़े।

"शायद उन दिनों उनके पास यह सब सोचने समझने का समय नहीं था। मेरी हाल ही में सर्जरी हुई थी और मुझे अपनी यह टाँग गवानी पड़ी थी। शायद उनकी पहली प्राथमिकता मेरा ध्यान रखना रही होगी और उन्होंने बिना सोचे इस जगह की सहमति दे दी होगी। " कुछ सोचते हुए वे बोले।

"हाँ, मैं समझ सकता हूँ। अनेक बार तात्कालिकता हम पर हावी हो जाती है और हम सुकून की तलाश में गलत निर्णय ले बैठते हैं। "
"आपका मतलब इस जगह का चुनाव मेरा गलत निर्णय था। "
"मैं आपकी दृष्टि से नहीं, आपकी पत्नी की बात कर रहा हूँ।। यदि स्थितियाँ सामान्य होतीं, तो कौन जाने वे क्या निर्णय लेतीं !" मैंने बात संभालते हुए कहा।

इस बार वे खीज उठे थे, "स्थितियाँ सामान्य होतीं तो यह जगह मुझे ऑफर ही नहीं हुई होती। तब इस एकांत को चुनने के निर्णय का प्रश्न ही नहीं उठता।। मैं आज भी सेना में काम कर रहा होता। "
इससे पहले कि हमारी बहस आगे बढ़ती, अन्दर से सुनीता की आवाज आई कि खाना लग गया था। मैंने मन ही मन सुनीता का आभार प्रकट किया। उसने अनजाने ही मुझे अवांछित बहस से बचा लिया था।

खड़े होते ही मुझे लगा कि मेरे पाँव ठीक से जमीन पर पड़ नहीं रहे हैं। यह इतनी देर से बैठे रहने के कारण नहीं, बल्कि उन ड्रिंक्स का असर था, जो मेरे भीतर उथल पुथल मचाए हुए थीं। कुछ क्षणों

बाद चेतना लौटी और मैंने स्वयं को संभाला। पहली बार मुझे लगा कि मैं कुछ ज्यादा ही पी गया था। पर मैंने पाया कि कर्नल अपनी पूरी सजगता के साथ बिना लड़खड़ाए चल रहे थे। यदि किसी को उनके अपाहिज होने का पहले से ही पता न हो, तो वह कभी उनकी लाचारी जान ही नहीं पाता। उनके ट्राउजर ने उनकी अक्षमता को छिपा लिया था।

पेड़ों पर पक्षी सोये हुए थे। वहाँ घनीभूत अँधेरे के अतिरिक्त और कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। हवा भी बहना भूलकर टहनियों पर ठिठक गई थी। सहसा विश्वास करना कठिन हो गया कि इस अँधेरे के पार कहीं मेरा रेस्ट हाउस होगा, जहाँ मुझे अपनी पोस्टिंग के ये दिन बिताने होंगे।। मैंने एकांत नहीं चुना था, वह तो बस अनायास ही मेरी झाली में आ गिरा था।

बारामदे के उस पार उनका बड़ा सा ड्रॉइंग रूम था और उसी से सटी डायनिंग स्पेस भी। ड्रॉइंग रूम का बड़ा सा झूमर अपने सम्पूर्ण वैभव के साथ दमक रहा था। अन्दर इतना उजाला होगा, यह मैंने नहीं सोचा था।

हम सीधे डायनिंग टेबिल पर जा बैठे। सुनीता वहाँ नहीं थी और उनका मुलाजिम बलराम ही खाना लगा रहा था। शानदार कटलरी सेट में खाना लेते हुए मुझे लगा, जैसे एक जोड़ी आँखें कहीं छिप कर मुझे देख रही हों। मैं असहज सा महसूस करने लगा था। खाना लेते हुए मेरे हाथ काँपने लगे थे।

खाना कैसा बना था, अब याद नहीं आ रहा। लेकिन यह याद है कि डायनिंग टेबिल पर औपचारिक बातों को छोड़कर कोई विशेष बात नहीं हुई थीं। हम लगभग चुप थे, जैसे ड्रिंक्स की तरह बातों का कोटा भी बाहर ही पूरा कर भीतर आए हों। पर भीतर ही भीतर कुछ न कुछ चला ही करता है। भले ही हम उसे अपनी जुबान तक नहीं लाते हों, पर संवादों का अनवरत सिलसिला कभी समाप्त नहीं होता।।
मेरे भीतर सुनीता उतर आई थी।
मुझे आश्चर्य हुआ कि कर्नल ने एक बार भी सुनीता को खाने के लिए नहीं बुलाया था। इसके बावजूद भी मुझे लगा कि भले ही वह वहाँ नहीं थी, पर शायद सर्वाधिक थी। अनुपस्थ उपस्थिति हमेशा गहरे तक सालती रहती है। उपस्थिति होने वाले का अनुपस्थिति होना एक त्रासद घटना सा बन जाता है।

“अब आप रेस्ट हाउस जाकर क्या करेंगे ! फिर आपके पाँव ठीक से पड़ भी नहीं रहे हैं, जीप कैसे चलाएँगे। बेहतर है, आज रात आप यहीं आराम कर लें। ” कर्नल साहब का आग्रह भरा स्वर मुझे अनुरोध कम और आदेश जैसा अधिक लगा।

मुझे ऐसे प्रस्ताव की कतई आशा नहीं थी। मेरे लिए यह अप्रत्याशित था। निर्णय लेने में मुझे समय लगा, “जी नहीं, मैं चला जाऊँगा। थैंक्स। ”
“रात के समय जंगल में आपको रिस्क नहीं उठाना चाहिए। ”
“मुझे आदत है। यही मेरी जॉब है। ”
“पर अभी आप इस जंगल को जानते नहीं हैं। कौन सा खतरा किस मोड़ पर खड़ा मिले, कोई नहीं जानता। ”
“आप निश्चिंत रहिए, जीप में राइफल हमेशा साथ रहती है। ”
वे उठ खड़े हुए, “जैसी आपकी मर्जी। ”
शायद यह मुझे विदा करने का संकेत था, “अब मैं भी चलूँगा। ड्रिंक्स एण्ड डिनर के लिए आपका शुक्रिया। ”
“मुझे खाना खाने के तुरंत बाद सोने की आदत है। अब मैं आपसे विदा चाहूँगा।। बलराम। ” उन्होंने आवाज लगाई।
वह दौड़ता हुआ आया।
“साहब को जीप तक छोड़ दो। ”

“जी नहीं, इसकी कोई जरूरत नहीं है। मैं चला जाऊँगा। गुड नाइट। ” मैंने उनसे हाथ मिलाया और बाहर निकल गया। बाहर आने से पहले मैंने इधर उधर सुनीता को देखने का प्रयास किया, पर वह कहीं दिखाई नहीं दी।

चाँद निकल आया था। पेड़ों के पीछे से उसका धुँधला सा अक्स दिखाई देने लगा था। जो हवा टहनियों पर ठिठकी हुई थी, अब आहिस्ता आहिस्ता बहने लगी थी। पक्षी अपने अपने घौंसलों में सो रहे थे और मैं अपने चारों ओर घनीभूत उदासी महसूस कर रहा था। महसूस हो रहा था कि यदि कोई तारा टूटे, तो मैं बदहवास सा उसके पीछे दूर तक दौड़ा चला जाऊँ यह घटना के अधूरेपन से उपजा दुःख था। कुछ था, जो घटने से रह गया था, कुछ कहा जाना था, जो अपने कहे जाने की प्रतीक्षा में मरने लगा था।

मैं जान गया था कि जो कुछ घटा, उससे अधिक महत्वपूर्ण वह था, जो घट नहीं सका था। पर क्या, इस पर ठीक ठीक अपनी अँगुली रख पाना कठिन था। कुछ घटनाएँ सम्वेदनाओं की छाया तले जन्म लेती हैं और तमाम उम्र शब्दों के लिए तरसती रहती हैं। कर्नल के निमन्त्रण के पार्श्व में जो अघटित रह गया था, अब वही सब यातना बन कर खरोंचने लगा था।

मैंने जीप पीछे की और मेन गेट की ओर मुड़ गया। जीप की रौशनी में मैंने देखा कि दरवाजा पहले से ही खुला हुआ था। दरवाजे के ठीक सामने एक रास्ता दूर तक सीधा चला गया था। दोनों ओर लगे पेड़ जीप की रौशनी में दिखने लगे थे। गुलमोहर भी लाइट में दमकने लगा था।

सहसा मुझे लगा, जैसे दरवाजे के एक ओर कोई खड़ा हो। मैं पहली नजर में ही पहचान गया था। वह सुनीता थी। उसने अपना चेहरा साड़ी से ढक रखा था। मुझे वह किसी प्रेतछाया की तरह लगी थी।
"तुम।। ?" मैंने जीप रोकते हुए कहा।
"पहले लाइट्स बंद करो। "
लाइट बंद होते ही अँधेरा छा गया। चाँद की रौशनी को घने पेड़ों ने रोक रखा था। अँधेरा इतना घना था कि खुद को भी पहचाना नहीं जा सकता था। उसी अँधेरे को पार कर सुनीता मुझ तक आई, जैसे अँधेरे में लिपटी अँधेरे की छाया हो। मैं उसका चेहरा साफ नहीं देख सका था, लेकिन इसकी कोई आवश्यकता थी भी नहीं। उसे पहचानने के लिए हल्की सी प्रोफाइल ही पर्याप्त थी। बल्कि कई बार तो प्रोफाइल भी नहीं, उसकी उपस्थिति ही उसका होना उजागर कर देती थी।

"तुम यहाँ कब आए?" उसका धीमा स्वर मुझ तक आया, जैसे किसी चोर ने अपना चुराया हुआ सामान चुपके से अँधेरे में उछाल दिया हो।
"हाल ही में मेरी यहाँ पोस्टिंग हुई है। तुम कैसी हो?"
मेरी बात का उसने कोई उत्तर नहीं दिया। उसी धीमी आवाज में वह बोली, "जब तुम जीप से उतरे थे, मैं तभी तुम्हें पहचान गई थी। मुझे विश्वास नहीं हो रहा था। "
"विश्वास? कैसा विश्वास?"
"कभी सोचा नहीं था कि जिन्दगी में तुम्हें दुबारा देख पाऊँगी। "
"सोचा मैंने भी नहीं था। यह महज इत्तफाक है। "
"हमारा बिछुड़ना भी इत्तफाक ही था।। "
"हाँ, पर अब उन बातों को सोचने से क्या फायदा !"
"हाँ, उन्हें स्मृतियों में ही रहने दो। मैं यही कहने आई हूँ। "
मैं चुपचाप उसे सुनता रहा।
"बड़ी मुश्किल से मैंने स्वयं को संभाला है तुम आओगे, तो सब कुछ फिर से बिखर जाएगा।। यहाँ म
त आया करो। "
मैं चुप रहा।
"अब तुम जाओ। इसे हमारी अंतिम मुलाकात समझना। "
इससे पहले कि मैं कुछ कह पाता, वह बिजली सी तीव्रता के साथ अँधेरे में गायब हो गई। किसी पक्षी का क्रन्दन सुनाई दिया। अँधेरे में वह रो रहा था। उसकी रुलाई सुनने वाला वहाँ कोई नहीं था। अपने दुःख का वह इकलौता गवाह था।। और चाँद, जो हमारे अंतिम मिलन का मूक गवाह बना था, सहसा पेड़ों से निकल आया था। मैंने जीप स्टार्ट की और उसे कुछ दूर तक अँधेरे में ही चलाता रहा।

¤¤¤

कोहिनूर

लघुकथा:- डॉ. नीना छिब्बर

रीमा रसोई में खाना बना रही थी कि अचानक संगीतज्ञ बेटे रोहन के कमरे से धुन के साथ जो बोल कानों में पड़े तो एकबार तो विश्वास नहीं हुआ। कुछ भूले -बिसरे शब्द , सूखे गुलाब की पंखुड़ियां और सपने नमक, मिर्च, जीरे और घी के छौंक के बीच उभर गये। दौड़ के रोहन के कमरे की ओर गयी। अंदर से जो गीत धुन के साथ बुना जा रहा था वो उसका था। पर यह तथाकथित कचरा डायरी तो शादी के बाद स्टोर रूम में कहीं पटक दी गई थी फिर आज यह बाहर। तभी रोहन एक शब्द के उच्चारण को ग़लत गा रहा था। अनायास रीमा बंद आंखों भीगी आवाज में सही गाने लगी। ऑखें खुली तो रोहन जीर्ण शीर्ण डायरी को सीने से लगाए खड़ा था। माँ को कमर से पकड़ कर नाचने लगा और कह रहा था कि माँ कोहिनूर को कचरे में क्यों डाला। आप तो जीनियस हो। हर गीत दिल में उतरता है। हर भाव चित्र लिखित है। देखना हम "माँ बेटा' मिल कर संगीत की दुनिया में आग लगा देंगे।

पर रीमा ने डायरी उससे छीनी और कहा कि नहीं बेटा ऐसा मत करना। घर में प्रलय आ जाएगी। रोहन ने माँ को दृढ़ता से पकड़ा और डायरी को चूमते हुए कहा कि प्रलय नहीं प्रसिद्धि के प्रताप फूटेंगे माँ। यह कचरा नहीं कोहिनूर है।
¤¤¤

AI का प्रभाव और बदलती तकनीकी दुनिया में विद्यार्थियों के करियर का भविष्य

आलेख:- राजीव यादव

हम ऐसे युग में जी रहे हैं जहाँ तकनीक हर दिन कुछ नया रूप ले रही है। कभी कंप्यूटर का आना क्रांति थी, फिर इंटरनेट ने सब कुछ बदल दिया, और अब Artificial Intelligence (AI) — यानी कृत्रिम बुद्धिमत्ता — एक और नई क्रांति लेकर आया है।

AI अब केवल किसी मशीन या रोबोट की कहानी नहीं रह गई; यह हमारे जीवन का हिस्सा बन चुका है। जब हम मोबाइल में Siri या Google Assistant से बात करते हैं, Netflix या YouTube हमें पसंद के वीडियो सुझाता है, या Google Maps हमें रास्ता दिखाता है — यह सब AI की ही देन है।

इस बदलाव का सबसे बड़ा असर उन छात्रों पर पड़ने वाला है जो अभी 10वीं या 12वीं कक्षा में पढ़ रहे हैं। आने वाले 5 से 10 वर्षों में जब वे अपने करियर की शुरुआत करेंगे, तब की दुनिया आज से बिल्कुल अलग होगी — और उसमें AI एक केंद्रीय भूमिका निभाएगा।

AI का अर्थ और इसकी बढ़ती भूमिका

Artificial Intelligence का अर्थ है – मशीनों को ऐसा बनाना कि वे इंसानों की तरह सोचें, समझें और निर्णय लें।

यह केवल कंप्यूटर प्रोग्राम नहीं है, बल्कि एक ऐसा सिस्टम है जो खुद से सीख सकता है और समय के साथ और बेहतर हो सकता है।

AI के उपयोग के कुछ उदाहरण देखें:

शिक्षा में – अब AI आधारित प्लेटफ़ॉर्म जैसे Google Classroom, ChatGPT Education, और Edmentum छात्रों की सीखने की क्षमता के अनुसार Personalized Learning Plans तैयार करते हैं।

ये प्लेटफ़ॉर्म यह समझते हैं कि छात्र किस विषय में मज़बूत हैं और कहाँ सुधार की ज़रूरत है, फिर उसी के अनुसार उन्हें अभ्यास और मार्गदर्शन प्रदान करते हैं।

स्वास्थ्य क्षेत्र में – AI अब बीमारियों का निदान करने, रिपोर्ट विश्लेषण करने और सर्जरी में सहायता करने तक पहुंच चुका है।
कृषि में – सेंसर और AI मॉडल अब फसल की सेहत पहचानते हैं और किसानों को सही सलाह देते हैं।
बैंकिंग और बिज़नेस में– धोखाधड़ी की पहचान, ग्राहक सहायता और निवेश विश्लेषण में AI की भूमिका बढ़ती जा रही है।
यानि, कोई भी क्षेत्र अब AI से अछूता नहीं रह गया है।

करियर की दिशा पर AI का प्रभाव

AI के बढ़ते उपयोग से काम करने के तरीके ही नहीं, बल्कि करियर की परिभाषा भी बदल रही है।
कुछ पारंपरिक नौकरियाँ अब धीरे-धीरे घटेंगी, वहीं नई नौकरियाँ और पेशे तेज़ी से उभरेंगे।

वे नौकरियाँ जो कम होंगी:

डेटा एंट्री, टाइपिंग या रूटीन क्लेरिकल कार्य बुनियादी कस्टमर सपोर्ट या कॉल सेंटर के काम मैन्युअल रिपोर्टिंग या अकाउंटिंग जैसी दोहराई जाने वाली गतिविधियाँ वे करियर जो बढ़ेंगे:
AI और Machine Learning इंजीनियरिंग
Data Science और Big Data Analytics
Cyber Security
Robotics और Automation Design
AI-based Healthcare & Biotech Research
Digital Marketing और AI-Driven Content Creation
Education Technology (EdTech)
Sustainable Technology & Green AI

AI का प्रभाव हर उद्योग में अलग-अलग तरीके से दिखेगा। इसलिए आज के छात्रों को यह समझना होगा कि भविष्य की तैयारी सिर्फ किताबों से नहीं, बल्कि कौशल (Skills) से होगी।

विद्यार्थियों को क्या और कैसे तैयारी करनी चाहिए

1. AI और Digital Skills को सीखें

अब किसी भी क्षेत्र में डिजिटल साक्षरता (Digital Literacy) अनिवार्य हो गई है। छात्रों को Coding, Python, Machine Learning, Data Visualization, Cloud Computing जैसी स्किल्स का बेसिक ज्ञान ज़रूर लेना चाहिए।

उदाहरण के लिए: Google, Microsoft, IBM जैसे बड़े प्लेटफॉर्म मुफ्त या कम कीमत पर AI और Digital Learning Courses उपलब्ध कराते हैं।

2. STEM Education (Science, Technology, Engineering, Mathematics) पर ध्यान दें अगर आप विज्ञान के विद्यार्थी हैं तो ये चार क्षेत्र आपके भविष्य की नींव बन सकते हैं। इनसे जुड़े विषयों को समझना और प्रयोगात्मक दृष्टिकोण अपनाना ज़रूरी है।

3. Creativity और Critical Thinking विकसित करें
AI डेटा के आधार पर सोच सकता है, लेकिन कल्पना (Imagination) और रचनात्मकता (Creativity) केवल इंसान के पास है। भविष्य में सफल वही होंगे जो नई सोच के साथ AI का सही उपयोग कर पाएंगे।

जैसे – कंटेंट क्रिएशन, डिजाइन, कला, कहानी कहने या उद्यमिता में भी AI एक शक्तिशाली साथी बन सकता है।

4. Communication और Collaboration पर काम करें
भविष्य में हर काम एक टीमवर्क होगा। चाहे आप टेक्निकल हों या नॉन-टेक्निकल, आपको अपने विचार स्पष्ट रूप से साझा करने और दूसरों के साथ काम करने की क्षमता होनी चाहिए।

5. Career Flexibility रखें
AI के युग में एक ही नौकरी या करियर लाइन जीवनभर नहीं चलेगी। इसलिए "लाइफ़लॉन्ग लर्निंग" यानी लगातार सीखते रहने की आदत डालें। जो खुद को समय-समय पर अपडेट करेगा, वही इस प्रतिस्पर्धा में आगे रहेगा।

करियर चुनते समय ध्यान देने योग्य बातें

अपनी रुचि (Interest) पहचानें:
सिर्फ ट्रेंड देखकर करियर न चुनें। AI हर क्षेत्र में है — आप चाहे कला, चिकित्सा, व्यापार या विज्ञान में हों, अपने विषय को AI के साथ जोड़ सकते हैं।

Skill-based करियर की ओर बढ़ें:
डिग्री से ज़्यादा अब स्किल्स मायने रखती हैं।
Google या Coursera से मिले सर्टिफिकेट भी अब कंपनियाँ मान्यता दे रही हैं।

इंटरनेट और टेक्नोलॉजी का सही उपयोग करें:
सोशल मीडिया सिर्फ मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि सीखने का साधन भी बन सकता है।

Internship और Projects करें:
प्रैक्टिकल अनुभव ही असली सीख है।
स्कूल या कॉलेज के साथ छोटे प्रोजेक्ट्स करना, ब्लॉग या यूट्यूब चैनल चलाना, फ्रीलांसिंग करना — ये सब आपकी प्रोफ़ाइल को मज़बूत बनाते हैं।

AI के दौर में उभरते करियर विकल्प

1. Data Science और Machine Learning
हर संस्था डेटा पर निर्भर है। जो इस डेटा को समझ सके और उससे निर्णय निकाल सके, उसकी मांग सबसे ज़्यादा है।

2. AI in Healthcare
AI अब डॉक्टरों को बीमारियों की पहचान में मदद करता है। भविष्य में "AI मेडिकल एनालिस्ट" जैसी नई भूमिकाएँ आम होंगी।

3. Cyber Security Experts
AI के साथ साइबर हमले भी बढ़ रहे हैं, इसलिए साइबर सुरक्षा विशेषज्ञों की ज़रूरत भी तेज़ी से बढ़ेगी।

4. Digital Marketing और Content AI Tools
ChatGPT, Canva, Runway जैसे टूल्स ने मार्केटिंग और क्रिएटिव इंडस्ट्री को नई दिशा दी है।
इसलिए कंटेंट बनाना, सोशल मीडिया हैंडल करना और AI से मार्केटिंग करना एक बड़ा करियर विकल्प बनेगा।

5. Robotics और Automation
मशीनें अब केवल फैक्ट्री तक सीमित नहीं रहीं।
घरों, अस्पतालों, रेस्तरां और यहाँ तक कि कृषि में भी रोबोट्स काम कर रहे हैं। इससे Robotics Engineers और Automation Experts की मांग लगातार बढ़ रही है।

6. Education & AI-based Learning Design
AI से शिक्षा व्यक्तिगत हो रही है। भविष्य में "AI Learning Designer" या "Virtual Teacher" जैसी नई भूमिकाएँ सामने आएंगी।

मानवीय मूल्य और AI का संतुलन

AI बहुत कुछ कर सकता है — पर उसमें भावनाएँ, नैतिकता और संवेदना नहीं हैं। इसलिए इंसानों का रोल खत्म नहीं होगा, बल्कि और अहम हो जाएगा। छात्रों को यह समझना चाहिए कि तकनीक इंसान की जगह लेने नहीं, बल्कि उसकी क्षमताओं को बढ़ाने के लिए आई है।

कुल मिलाकर भविष्य का सफल इंसान वही होगा जो AI को साथी की तरह उपयोग करना सीखे, साधन की तरह नहीं।

AI एक तूफ़ान की तरह दुनिया को बदल रहा है।
पर यह डरने का नहीं, तैयार होने का समय है।
जो विद्यार्थी आज से ही नई स्किल्स सीखना, तकनीक को समझना और खुद को अपडेट रखना शुरू कर देंगे, वे आने वाले कल के नेता और नवोन्मेषक (Innovators) होंगे।

AI हमारे करियर को खत्म नहीं करेगा
AI उसे और बेहतर बनाएगा, बशर्ते हम उसके साथ कदम से कदम मिलाकर चलें।

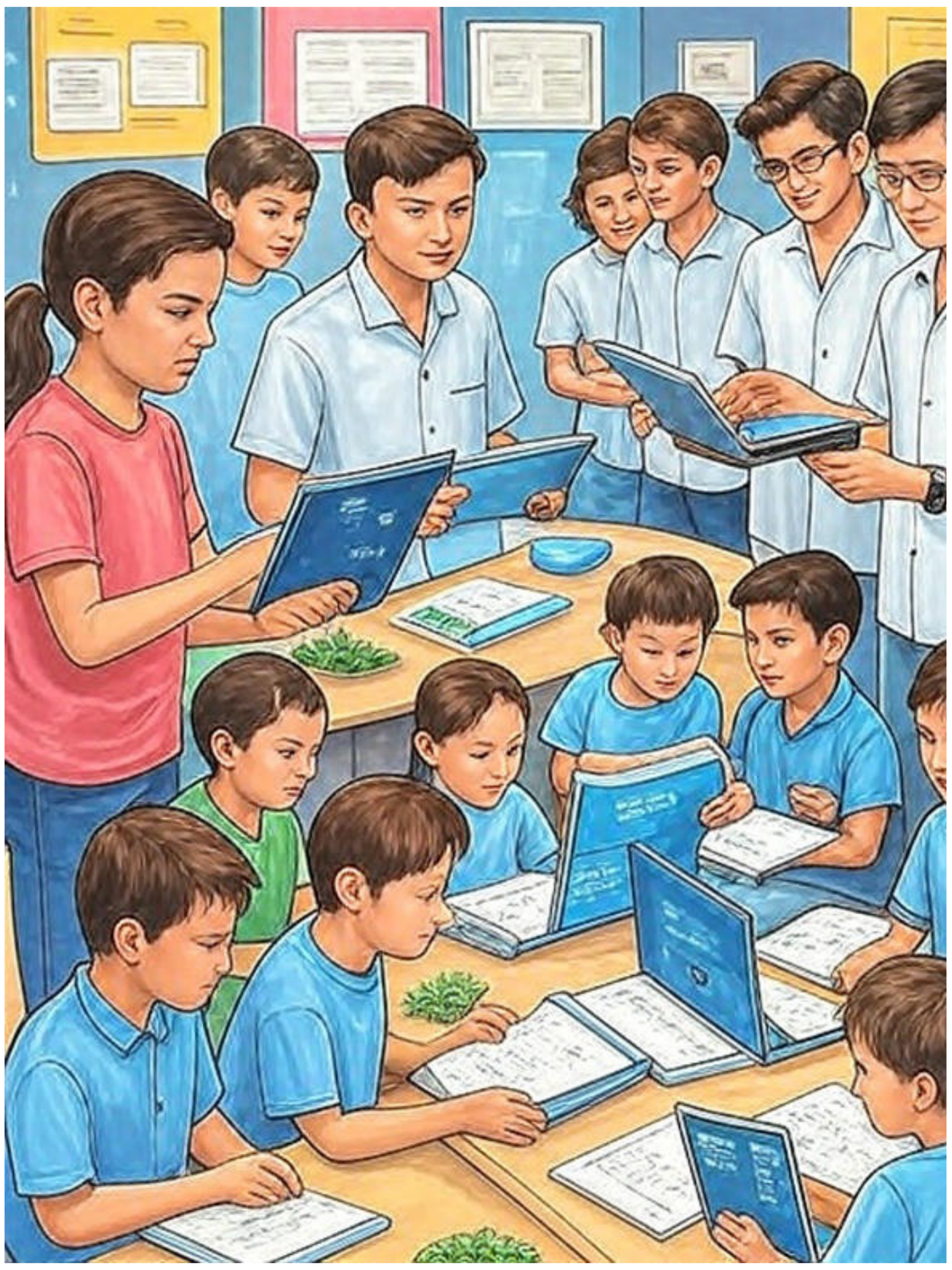

"भविष्य उन्हीं का है, जो परिवर्तन को समझते हैं — और उसे अपनाने का साहस रखते हैं।"

¤¤¤

ज़िन्दगी, जीवन और मृत्यु के बीच

कविता:- डॉ. सुनील गज्जाणी

तन थक कर चूर तो था ही
मीलों मील पैदल चले और चलना भी था
बस एक लक्ष्य साध कि घर पहुंचना है
आग उगलती धूप
सड़कें सुलगती-सी
जो राह सूझी
बस चल दिए उस ओर
कोई वक़्त तय नहीं
ना ही कोई दूरी
ध्येय, बस घर पहुंचना है!

एक भय से आंशिक परे
मगर तनाव से पूर्णतः परे
कि निकल तो लिए घर की ओर प्रतिबंधित क्षेत्र से
गांव पहुंच गांव की मिट्टी में
जी भर थकान उतारनी है!
इस बार बिना रोज़ी-रोटी की चिंता किए
बितायेंगे माँ-बाबू जी के साथ
परिवार के साथ कोरोना काल की भयावह छुट्टियां
शायद उन सब का उल्हाना मिटाने के लिए ही हुई होगी
जाने कब उन सब के संग बैठ कर बतियाये थे
जाने कब माँ-बाबू जी की सेवा-सुश्रुषा की थी
अब बहनिया की शादी की बातें करेंगे
अब बाबू जी संग बंजर खेत में हल चलाएंगे ताकि वे ख़ुश हो जाए
कि हमें भी खेत जोतना आता है!

शहर के प्रदूषण को छोड़
गांव में फिर जीयेंगे
पक्षियों का कलरव गान फिर सुन मंत्र मुग्ध होंगे
गांव की फिर ताज़ी हवा जी भर कर पीएंगे!

शहर तो पेट भरने के लिए,
ज़िम्मेदारियों को पूरा करने के लिए दौड़ना पड़ता हैं
मगर जिजीविषा गांव में ही रहती है!

वे सब बतिया रहें थे अपनी-अपनी थैलियों से रोटियां निकाल
अपनी उदर पूर्ति को शांत करते हुए
मन कुलांचे भर रहा था
दौड़ना अब भी चाहता था
घर जल्दी पहुंचने की खातिर
मगर तन थक कर चकनाचूर!

उदर ढंग से भरा भी नहीं होगा
कि नींद थपकियां दें सुलाने लगी
रोटियां हथेली में धरे रहीं
नुकीले पत्थरों का बिस्तर
रेल पटरियों का सिरहाना
नींद, शायद आडंबर कोई नहीं रखती
वे सत्रह सो गए
कुछ ख़्वाब देखने की चाह में
कुछ सुकून की
तो कुछ अपने घर-परिवार
अपने गांव में जी-भर रहने की चाह में
कोरोना का क़हर कब थमेगा
कब मिल मालिक उन्हें वापिस न्योता देंगे
कारख़ानों में वापिस काम करने के लिए

कोई अंदाज़ा नहीं
उधेड़बुन चिंताओं के बीच
उनींदी आँखें
कब नींद की गिरफ़्त में आ गयी
कब उनके खर्राटें सन्नाटों को बींधने लगे
वे बे -ख़बर थे
बस अंधकार, वीराना लिए
पटरियों की गोद में सोये
उन्हें वक़्त ही कितना हुआ होगा
मगर उसके लिए इतना वक़्त बहुत था!

जो इंसान ख़्वाब, चिंताएं, इच्छाएं, ज़िम्मेदारियां लिए सोए थे
सब एकाकार हो गई
भय उन्हें शायद कोरोना का नहीं था
भय शायद उन्हें मौत का भी नहीं था
परन्तु विधाता ने वो
जो रचना कतई वांछित नहीं था
उनकी मुरादों को देख
मृत्यु यहाँ दबे पाँव नहीं
तेज़ी से धड़धधाती रेल रूप में आ
सत्रह जनों को नहीं
जाने कितनी उम्मीदें
जाने कितने सहारों को कुचलती हुई निर्बाध रही
अब पटरियाँ
अपनी गोद में
कहीं मांस के चिधडें
कहीं खून!.
मगर बिखरी रोटियां
जो किसी के भाग्य में नहीं लिखी थी
रोटियों के भी नहीं थी कि कोई उनसे अपनी क्षुधा शांत कर पाया
बस वे एक लम्बी आस लिए चल पड़े अपनी अनंत यात्रा की ओर!
¤¤¤

रफ कॉपी

लघु कथा:- कमलेश शर्मा

मम्मी!
आपने मेरी रफ कॉपी देखी क्या? सुबह स्कूल जाते हुए यहीं टेबल पर छोड़ कर गया था। परेशान सा चिंटू इधर उधर अपनी रफ कॉपी ढूंढ रहा था।

कौन सी कॉपी चिंटू? वहीं पुरानी सी, बेकार सी, जो भरने पे आ गई थी?

हाँ मम्मी, वही
बेटा, मैंने पुराना, बेकार सामान निकाल स्टोर में डाल दिया है। पड़ी होंगी कहीं रद्दी में। पर तुम उस पुरानी, बेकार, भरने पे आई रफ कॉपी के लिए क्यों परेशान हों रहे हों? मैं तुम्हें नई कॉपी ले दूँगी।
वह बेकार नहीं थी मम्मी!

मेरे हर सवाल का जवाब उस रफ कॉपी में ही था। मुझे उसकी बहुत जरूरत है। उसके बिना मैं कुछ नहीं कर पाता। वह रफ कॉपी ही मेरी हर मुश्किल हल करती है।

तभी पीछे स्टोर रूम से दादा जी की आवाज आई, "तुम्हारी रफ कॉपी मिल गई चिंटू। यहाँ! स्टोर रूम में। मेरी खटिया के पास। सुबह तुम्हारी मम्मी को यहाँ रद्दी रखते देखा था, सोचा इसी रद्दी में ही होंगी तुम्हारी रफ कॉपी भी। ढूँढा तो मिल गई।

चिंटू ख़ुशी से झूम उठा। थैंक्यू दादा जी। आप भी मेरी हर मुश्किल आसान कर देते हों। स्टोर में खटिया पर बैठे दादा जी भी अपनी तुलना भी रफ कॉपी से कर रहे थे। वह भी तो घर की रफ कॉपी ही तो थे।
¤¤¤

सम्बन्धों के आयाम

लघु कथा:- अशोक गुजराती

यदु के साथ ही उसके माता-पिता रहते थे। पिता सेवा-निवृत्त हो गये थे। उनको मिली अल्प-सी निधि और यदु ने लिये कर्ज़ से इस मकान की तामीर हुई थी। पिता शिक्षक थे। बेटों की पढ़ाई पर अपने वेतन का काफ़ी हिस्सा लगाते रहे थे। तत्पश्चात दो बेटों और दो बेटियों का विवाह भी किया। अब उनको मामूली पेन्शन मिलती थी।

यदु के बड़े भाई पास के ही मोहल्ले में आबाद थे। उनके तथा विशेषतः बहू के दुर्व्यवहार के कारण माता-पिता उनसे दूरी बनाये रखते थे। यदु पर ही उनके बुढ़ापे की ज़िम्मेदारी थी। बढ़ती उम्र का उनके स्वास्थ्य पर भी असर पड़ रहा था। उनकी बीमारियों में इलाज और देखरेख का भार यदु के ही कंधों पर था। वह और उसकी पत्नी इसके लिए समर्पित थे।

अलबत्ता यदु की मां जमा हुई पेन्शन और सोना-चांदी वग़ैरह अपनी बेटियों के पुत्र-पुत्रियों की शादी में लगाती रहीं। अतः पिता का बैंक खाता और जो थोड़े-बहुत आभूषण थे, निःशेष होते गये। फिर मां की लम्बी बीमारी के बाद मृत्यु हो गयी। बड़े भाई का परिवार आया लेकिन कोई सक्रियता नहीं दर्शायी।

दो वर्ष के उपरांत पिताजी भी बहुत दिन अस्पताल में अपने रोग से जूझते रहे पर अंततः उनकी भी मौत हो गयी। इस बार बड़े भाई के यहां से कोई नहीं आया। वे मैयत में बीच रास्ते शामिल हुए और वापसी में यदु का घर आने से पूर्व लौट गये।

उनसे बड़ी दोनों बहनों से भी उनका बर्ताव सौहार्द-भरा नहीं था परन्तु बहनों ने रिश्ता बनाये रखा था। माता-पिता जीवित थे तब स्वाभाविकतः बहनें उसी के निवास पर ठहरती थीं। यह सिलसिला उन्होंने जारी रखा। यहां तक कि बड़े भाई के यहां होते रहे विभिन्न कार्यक्रमों के लिए भी आतीं तब भी उनका पड़ाव यदु के आवास पर ही होता। वहीं से भाई के निवास पर आना-जाना करतीं।

उसे इस गौरव पर अभिमान व प्रसन्नता होती कि उसकी दोनों बहनें हमेशा उसी पर अनुग्रह करती हैं, चाहे भाई के यहां जाना हो। वह और उसकी पत्नी उनका आतिथ्य पूरे मन से हरदम करते। गोकि यदु भाई के किसी बुलावे पर कभी नहीं गया क्योकि मां-बाप के प्रति की उनकी क्रूर अशालीनता वह भुला नहीं पाता था।

कई साल बीत गये। बेटे का विवाह हुआ। पोता-पोती के सान्निध्य में यदु रम गया था। एक रोज़ विषय निकलने पर यदु अपनी बहनों की प्रशंसा करता रहा कि वे भाई के बजाय उसीके घर पर सदा कम से कम दस-पन्द्रह दिनों के लिए रुकती रही थीं।

बेटा बोला, 'आप बुरा न मानें तो एक बात कहूं मैंने एक बार उनकी बातें सुन ली थीं। तब मैं छोटा था। वे आपस में चर्चा कर रही थीं कि यदु ने पिताजी की सारी सम्पत्ति और गहनों आदि पर अकेले ही कब्जा जमा रखा है। हमारा हक़ बनता है, हम तो उसीके यहां डेरा डालते रहेंगे।'

¤¤¤

अग्निसुता

कहानी:- आद्या मिश्रा

अरे बहन जी उठिये कहाँ जाना है आपको ये यहाँ से निकलने वाली आखिरी ट्रेन है। मै उसकी आवाज सुन चौक गई सीने से चिपकी इरा भी चौक कर रोने लगी। आँख आंसुओं से धुधली हो रही थी पर अपने आप को संभालते हुये मैने कहा अरे मुझे कहीं भी जाना तो आपको क्या अपना काम कीजिये। वो भी मेरी तरफ चकित और क्रोध भरी दृष्टि से देखकर चला गया।

एक बार लगा गलत किया पर फिर दिमाग ने सचेत किया कोई गलत आदमी हुआ तो इस के रोने पर ध्यान गया और चुप कराते -कराते फिर मन भर गया और फिर यादों की गहराइयों में गोटे खाने लगा।

अनुज ! मैनें कहा न कि मेरा तुम्हारे दोस्त से कोई लेना देना नहीं तुम समझतें क्यों नहीं। कमरे से अनुज गुस्से से पागल हो रहा था और आलमारी से़ कपड़े निकाल- निकाल कर फेंक रहा था। मै अवाक हो कर उसका वह शियाना स्वरूप देख रही थी और सोच रही थी क्या ये वही अनुज है जिसने नदी के किनारे में मेरा हाथ पकड़ कर कहा था कि लता मै तुम्हें हमेशा खुश रखूंगा। आज मुझे ऐसा लग रहा था कि मेरे अनुज के अंदर ऐसा क्या परिवर्तन हो गया। जो मेरे उसके दोस्त के साथ जरा सा हंस लेने पर उसके क्रोध का ज्वालामुखी फट पड़ा और उसका लावा अग्निवाणों की तरह मुझ पर बरस रहा है।

कमरे के बाहर सासु माँ सब सुन रही थी और शायद खुश हो रही थी उन्हें संतुष्टि मिल रही थी कि अच्छा है बहू के पर कतर रहें है मुझे उस पर एक अव्यक्त सी दया आती है और पुरूषों के छलावापूर्ण ढ़ग पर अत्यधिक रोष जो स्त्रियों को स्त्रियों का ही दुश्मन बनाने में अपने मिथ्या अंहकार की तुष्टि समझते है।

अखिरकार मेरी सहनशक्ति चरनसीमा को पार कर गयी और मैने सिर्फ इतना कहा कि “मैने तो आज बात की और तुम जो रोज लड़कियों से चैट करते है और मेरी सहेलियों से मजाक उसका क्या” बस इतना कह करते ही मैने अनुज का वह रूप् देखा जा अकल्पनीय था और अविश्सनीय भी उसने इरा को उठाकर फेंक दिया और चिल्लाते हुये कहा “जाओ निकल जाओ मेरे घर से मुझसे जबान लड़ती हो मेरी जुती मेरे सर, तुम क्या समझती हो अपने आप को”।

बस पता नही मेरे बुझते हुये आत्मसम्मान में कहाँ से इतनी ष्शक्ति आ गयी। मैने इरा को गोद मे लिया और अचानक इरा के रोने से मेरी निंद्रा टूटी ष्शायद उस मासूम को ठंड लग रही थी, मैने उसे आँचल से ढक लिया उस मासूम के लिए मन से चितांओं का अंधद चल पड़ा सोचा कि अब कहाँ जाऊं मैं प्लेटफार्म की पटरिओं की ओर ष्श्रन्य दृष्टि से ताकती रही मन में विचार आया इन पटरियों और नारी में कितनी समान्यता है, वे भी बोझ उठाती है और दूसरों के लिये समस्त जीवन अर्पित कर देती है और अंततोगला धूप में तप्त हो कर अनजान रास्तों में गुम हो जाती हैं , और नारी भी सारी जिन्दगी दूसरों को मंजिल तक पहुंचाते-पहुंचाते अपनी डगर से भटक कर पता नही किन सूने पथों पर अपना अस्तित्व तलाशती रहती हैं।

विपत्ति के क्षणों में मन कितना दार्शनिक और यथार्यवादी हो जाता है। काश ! मन सामान्य क्षणों में इतना सटीक निर्णय वे तो ष्शायद इतनी समस्यायें ही न हो। अनुज ! मैं तो अपनी नियति स्वयं लिखने में सक्षम हूँ न कहीं अपनी और अपनी बेटी को सम्मान पूर्वक जीवनयापन की स्थिति मे ले ही आऊगी पर तुम्हारे इस झूठ अहमं से इतना ही कहूँगी कि क्या हमारा रिश्ता इन्ही खोखले सात

फेरों पर टिका था उस प्रेम उस विश्वास का आधार कहाँ गया जो हमारे अटूट रिश्ते की नींव पर था।

खैर मुझे पता है तुम इन सवालों के जवाब देने में असमर्थ हो क्योकि इन प्रश्नों के उत्तर स्वरूप तुम्हारा हृदय तो तुम्हारे पुरूषोचित दंभ की काली चट्टटयों में धुटता हुआ कब का मौन हां चुका है।

विचारों का इसी उधड़बुनमें मुझो कब नीद आयी पता ही नही चला। सुबह जब आखे खुली तो देखा कि ऊषाकालीन सुर्य की किरणें मेरे गात को ही नहीं मेरे अंतर्गत को भी आलोकित ार रही थी। मैनें अपनी खोई हुई शक्ति वापस या लेने जैसा अनुभव किया। टपनी बिटियां को सीने से लगाये मै जीवन के एक नवीन पथ पर अग्रसर हो रही थी और मन कही न कही अनंज के प्रति आभार प्रकट कर रहा था कि उसने अपनी का्रधग्नि में मेरे अंदर छुपे हुये सश्क्त मन का तृप्त कंचन जैसी आभा से परिपूरित कर दिया था और अपनी पाशविकता से मुक्त होने का अवसर दिया था।
मेरा मन इस बात के लिये अत्यधिक प्रसन्न था कि मेरी बिटिया उस वाशविकता पूर्ण साये से हट कर एक नवीन जीवन वातावरण में अपनी आँखे खोलेगी और एसे कभी नही मालूम होगा कि उसका पिता उसे किन परिस्थितियों में फेकने पर उद्यत था।

अनुजा मुझे क्षमा करना पर तुम्होरे कलुषित मन को मैं पितृत्व का ये अधिकार नही दे सकती जो अपने उद्दाम का्रेध में अपने पिता होने का मान भी नही रख सकता।

¤¤¤

चाय और शर्मा जी

लघु कथा:- डॉ. सुशील कुमार जमरिआर

शर्मा जी हिंदी के उद्भट विद्वान और चाय के शौकीन बहुत तनाव ग्रस्त हैं, दरअसल वो चाय के बड़े शौकीन हैं। एक दिन में कई कई कप चाय पी जाते हैं, उससे भी मन नहीं भरता तो चौरहे पर जाकर पीते हैं। कल वो एक रील देख रहे थे जिसमें बता रहा था कि चाय पत्ती का वजन बढ़ाने के लिये उसमें लोहे का बुरादा मिलाया जाता है।

तब उन्होंने यूँ ही इसकी जांच के लिए अपने घर की टॉप ब्रांड की गोल्ड चायपत्ती के डिब्बे में चुंबक डाल के थोड़ा हिलाया, चुंबक पर लोहे का बुरादा चिपक गया। यानी चायपत्ती में लोहा था, अब डा शर्मा सर को समझ में आ गया की उनका पेट क्यों खराब रहता है, लाखों रुपये तो वो डाक्टरों को दे चुके, तबसे वो घूम घूम सबको बता रहे कि बहुत चोर कंपनी है लिखती है गोल्ड और मिलाती है लोहा मेरी बिन मांगी सलाह है मानना ना मानना उनकी मर्जी घर में एक चुम्बक रख लें चायपत्ती लाएं तो उसमें फिरा के लोहा निकाल लें या नुक्कड़ की चाय पियें। नुक्कड़ वाले कम से कम लोहा तो नहीं मिला रहे जो जाकर पेट में इकट्ठा हो जाता है, वो सब तो जूते की पालिश मिलाते हैं जो थोड़ी सुपाच्य होती है, पेट में गल जाती है।

¤¤¤

मित्रों

ग़ज़ल:- राजीव नामदेव "राना लिधौरी"

वो तितलियों को सिखाता है व्याकरण मित्रों।
ख़ुद जिसका गंदा देखो है आचरण मित्रों।।

ये जीवन सफल हो जाएगा तुम्हारा मित्रों।
करो ध्यान, पूजा जाओ उसकी शरण मित्रों।।

ढूंढ़े से न मिलती अब शुद्धता कहीं पे।
दूषित हो गया है कितना वातावरण मित्रों।।

मंदिर मस्ज़िद हो या गिरजा, जिनालय।
सब उसका ही तो अंश है हर क्षण मित्रों।।

अपने ही अंदर खोजे हैं खुशियां अपार।
दूसरों की खुशियां पे करो न अतिक्रमण।।

सच कभी छिपता नहीं, आयेगा ही सामने।
अच्छा है झूठ का खुद हटा दो आवरण।।

तुम एक ही जगह पे ठहरे हुए क्यों 'राना '।
ये वक्त कितना बदल रहा हर क्षण मित्रों।।

¤¤¤

सड़क सुरक्षा:

परिवार के लोग आप के घर आने की राह देख रहे है

आलेख:- संजय वर्मा "दृष्टि"

लापरवाही से वाहन चलाने के कारण कई क्षेत्रों में सड़क दुर्घटनाओं में लापरवाही के कारण जान माल की हानि होती है |जिसे कई वर्षो से रोकने हेतु प्रयत्न किये गए मगर दुर्घटनाए कम नहीं हुई |

सड़क पर चलते हुए या गाड़ी चलाते हुए मोबाइल पर बात कर रहे लोगो की आए दिन दुर्घटना की खबर पढ़ने को आती है। अधिकांश लोग वाहन चलाते समय चालक अपने मोबाइल को कान और कंधे के बीच दबाकर बातचीत करते हुए वाहन चलाते है उनका ध्यान बातचीत पर ही ज्यादा रहता ही। पीछे हार्न देने वाले की भी वो सुनते नहीं ऐसे में दुर्घटना संभव है। जरुरी बात भी करना होतो थोड़ा सा ठहर के बात करना चाहिए। कई लोग मोबाइल पर बातचीत जोर-जोर से करते है|वाहन चलते समय कानों में हेड फोन लगा होने से भी हार्न सुनाई ना देने की परेशानी उठानी पड़ती है।

शराब पीकर के वाहन न चलाए , सर पर हेलमेट अवश्य पहने चाहे थोड़ी दूर जाना हो तब भी इसके अलावा यातायात के नियमों का पालन अवश्य करें| शिक्षण संस्थाओं में यातायात नियमों की कार्यशाला का आयोजन कर चित्रकला, निबंध, कविता, नाट्य के जरिए सड़क सुरक्षा के प्रति जागरूकता लेन का प्रयत्न किए जाना चाहिए। चार और छः लाइन की सड़कों पर भारी वाहनों के लिए अलग से लाइन बनाना, सवारी वाहनों में निर्धारत संख्या से ज्यादा सवारी नहीं बैठना, ओवर लोड नहीं करना , अक्सर देखने में आता है कि जहाँ पर रेल यातायात सुविधा होती है वहां की सड़कों पर दबाव कम होता है सड़के ज्यादा सर्विस देती है|रेल सड़को का भार बाट लेती है|

सड़कों पर गड्ढो के कारण दुर्घटनाएं होती है सुझाव जिन सड़कों पर ज्यादा गढ्ढे मिले वहां पर कार्यवाही की जाना चाहिए|आवारा पशुओं को सड़कों पर से हटवाया जाना चाहिए|क्योकि अक्सर रात के समय अँधेरे के कारण पशु दिखाई नहीं देते और दुर्घटना घटित हो जाती है|इसके के लिए पशुओं के गले में रेडियम बेल्ट और सींग पर रेडियम स्टिकर लगाया जाना चाहिए ताकि वहां का लाइट पड़ने पर पशु दिखाई दे सके |सड़कों के आसपास लगने वाली दुकाने अतिक्रमण होने से भी सड़कों पर सही तरीके से वहां चलने में परेशानी होती है और दुर्घटना घटने की सम्भावना होती है|तहसील स्तर और जिला स्तर पर जहाँ यातायात का दबाव ज्यादा हो वहां पर मुख्य चौराहों पर यातायात सिग्नल अवश्य लगाए जाना चाहिए|

ताकि यातायात व्यवस्थित हो सकें|सड़के जहाँ की ख़राब हो उसका सुधार और मरम्मत भी आवश्यक है ताकि दुर्घटना घटित न हो|सड़के बनाने की मानक गुणवत्ता का स्तर नई टेक्नालॉजी और श्रेष्ठ हो|जिसके बनने से सड़को पर प्रतिवर्ष होने वाला रखरखाव कम होकर अतिरिक्त आर्थिक बोझ शासन पर न पड़े| मोबाइल एवं स्वयं की सुरक्षा के साथ दूसरों का भी ख्याल रखे। परिवार के लोग आप के घर आने की राह देख रहे है। सुरक्षित चले , लगातार बढ़ती सड़क दुर्घटनाओं के लिए निर्धारित गति से ज्यादा गति में वाहन चलाना , शराब पीकर के वाहन चलाना, एवं यातायात के नियमों का पालन नही करने से दुर्घटनाए होती है इन छोटे छोटे उपायों का पालन करने से सुरक्षित रह सकते है |

¤¤¤

नील कमल की रात

कहानी:- नारायण नाथ योगी

वह रात किसी सामान्य रात जैसी नहीं थी। गंगा के किनारे बसी पुरानी हवेली की दीवारें, जैसे सदियों के रहस्य छुपाए खड़ी हों। चाँद की रोशनी, हरे-भरे पत्तों और फटी दीवारों पर पड़कर हवा में किसी गुप्त संकेत की तरह झिलमिला रही थी। हवेली के चारों ओर फैली गंध में पुरानी मिट्टी, धूप और अजीब कामुकता का मिश्रण था।

अमृता - दर्शन और आत्मा विज्ञान की शोधार्थिनी - अपने गुरु, आचार्य देवेश के साथ वहाँ पहुँची। वह हवेली वर्षों से सुनाई गई कथाओं के लिए प्रसिद्ध थी। कहा जाता था कि उस हवेली के आँगन में हर पूर्णिमा को "नील कमल" खिलता है। लेकिन यह कोई सामान्य कमल नहीं था; यह प्रतीक था भीतर छिपे सत्य का, जिसे देखने वाला अपने भय, वासनाओं और इच्छाओं का सामना करना पड़ता था।

अमृता ने धीमे स्वर में पूछा, "गुरुदेव, यह नील कमल आखिर है क्या? फूल, या कोई प्रतीक?" देवेश ने हल्का मुस्कान भरा, "यह तुम्हारे भीतर का वह रहस्य है, जिसे तुम वर्षों से दबाकर आई हो। जब तक तुम अपने भय और कामुक ऊर्जा को समझ नहीं पाओगी, यह कमल नहीं खिलेगा। "

हवेली में कदम रखते ही अमृता ने महसूस किया कि दीवारें मानो सांस ले रही हों। हर कदम पर फर्श से आती खनखनाहट, हवेली की दरवाजों की चरमराहट और कहीं दूर मंदिर की घंटियों की गूँज, वातावरण को और भी रहस्यमय बना रही थी।

वे दोनों आँगन में पहुँचे। पूर्णिमा की रोशनी में एक तालाब की सतह जैसे शीशे की तरह चमक रही थी। देवेश ने तालाब की ओर इशारा किया, "नील कमल इसी पानी के भीतर खिलता है। लेकिन याद रखो, उसे देखने की कीमत देह या आत्मा में से किसी एक को देनी पड़ सकती है। "

अमृता का हृदय तेज़ी से धड़कने लगा। उसके मन में उत्सुकता और भय का अजीब मिश्रण था। उसने अपनी साँसों पर काबू पाया और पूछा, "गुरुदेव, क्या मैं तैयार हूँ इसे देखने के लिए?"

देवेश ने गहरी दृष्टि से उसे देखा, "तुम स्वयं जानोगी, जब क्षण आएगा। " रात गहरी हुई। झींगुरों का शोर, हवाओं की सरसराहट और तालाब के पानी की हल्की लहरों की आवाज़, अमृता के मन में रोमांच और डर दोनों पैदा कर रही थी। अचानक, हवेली की दीवारों पर उसकी परछाईं अलग होकर हिलने लगी। अमृता ने झटके से कदम पीछे खींचा।

परछाईं ने धीरे से मुस्कान दी, "मैं वही हूँ जिसे तुम भीतर दबाकर लाई हो — तुम्हारी इच्छा, तुम्हारी वासना, तुम्हारा स्वयं का सत्य। "

अमृता की देह काँप गई। उसने मन ही मन पूछा, "यह वास्तविक है,

या मेरी कल्पना?" पर जब परछाईं उसके करीब आई, तो वह स्वयं को उसके स्पर्श से नहीं रोक पाई। "मुझसे मिलो, " परछाईं ने कहा, "तभी नील कमल खिलेगा। "

अमृता ने आँखें बंद कर लीं। उसके मन में कई प्रश्न थे — क्या यह कामुक आकर्षण की परीक्षा है, या आत्मा के गहन सत्य का दर्शन? उसने अपनी चेतना और वासना को एक साथ अनुभव किया। उसकी देह और मन दोनों कंपन कर रहे थे, परन्तु किसी अज्ञात शक्ति ने उसे सहज महसूस कराया।

जैसे ही उसने अपने भीतर के डर और वासना को स्वीकार किया, तालाब में अचानक नीला प्रकाश फैल गया। पानी की सतह पर नील कमल धीरे-धीरे खिल उठा। उसका रंग इतना गहरा और शुद्ध था कि अमृता का मन घबराहट और विस्मय से भर गया।

देवेश ने उसके कान में कहा, "देखो, अमृता, यह केवल फूल नहीं है। यह तुम्हारे भीतर के आत्मा और देह के मेल का प्रतीक है। जिस क्षण तुमने अपने भीतर की ऊर्जा को समझा, उसी क्षण ब्रह्म ने तुम्हें स्वीकार कर लिया। "

अमृता ने अपने हाथ तालाब की सतह पर डाले। पानी ठंडा था, पर उस ठंडक में उसे अजीब शांति और कामुकता का मिश्रण महसूस हुआ। उसने देखा, नील कमल जैसे उसके स्पर्श पर धीरे-धीरे अपनी पूरी भव्यता में खिल रहा था।

वह फूल केवल देखने के लिए नहीं था; इसे अनुभव करने की आवश्यकता थी। अमृता ने महसूस किया कि उसके भीतर की हर इच्छा, हर भय और हर तृष्णा उस कमल के प्रकाश में साफ़ हो रही थी। वह जान गई कि सचमुच का ज्ञान केवल तभी आता है, जब मन और देह दोनों एक साथ साक्षात्कार में हों।

रात बढ़ती गई, और हवेली में केवल चाँद, नील कमल और अमृता की चेतना की गूँज थी। देवेश ने धीमे स्वर में कहा, "अब तुम जान गई हो, अमृता। आत्मा और देह अलग नहीं हैं। यह फूल हमें याद दिलाता है कि कामुकता और अध्यात्म, दोनों ही जीवन के दो पहलू हैं। जब इन्हें समझ लिया जाता है, तब व्यक्ति ब्रह्म के समीप पहुँचता है। "

अमृता ने गहरी साँस ली। उसके मन में भावनाओं की लहरें उठ रही थीं — भय, रोमांच, कामुकता और शांति का मिश्रण। वह अब जान चुकी थी कि नील कमल केवल बाहरी दुनिया का फूल नहीं, बल्कि उसके भीतर का प्रतीक था।

सुबह होते-होते गंगा का जल शांत था। हवेली में अब केवल नील कमल था, जो सूरज की रोशनी में भी चाँदनी सा चमक रहा था। अमृता ने महसूस किया कि अब उसे बाहरी सत्य की आवश्यकता नहीं थी। उसने अपने भीतर की ऊर्जा, कामुकता और अध्यात्म को एक साथ स्वीकार कर लिया था।

गुरुदेव ने अंतिम बार उसकी ओर देखा और मुस्कराए, "जो अपने भीतर का नील कमल खोज लेता है, वह फिर किसी बाहरी सत्य की तलाश में नहीं जाता। "

अमृता ने सिर झुकाकर धन्यवाद किया। वह जान चुकी थी कि जीवन का रहस्य केवल सोचने या अध्ययन करने से नहीं मिलता, बल्कि अनुभव करने, स्वीकार करने और भीतर की ऊर्जा को समझने से प्रकट होता है।

और गंगा किनारे उस हवेली में, नील कमल की चमक हमेशा की तरह रहस्यपूर्ण बनी रही — एक संकेत, कि जो भी अपनी अंतरात्मा के गहरे पानी में डूबेगा, वही सच्चाई को पाएगा।

¤¤¤

ग़ज़ल

ग़ज़ल:- अनिल 'मानव'

ख़ूबसूरत हैं बहुत ही वादियाँ विश्वास की
टूटकर जुड़ती नहीं पर टहनियाँ विश्वास की

ताना-बाना बुनती है यूँ तो हर इक संबंध का
होती हैं नाज़ुक बहुत पर उँगलियाँ विश्वास की

रिश्ते-नाते, दोस्ती हैं इक खिलौने की तरह
उम्रभर भरते रहो तुम चाबियाँ विश्वास की

दाग़ दामन में कभी लगने न पाये लो शपथ
जो पहन रक्खी है तुमने वर्दियाँ विश्वास की

दिल से दिल तक तुम उतर सकते हो चाहे जब कभी
दिल पे चुपके से लगाकर सीढ़ियाँ विश्वास की

तोड़ देती हैं मुझे जब ज़ीस्त की दुश्वारियाँ
तब बुलाकर देती है माँ थपकियाँ विश्वास की

बस तभी तक रोशनी देगा मुहब्बत का दिया
जब तलक जलती रहेंगी बत्तियाँ विश्वास की

जानते हैं सब मछेरे बच के जाएगी कहाँ
चाहतों के जाल में हैं मछलियाँ विश्वास की

¤¤¤

एक जिद्दी लड़की

कविता:- डॉ. नीना छिब्बर

अलसुबह सूरज से आँख मिलाती है
भर दोपहरी कड़ी धूप में खिलखिलाती है
सांझ ढ़ले नहीं ड़रती काले सायों से
रात को चाँद तारों से बतियाती है।।

एक जिद्दी लड़की
अपनी आँखो में नहीं भरती औरों की उम्मीदें
अपने ही सुख-दुख को भोगती है हस कर
अपनी ही सीमाओं को लांघ जीतती है जंग
अपनी लैंगिक अवस्था को बीमारी नहीं मानती।

एक जिद्दी लड़की
हर दिन, हर माह, हर साल दोहराती है
अपनी आकांक्षाएं
हर बात, हर घात, हर हार बदलती है जीत में
हर स्वाद, हर दंश, हर आग को हौसले से पस्त
करती है
हर "ना" को " हाँ "में बदलने की खातिर तोड़ती
वर्जनाएं
आत्मबल, आत्मविश्वास, आत्मचिंतन, आत्म
अनुशासन का खजाना संचित रखती है।।

एक जिद्दी लड़की।।

¤¤¤

वर्त्तमान परिदृश्य में मानवीय रिश्ते

आलेख:- अनिल कुमार मिश्र

मानव जीवन को अन्य सभी जीवों से श्रेष्ठ माना गया है। मनुष्य रूप में जन्म होना पूर्व जन्मों के पुण्य का फल बताया जाता है। मानव जीवन को मिले अनमोल उपहारों में से एक अनमोल उपहार है- 'रिश्ते'। रिश्ते नाते ही मनुष्य को अन्य प्राणियों से भिन्न बनाते हैं। रिश्ते अन्य जीवों के भी होते हैं परंतु अत्यंत सीमित एवं संकुचित। पक्षियों एवं अन्य पशुओं के रिश्ते सिर्फ जन्म देनेवाले से अत्यंत सीमित समय के लिए होते हैं। समय विशेष के बीत जाने के बाद उनके संबंध मृतप्राय हो जाते हैं।

मनुष्य विवेकशील प्राणी है। उसे रिश्ते नातों की परख होती है और वह लंबे समय तक रिश्तों को निभाना चाहता है। वास्तव में मनुष्य को मिले रिश्ते दो प्रकार के होते हैं-एक उसे जन्म से प्राप्त होता है और दूसरा वह अपने व्यवहार से जीवन क्रम में निरंतर बनाता रहता है। दोनों में से कौन रिश्ते ज्यादा विश्वसनीय होते हैं यह तो निश्चित रूप से आत्ममंथन का विषय है। जितने लोग, उतनी सोच, सबके अलग अलग। परंतु मेरा यह मानना है कि 'रिश्ते आपसी समझ, समर्पण, सूझबूझ, करुणा एवं भावनाओं का परस्पर आदान-प्रदान है। 'यह परस्पर शब्द अत्यंत विशद है, कोई छोटा शब्द नहीं। जहाँ 'परस्पर'की समझ होती है, वहाँ रिश्ते लंबे समय तक दिनों दिन मजबूत होते हुए निभते चले जाते हैं और जहाँ 'परस्पर'शब्द की समझ नहीं होती, वहाँ रिश्तों को निभाये जाने की विवशता होती है। रिश्तों को स्वार्थवश निभाये जाने की सोच रिश्तों के धागे को कमज़ोर करती जाती है और रिश्ते बिखर जाते हैं।

स्वार्थ एकतरफा हो या दोनों तरफ से हो रिश्तों के टूटने का दर्द, दिनों दिन टूटते रहने का दर्द रिश्तों के दोनों किनारों पर मौजूद व्यक्ति को चोटिल करता हुआ बुरी तरह मानसिक रूप से घायल कर जाता है और जीवन भर का यह दर्द कभी भी कम नहीं होता और हर समय-असमय हमें चोट पहुंचाता रहता है।

हर रिश्ते की अपनी मर्यादा, निर्मलता एवं संवेदनशीलता होती है। इनपर चोट लगते ही रिश्ते बिखरने शुरू हो जाते हैं। कई बार चोट लगने पर भी लोग भारी मन से रिश्ते निभाते जाते हैं, आक्रोश भीतर दबा रहता है जो अचानक विस्फोटक हो जाता है।

आजकल एकल परिवार का प्रचलन काफी ज्यादा है। लोग सिर्फ अपने बच्चों के साथ रहना चाहते हैं। पति पत्नी और बच्चे, बस इसमें ही लोग अपनी पूरी दुनिया देखते हैं, सुकून तलाश करते हैं। एकल परिवार की प्रथा संयुक्त परिवार के दिनों दिन विषैले होते जाने का गंभीर परिणाम है। पुराने समय मे लोग संयुक्त परिवार में ही रहते थे, घर में सारे रिश्ते नाते मिल जाते थे-दादा, दादी, चाचा, चाची, बुआ, मामा, मामी आदि। कालक्रम में परिस्थितियाँ बदलती चली गयीं और घर के भीतर ही छल-कपट का जन्म होने लगा, रिश्ते टूटने लगे, आत्मा घायल होने लगी। इतने सारे रिश्तेदारों से भरा हुआ घर भी सूना होने लगा। लोग भीड़ में भी अकेले रहने लगे। सभी के ताने उलाहने सुनते सुनते लोग त्रस्त होने लगे। बहुएँ जरूरत से ज्यादा प्रताड़ित की जाने लगीं। निरंतर आत्महत्या एवं हत्या का दौर चल

पड़ा। घर से सुकून ही चला गया और शांति की तलाश में सभी इधर उधर भटकने लगे। घर से मानो लक्ष्मी ही रुष्ट हो गई। लोग शांति की तलाश में अपने घर में सीमित रहने लगे संयुक्त परिवार से दूर लोग माता- पिता, पुत्र-पुत्री में अपनी पूरी दुनिया ढूंढने लगे और यहीं से परिवार बिल्कुल सीमित सा हो गया।

प्रत्येक संबंध की अपनी सीमाएँ, परिसीमाएँ होती हैं। माता पिता का बात बात पर रोकना, टोकना बच्चों को बुरी परिस्थितियों से बचाता तो है परंतु इन बातों का बहुत ज्यादा बढ़ जाना बच्चों में घुटन पैदा करता है। बच्चों में भेदभाव करना आज रिश्तों के दरकने का, टूटने का, टूटकर बिखर जाने का एक बड़ा कारण हो गया है। भावनात्मक आघात मनुष्य को तोड़ता तो है परंतु फिर भी भीतर से कुछ करने की ताकत भी देता है। ऐसी स्थिति में हम अच्छा करते हैं या बुरा यह दिशा निर्धारण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

परिवार एकल हो या संयुक्त बच्चों की परवरिश बहुत ही महत्त्वपूर्ण होती है। बच्चे संस्कारी हों, सुपथ पर चलनेवाले हों तो इससे बड़ा सुख और कुछ नहीं होता। वर्त्तमान परिदृश्य में रिश्तों को लेकर बहुत सारे बदलाव कानून में आये हैं। लोग अपने जीवन को लेकर काफी सजग हैं और तनाव से दूर सुख की दुनिया तलाश करते हैं। सुखमय वैवाहिक जीवन नहीं प्राप्त होने पर कानून की मदद से अन्य कई रास्तों का विकल्प भी लोगों के सामने है और लोग उसका पूरा लाभ लेकर खुद को मानसिक रूप से स्वस्थ महसूस करते हैं।

आज टूटते एवं दरकते रिश्तों को प्रेम की जरूरत है। प्रेम यदि दोनों ओर से हो तो रिश्तों की ऊर्जा सदैव बनी रहती है और यदि घटते प्रेम एवं स्नेह का आभास हो तो उसे जीवन दान देने का भरसक प्रयास किया जाना चाहिए। रिश्तों की उर्वरता एवं शीतलता तभी तक रह सकती है जब तक स्नेह की बारिश दोनों तरफ से हो। रिश्तों के बीच रहकर स्वाभिमान की रक्षा सर्वोपरि है। जब स्वाभिमान टूटने लगे, रिश्ते अपनी मर्यादा भूलने लगें तो ऐसी विषम परिस्थिति में एकल परिवार बनकर अपनी जिम्मेदारियों को पूर्ण करना ही न्यायसंगत है।

अगर सभी अपनी भावनाओं को शुद्ध कर रिश्तों को लंबे समय तक जीवित रखना चाहेंगे तो रिश्ते निश्चित रूप से करुणा एवं स्नेह बरसाते हुए चिरकाल तक हमारे बने रहेंगे।

¤¤¤

बाबू सरयुग मंडल!

कविता:- चन्दन कुमार

हे माया जाल से परे !
आप तटस्थ रहे हर सबेरे।

हे ममतामयी पिता के पुत्र!
माता पंची देवी के द्वितीय सुपुत्र।

बड़े भाई के आज्ञाकारी अनुज।
आपको हिला न सका कोई भूल।
आपके जैसा तटस्थ रहना मुश्किल।
आपके जैसा मायाजाल काटना मुश्किल।

तटस्थता के लिए समय से विद्रोह।
लेनदेन में न किसी प्रकार के मोह।

बाबू सरयुग मंडल आपकी तटस्थता महान।
इतिहास करेगा आपके किए कर्तव्य का सम्मान।

आप बिंदास होकर चले गए।
दो पुत्र बड़े भाई पर छोड़ गए।

बाबू शिवनंदन मंडल आपके लिए ईश्वर समान।
इतिहास बनाके चले गए ओ मेरे भगवान।

¤¤¤

परिवार - दिल धड़कने का सबब

आलेख:- प्रमोद देशपांडे 'पीडी'

परिवार जीवन का धड़कता हृदय है। यह सिर्फ रिश्तों का नाम नहीं है, यह जीवन की वह प्रकृति है जो हमें जन्म से घेरे रहती है और हमारे भीतर निरंतर धड़कती है। हर घर के आंगन में कोई न कोई कहानी पलती है प्रेम, संघर्ष, हँसी और आँसू की एक साझा स्मृति। यही स्मृतियाँ समय के साथ गीत बन जाती हैं। स्पेनिश दार्शनिक, निबंधकार, कवि और उपन्यासकार जॉर्ज सांतायाना ने कहा है, "परिवार प्रकृति की सबसे सुंदर रचना है." सच ही तो है वह वृक्ष, जिसकी छाँव में हम सबसे पहले अपने होने का अहसास पाते हैं।

जीवन हमें बदलता रहता है, पर शुरुआत और अंत परिवार से ही जुड़ा रहता है। हर सफर के बाद लौटने का एक ठिकाना होता है वह घर, जहाँ कोई इंतज़ार करता है, बिना किसी शर्त के। परिवार ही वह लहर है, जो हर तूफान के बाद हमें किनारे तक ले आती है। जब

जीवन की नाव डगमगाने लगती है, परिवार ही संतुलन बनता है, शक्ति का आधार होता है।

परिवार की यह ताकत, यह अपनत्व और विश्वास आज के युग में नई चुनौतियों से जूझ रहे हैं। बदलती अर्थव्यवस्था, तेज़ होते शहरीकरण, भूमंडलीकरण की अंधी दौड़, सतत प्रतिस्पर्धा के दबाव, और डिजिटल युग में संवाद की कमी इन सबने परिवार के स्वरूप और संरचना को हिलाकर रख दिया है। एक छत के नीचे रहकर भी लोग आज भावनात्मक रूप से दूर होते जा रहे हैं; संवाद, सहानुभूति और साथ का स्पर्श स्क्रीन के पीछे छूटता जा रहा है। स्मार्टफोनों और सोशल मीडिया के आह्वान ने वह जगह घेर ली है, जहाँ कभी आपसी बातचीत की गर्मजोशी थी। आर्थिक असुरक्षितता, करियर के दबाव और व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाएँ संबंधों के बीच दरार पैदा कर रही हैं। संयुक्त परिवार छोटे होते जा रहे हैं, वृद्धजन अकेलेपन से जूझ रहे हैं, और बच्चों के भविष्य की चिंता माता-पिता की व्यग्रता बन रही है। परिवार की सीमाएँ आज केवल भौगोलिक नहीं, मनोवैज्ञानिक भी हो गई हैं।

जब मन एक-दूजे से मिलते हैं, तो घर फूलों के बगीचे-सा खिल उठता है; लेकिन जब ये मन आपस में संवादहीन हो जाते हैं, वही घर अनजानापन और अविश्वास की आंधी में छटपटाने लगता है। हर रिश्ते में मतभेद आना स्वाभाविक है, लेकिन विडंबना यह है कि आज संवाद और समझ का पुल कमज़ोर होता जा रहा है। प्रेम ही वह संगीत है जो असंगति को सुर देता है जैसा कि जर्मन दार्शनिक फ्रेडरिक नीत्शे ने कहा है।

ऐसे समय में, परिवार की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। त्याग, संयम, सहानुभूति और करुणा जैसे सद्गुण स्कूल की किताबों में नहीं, घर के वातावरण में पनपते हैं। परिवार केवल खून का रिश्ता नहीं, बल्कि भावनाओं, संवाद और स्मृतियों की वह संस्कृति है जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी बहती है।

सचमुच, परिवार की यादें वह पुल हैं, जो अतीत और भविष्य को जोड़ती हैं और हौसले की लौ सुलगा देती हैं। वर्तमान की दौड़ और तनाव के बीच, यही स्मृतियाँ हमें स्थायित्व और संबल का एहसास कराती हैं। जब बड़ी-बड़ी उपलब्धियाँ भी अकेले महसूस होने लगें, तब अपनेपन की गोद में छुपा परिवार ही शक्तिशाली आधार बन जाता है।

आज की चुनौती यही है इस बदलते समय में परिवार की अहमियत को नया अर्थ देना। संवाद और संवेदना के द्वार खोलना, साझा वक्त बिताना, डिजिटल आबोहवा में यथार्थ के संबंधों को बचाए रखना इन्हीं छोटी कोशिशों से परिवार फिर से हमारे दिल की धड़कन बन सकता है।

अंततः, परिवार वही स्थान है जहाँ जीवन आरंभ होता है और प्रेम कभी समाप्त नहीं होता। इस उजास, अपनत्व और साथ के वृत्त में ही मनुष्य का हृदय सच्ची धड़कन पाता है। परिवार के इसी अलाव में मानवता बार-बार नया जन्म लेती है, और यही उसका सबसे बड़ा वरदान है। ¤¤¤

वन्दे मातरम्

कविता:- अमर नाथ

घुल चुका है खून में, नवगीत वन्दे मातरम्।
जिन्दगी में भर गया, संगीत वन्दे मातरम्।

मोह प्राणों का रहा न, चाहिए दौलत कोई,
न, मात, पितु, सुत, भार्या,
बस प्रीत वन्दे मातरम्।।

ईश भी आए अगर,
कर-जोड़ कर विनती करें।
आप तो केवल पिता, पर मीत वन्दे मातरम्।।

प्राण तो हैं चीज क्या,
सत्कर्म सब हों, दॉव पर।
कुछ नहीं खोया अगर, हो जीत वन्दे मातरम्।

देशभक्तों में भरे, नवप्राण,
ऊर्जा, जोश भी।
दुश्मनों को कर रहा, भयभीत वन्दे मातरम्।

अस्मिता है देश की, यही आन-बान -शान भी।
बन चुकी है सभ्यता, तहजीब, वन्दे मातरम्।

सिर झुकाना देश को है फर्ज, जो जाने नहीं,
सख्त उनको दे रहा, ताकीद, वन्दे मातरम्।

इसके हारे , हार तो, इसके जीते, जीत है।
जगदीश, सुरजीत यह,
मनजीत, वन्दे मातरम्।

आओ मिलकर गाएँ हम, गीत वन्दे मातरम्।
तन मन पर गुदवायें हम,
गीत वन्दे मातरम्।।

¤¤¤

क्या कुछ है बेटियां

कविता:- नारायण बोस्तर 'देवासी'

क्या कुछ है बेटियां
बेटों से बढ़कर हैं बेटियां

अपने पिता की परी है बेटियां
मां का दूसरा रूप है बेटियां
हिमालय की मीठी नदियां वो
पोधों की खिलती कलियां वो

पराये घर में भी लक्ष्मी है बेटियां
अपने सपनों की राजकुमारी है बेटियां
बरसात की सुहानी हवा है वो
कड़कती ठंड में सुहानी धूप है वो

आंगन का सुकून है बेटियां
असहाय पति का सहारा है बेटियां
पूनम की रात की चांदनी है वो
सावन के मौसम हल्की फुहार है वो

बूढ़ी मां की लाठी है बेटियां
पिता के मुस्कान की वजह है बेटियां
शरद का खिलता चांद है वो
प्रकृति का अनोखा उपहार है वो

क्या कुछ है बेटियां
बेटों से बढ़कर हैं बेटियां
¤¤¤

बचपन

कविता:- अंकित शर्मा 'इषुप्रिय'

जीवन की चौखट पर अब है, ज़िम्मा पहरेदार।
बचपन में दिल खोल हँसे थे, निश्छल अंतिम बार।।

सीख लिया अपना- मेरा सब, सीख लिया हर भेद।
अब निश्चिन्त अवस्था का , हर दिन होता उच्छेद।।
मिलता नहीं कहीं पर बचपन- सा सच्चा व्यवहार।
बचपन में दिल खोल हँसे थे, निश्छल अंतिम बार।।

जहाँ अभावों में भावों का, मेला था हर ओर।
अब मित्रों में कहीं न मिलता, पहले वाला शोर।
भोले - अनजाने मन के सँग , छूट गया वह प्यार।
बचपन में दिल खोल हँसे थे, निश्छल अंतिम बार।

दौड़- धूप में दिन का ढलना, होता था आसान।
अब तो आयु लिखे जाती है, हर दिन का अवसान।
केवल मीठी यादों के वश, मन होता लाचार।
बचपन में दिल खोल हँसे थे, निश्छल अंतिम बार।।
¤¤¤

जीवन एक सफ़र है

कविता:- मुकेश कुमार बिस्सा

जीवन क्या है, एक सफ़र ही तो है,
जहाँ हर मोड़ पर एक नया नज़ारा है।

कुछ रास्ते सरल हैं, कुछ बहुत ही कठिन,
मगर चलते जाना ही इसका किनारा है।

हम यात्री हैं इस अनजानी राह के,
कुछ साथ चलते हैं, कुछ बिछड़ जाते हैं।

यादें बटोरते हैं, अनुभवों को सँजोते,
हर पल को जीना ही हमारी कला है।

यह सफ़र न थमेगा, न रुकेगा कभी,
धूप-छाँव इसकी पहचान है।

बस मंज़िल नहीं, रास्ते को भी जियो,
क्योंकि हर पल ही जीवन की उड़ान है।
¤¤¤

बस झूठ की जय जय कार

कविता:- वीरेन्द्र कौशल

हो रही सब ज़गह झूठ की जय जय कार
हर गली में शोर और हर मोड़ पर हाहाकार
हो रही बस झूठ की जय जय कार
बस झूठ की जय जय कार।।

बिन तेरे तो प्रभु यहां पत्ता नहीं हिलता
तेरी इज़ाज़त बिना तो यहां कुछ नहीं मिलता
फ़िर क्यों त्रस्त यहां जब हर कोई सेवादार
हो रही सब ज़गह बस झूठ की जय जय कार
बस झूठ की जय जय कार।।

लाखों अरबों के हो गए यहां गबन घोटाले
डर के मारे लोगों ने सांप ही पाले
नहीं दिखाई देता अब यहां पर कोई ईमानदार
हो रही सब ज़गह बस झूठ की जय जय कार
बस झूठ की जय जय कार।।

शुरू में यहां हर किसी को रहा भरोसा
वक़्त के चलते इन्होंने उनको ही कोसा
चीर हरण में दोषी ही गाएं राग दरबार
हो रही सब ज़गह बस झूठ की जय जय कार
बस झूठ की जय जय कार।

पैसा ही तो जग में पैसे को खींचे
हर कोई मस्त यहां बस अपनी आँखें मींचे
नहीं किसी को किसी से यहां कोई सरोकार
हो रही सब ज़गह बस झूठ की जय जय कार
बस झूठ की जय जय कार।।

पैसे ही से ही यहां सब कुछ मिलता
ग़रीब की तो यहां कोई भी नहीं सुनता
रसूख वाले ही यहां भरते नित नई हुंकार
हो रही सब ज़गह बस झूठ की जय जय कार
बस झूठ की जय जय कार।

नित्य यहां नए झूठे फ़रेबी और कोरे अहंकारी
फल फूल रही यहां झूठ की बेबस फुलवारी
देश प्रेम की आड़ में खुल्ले नफ़रत के बाज़ार
हो रही सब ज़गह बस झूठ की जय जय कार
बस झूठ की जय जय कार।

समझना पड़ेगा क्यों यहां बेबसी और लाचारी
साधन संपन्न होते हुए भी क्यों यहां बेरोज़गारी
कहां सो गया रे सबका अपना सांझा चौंकीदार
हो रही सब ज़गह बस झूठ की जय जय कार
बस झूठ की जय जय कार। ¤¤¤

हिन्दी लेखक परिवार
साहित्य एवं साहित्यकारों का एक मंच
साहित्य सुनने, पढ़ने एवम विचार करने के लिए
YouTube मंच
Instagram मंच
अनुभव पत्रिका
वेबसाईट
फेसबुक समूह
www.hindilekhak.com

आगे कुआँ पीछे खाई

लघु कथा:- नमिता सिंह 'आराधना'

थकी-माँदी सरला जी अभी बगीचे में आकर अपनी सहेलियों के बीच बैठी ही थीं कि तभी उनकी दस वर्षीया पोती ने आकर कहा, "छुटकू गिर गया है और उसके घुटने से खून निकल रहा है।" अपनी सहेलियों के साथ कुछ वक्त गुजारने के ख्याल से बगीचे में आई सरला जी ये सुनते ही फौरन घर की ओर भागीं। आधी उम्र अपने बच्चों को पालने के पीछे लगाने के बाद बड़े धूमधाम से बेटे की शादी की थी कि बहू के आने के बाद घर की जिम्मेदारियों से उन्हें कुछ राहत मिलेगी और वह चिंता मुक्त हो कर घूम-फिर सकेगीं। लेकिन ऐसा हुआ नहीं। बहू के आने के बाद उनकी जिम्मेदारियाँ कम होने की बजाए और बढ़ती चली गई।

बहू अपने ऑफिस के कामकाज में व्यस्त रहती। बाकी का समय घूमने-फिरने में बिताती। घर के कामों में उसकी कोई खास दिलचस्पी नहीं थी। मजबूरन कलह के भय से सरला जी घर की सारी जिम्मेदारियाँ बदस्तूर निभाती रहीं। अब उन्हें तीन लोगों का नहीं बल्कि चार लोगों की जिम्मेदारियाँ उठानी पड़ती थी। पोते-पोतियों के आने के बाद से उनकी जिम्मेदारियाँ और बढ़ गईं। पहले अपने बच्चे पाले और अब बच्चों के बच्चे पाल रहीं थीं।

अपने बच्चों को पालने के समय तो वह जवान थीं। सारे काम दौड़-भागकर कर लेती थीं। लेकिन अब उम्र का तकाजा था। न उस तेजी से सीढ़ियाँ चढ़ सकती थी, न ही वैसा शारीरिक श्रम होता था। बुढ़ापे के रोग अलग से सताते थे। कुछ कहते भी नहीं बनता था। कुछ कहो और बेटा-बहू किसी दूसरे शहर चले गए तो अकेलापन झेलो। कुल मिलाकर स्थिति तो ऐसे ही थी कि आगे कुआँ पीछे खाई।

¤¤¤

सीखना

कविता:- राजेश सक्सेना

पहाड़ देखना सिखाते हैं !
नदी सुनना
पेड़ संगीत के स्वर
बादल यात्राएँ करना

पंछी सिखाते हैं लौटना
तितलियाँ प्रेम पत्र संभालना सिखाती हैं पँख में छुपाकर
जैसे कमल छुपाता है
किरण की छुअन
दिवस अवसान पर

पत्थर टूटने की हद सिखाते हैं
रेत बिखरने की कला
हरी घाँस हँसना सिखाती है और आकाश झुकना

पानी सिखाता है
आँख में रहना,
मिट्टी से दोस्ती सिखाते हैं बीज और
फूल, प्रेम में खिलना

पकना सिखाते हैं अनाज
कविताएँ सिखाती हैं
प्रेम की तरफ जाना
कविता और प्रकृति जीना
सीखने की पाठशाला है

¤¤¤

हिन्दी लेखक परिवार
साहित्य एवं साहित्यकारों का एक मंच
साहित्य सुनने, पढ़ने एवम विचार करने के लिए
YouTube मंच
Instagram मंच
अनुपम पत्रिका
वेबसाईट
फेसबुक समूह
www.hindilekhak.com

तीसरी लाइन

कविता:- श्रीराम निवारिया

भारत दो लाइनों का देश
सैकड़ों वर्षों से
इन्हीं लाइनों पर हो रहा निस्तार
जहाँ जीवन का हुआ विस्तार
एक लाइन गौतम-गाँधी की मिली
एक सुभाष-भगतसिंह की

पति-पत्नी सा
पटरी बिठाये चल रहा है
गिरते-उठते
इन्हीं दो लाइनों पर चलकर भारत ने
बहुत लंबी दूरियाँ तय कर लीं है
ए.पी.जे. कलाम साहब की
मिसाइल के कई पुर्जे
इन्हीं लाइनों पर चढ़कर पहुँचे उन तक
सेव कश्मीर का और केसर
लाइनों से ही सुदूर दक्षिण भारत में
देता है स्वाद
और बनाता लोगों की सेहत
दक्षिण की कॉफी, कालीमिर्च-मसाला
हिन्दुस्तान को बनाता चटपटा

मुम्बई की रँगीनी पूरे भारत के जिगर में
पैदा करती है आग
जिससे बीड़ी सुलगाने की फंतासी में
उलझाते हैं गुलजार, जनता को
लेकिन मैं तो यह भी कहता हूँ
मुम्बई की रँगीनी से
लाखों चूल्हे सुलगते हैं

कलकत्ता-जूट का बोरा बन
अनाज के बहाने हर किसी के घर
मौजूद है
बिहार के राष्ट्रपति
यू. पी. के प्रधानमंत्री
दिल्ली से चलाते रहे देश को

इलाहाबाद की लाइन से
भारतेन्दु पहुँच गए थे इटारसी
हरदा, होशँगाबाद, इटारसी स्टेशनों पर
तारबाबू के रूप में गिटपिट कर चुके हैं
महावीर प्रसाद द्विवेदी

यह तीसरी लाइन
क्या एक पुत्र की तरह आ रही है?
जो पिता के कंधों पर रखा बोझ
कर देगी हल्का
या कोई पिता अपनी शान के रूप में
तीसरी लाइन रूपी बेटे को उतार रहा है
भारत की ज़मीं के मंच पर

अभी भारत को नहीं पता
यह लाइन राशन के गल्ले को
गरीबों तक समय पर पहुँचाने के लिए है
या उनसे हर तरह की बसूली करने?
सूदखोर और अधिकारी
इसी तीसरी लाइन से
अब पहले की तुलना में
और जल्दी पहुँच जायेंगे
कामगारों-किसानों द्वारा

पैसा खर्च कर देने के पहले, उनतक
ताकि आत्महत्या भी करें वे लोग
तो उससे पहले जेबों को उनके
झड़ा लिया जाए

कोई आगे आकर बताए
इस तीसरी लाइन के डल जाने के बाद
पहले की रेलगाड़ी के दूसरे दर्जे वाले
"सामान्य डिब्बों में ठुसे साँस लेते सामानों को"
अब आदमियों के रूप में
चिह्नित होने के कोई आसार नजर आ रहे हैं?
अथवा
उन्हीं डिब्बों की भेड़-बकरियों की बदौलत
वातानुकूलित डिब्बे पनपते रहेंगे
रेल विभाग को तीसरी लाइन डालकर
अपनी सम्पत्ति-सुरक्षा का जिम्मा लेना चाहिए
जो केवल उसकी लाइनें, रेलगाड़ियाँ,
पुल, फुडप्लाजा भर नहीं हैं
बल्कि लाइनों के बाजू में बसे दरिद्र
जो रेल किनारे की गंदगी का पर्याय बन गए हैं
उन्हें अपना ही समझ
उनके जीवन में नया हस्तक्षेप होना चाहिए

ऐसा न हो
कि तीसरी लाइन
तीन सितारे टके पुलिस वाले की तरह
अन्याय के शिकार कमजोर लोगों को
लतियाते हुए
अन्यायी के सामने खीसें निपोर कर
व्यस्त होने का बहाना बना
खिसक ले वहाँ से
और शिकार लोगों की सिसकियाँ
पत्रकारों के समाचार की
लाइन बनने से पहले ही बुझ जाएँ

विंध्याचल के बरखेड़ा-मिडघाट की पहाड़ी में
नौ सौ मीटर लंबी सुरँग
से गुजरेगी तीसरी लाइन की रेलें
तो जरूरत न पड़ने पर
भारत के एक बड़े जँक्शन इटारसी पर भी
रुके बिना चैन्ने-मुम्बई उड़ जायेंगी

परंतु तीसरी लाइन पर उड़ती रेल को
कभी-कभी याद करना चाहिए
चैन्ने तरफ यहाँ की जुझारपुर केबिन पर
और मुम्बई तरफ की सी केबिन पर
पचास वर्ष पूर्व
एक चतुर्थ श्रेणी का लीवरमेन
हुआ करता था देवचंद बाजीलाल
बरसते पानी, चमकती बिजली,
लोहा पिघला देने वाली गर्मी, दाँत बजा देने वाली ठण्ड में
वह अपनी नौकरी बिना लेट हुए करता था
लीवर खींच कर सिंग्नल झुकाना
और हरी झंडी बताना
खुशी-खुशी करते रहा है वह
तीसरी लाइन की द्रुतगति में रेलवे
ऐसे सभी कर्मवीरों को
उम्मीद है याद रखेगा

सैकड़ों वर्षों बाद
रेल लाइन के इतिहास का
आजाद भारत के आजाद खयाल
और नए इरादों के रूप में
जब हो रहा है विस्तार
तो वह किसी और रूप में न होकर
गेहूँ और गुलाब के रूप में ही
होना चाहिए
जो भारतीयों के सम्मान और जरूरत पूरा करने
का लक्ष्य रखे
और भारत की सद्प्रगति को
गुलाब की सुगंध की तरह
फैलाये पूरे विश्व में।
¤¤¤

एक पेड़ माँ के नाम

कविता:- रजत दीक्षित "रजत"

शीतल कितना माँ का आँचल
जैसे वृक्ष की घनी कि छाँव हो ,
रहती है माँ की यादें जिसमे
वर्षो तक हरियाली जिसमे
गोद मे रखती हरदम जिसको
ऐसी माँ के लाल कहाये।।

शुद्ध हवा हो शुद्ध गगन हो
और शुद्ध वातावरण हो जाये,
हरियाली की बहार खिली हो
देख जिसे अंतःकरण खिल जाये
परिभाषित हो मॉ की ममता
जब हरे पेड़ लहराये।।

प्रकृति ही है माँ प्रथम हमारी
इसका एक अभियान चलाया जाये,
हर माँ के नाम से एक पेड़ लगाया जाये
प्रथम माँ इस धरती को भी
स्वर्ग बनाया जाए।।

¤¤¤

hindilekhak.com

धूल में लिखी औरत

काव्यात्मक कहानी:- हरकीरत हीर

कहते हैं, पुराने शहरों में कुछ आवाज़ें कभी नहीं मरतीं..
वे दीवारों की दरारों में, खिड़कियों के शीशों पर
या किसी अधखुले दरवाज़े की साँस में बस जाती हैं..

मैं एक ऐसे ही शहर में नया मकान देखने गया था
ब्रोक़र बोला- "पुराना है, पर हवा बहुत सच्ची है यहाँ.."
मुझे हँसी आई- हवा भी सच्ची होती है क्या?

पर उस शाम, जब कमरे में धूप, धूल की महीन परतों से छनकर आई
तो मैंने उसे देखा-
दीवार पर एक औरत की आकृति थी
जैसे किसी ने धूल में उसकी रूपरेखा उकेरी हो-
बाल उड़ते हुए, चेहरा झुका हुआ
और होंठों पर अधूरी कविता की तरह एक रेखा

मैंने उँगली से वह रेखा मिटा दी-
और उसी पल खिड़की से हवा का झोंका आया
काग़ज़ उड़े, और दीवार पर वही आकृति फिर बन गई

मैं कुछ दिनों तक वहाँ रहा
रातों में पंखे की आवाज़ के बीच
कभी-कभी एक धीमा सुर सुनाई देता-
कोई "राग भीमपलासी" गा रहा हो, बहुत दूर से

धीरे-धीरे मुझे समझ आने लगा-
वो धूल में लिखी औरत सिर्फ़ आकृति नहीं थी
वो इस घर की आख़िरी साँस थी
जिसने इंतज़ार किया था-
किसी के लौट आने का.

एक रात मैंने पूछा-
"तुम कौन हो?"
दीवार पर धूल ने खुद को ज़रा-सा हिलाया
और एक शब्द उभर आया-
"याद"

सुबह जब मैंने आँखें खोलीं
दीवार साफ़ थी
पर मेरे तकिए पर धूल का एक अक्षर पड़ा था-
"रुकना"

भाग 2

बरसों बाद उस पुराने घर में कोई दरवाज़ा फिर से खुला
इस बार, एक औरत आई थी-
कंधे पर पुराना कैमरा, बालों में गजरे की हल्की ख़ुशबू
और आँखों में कुछ खोजती हुई बेचैनी

उसने कहा-
" सुना है, यहाँ कोई दीवार बोलती है? "

मकान-मालिक ने हँसकर कहा-
"बोलती थी अब बस हवा है"
पर उसने किराया देकर कमरा ले लिया..
कहा- "मैं यहाँ वो सब सुनने आई हूँ.."

पहली रात, जब उसने कैमरा ट्राइपॉड पर रखा
फ्रेम में वही दीवार थी-
जिस पर कभी किसी की उँगली ने धूल को छुआ था

धीरे-धीरे कमरे में धूप उतरी
और उसी धूप के बीच
वो आकृति फिर उभर आई-
बाल उड़ते हुए, चेहरा झुका हुआ
और होंठों पर वही अधूरी कविता

उस औरत ने काँपते हाथों से शटर दबाया-
क्लिक
और फ़्लैश की रोशनी में आकृति ज़रा-सी मुस्कुराई

उसने मन ही मन कहा-
"शायद तुम वही हो जिसकी तसवीर अधूरी रह गई थी.."

वो रात भर जागती रही
और सुबह जब धूप ने परदे से झाँका
तो कैमरे के डिस्प्ले पर एक अजीब दृश्य था-
उसकी अपनी तस्वीर
पर दीवार पर कोई आकृति नहीं थी

बस नीचे, फर्श पर धूल में एक शब्द लिखा था-
“मिल गई.”

भाग 3

उस सुबह कमरे की हवा में कुछ बदल गया था
वो औरत जो सुनने आई थी
अब ख़ामोश बैठी थी दीवार के सामने-
जहाँ कभी आकृति उभरती थी
अब बस धूल में हल्की सी नमी थी

उसने कैमरा उतारा, और धीरे से बोली-
“अगर तुम सच में यहीं हो तो मुझसे बात करो”

हवा चली-
हल्की, काँपती, जैसे किसी ने बहुत धीमे स्वर में “हाँ” कहा हो..

और तभी-
कमरे की दीवार पर उभर आया एक दृश्य:
एक पेंटर, अधूरी कैनवास के सामने बैठा
और एक औरत जो मॉडल बनकर नहीं
उसकी कविता बनकर वहाँ थी

वो चित्र बना रहा था
पर हर बार ब्रश गिर पड़ता
वो हँसती थी- “इतना भी क्या डर, अगर मैं मर गई तो?”
और उसने कहा था-
“जो तुझे बनाऊँगा, तू मर नहीं पाएगी”

पर उसी वर्ष शहर में आग लगी थी-
घर जला, दीवारें धूल हुईं,
और वो आकृति धुएँ में खो गई थी

अब, बरसों बाद, वही आत्मा लौट आई थी-
कैमरे वाली औरत के रूप में
वो वही थी-
वो औरत जिसे उसने अधूरी छोड़ा था

दीवार पर एक आख़िरी बार आकृति चमकी-
दोनों के चेहरे आमने-सामने
एक दीवार पर, एक सामने-
जैसे दो आयाम मिल गए हों

उसने कैमरा नीचे रखा, और कहा-
“अब मुझे मत बनाना-
मुझे बस याद रखना”

धीरे-धीरे दीवार की धूल उठी
हवा में घुली
और उस औरत के चेहरे पर टिक गई
वो मुस्कुराई-
जैसे कोई अपनी तस्वीर में समा गया हो

सुबह जब मकान-मालिक दरवाज़ा खोलने आया
कमरा खाली था..
पर दीवार एकदम साफ़ थी-
और बीच में, हल्की धूल से लिखा था-

“अब मैं अधूरी नहीं रही.”

¤¤¤

कई बार

कविता:- डॉ. धनाकर ठाकुर

मैं तुम्हें भेजता हूँ अपने मित्रो,
वे अधूरे शब्द जो मैं लिख देता हूँ जल्दबाज़ी में,
या फिर इसलिए कि उन्हें कहीं सहेज लूँ,
जब मैं खुद को नहीं पाता।

जैसा तुम सब जानते हो,
मैं एक अकेला आदमी हूँ—
जो चाहता है जीना
बिना पहचाने, अनजान रहकर।

तुम्हारे पास है सब कुछ
जो चाहिए जीवन में,
और मेरे पास भी है—
पर इसलिए नहीं कि मेरे पास बहुत कुछ है,
बल्कि इसलिए कि मैंने
अपनी ज़रूरतों को बना लिया है
शून्य नहीं, पर नगण्य।

तुम मुझ पर हँस सकते हो,
तुम्हें इसकी पूरी स्वतंत्रता है।

याद रखो—
कभी एक सुदामा था
और एक कृष्ण,
पर यहाँ एक कृष्ण है—

जो अकेला नहीं,
बल्कि हर कोई
अपने भीतर कृष्ण है,
या राधा है अपने भीतर।

कृष्ण और राधा
दो नहीं,
बल्कि एक ही हैं।
जहाँ गणित हार जाता है,
वहाँ प्रेम का विज्ञान कहता है—
1 + 1 = 1।

यह प्रेम का विज्ञान है।
और जब अचानक कोई आवेग उठता है—
वह बन जाता है दैवीय कविता।

इसीलिए मैंने लिखा तुम्हें,
मैंने लिखा तुम्हारे लिए।
¤¤¤

साहित्य का स्वाभिमान हिंदी का सम्मान
वेब पत्रिका
अनुभव
सिर्फ पढ़ें नहीं,
सुनें और देखें भी
साहित्य का सफर शब्दों तक सीमित नहीं है।
'हिंदी लेखक परिवार' के यूट्यूब चैनल पर जुड़ें
और बेहतरीन कहानियों व कविताओं का आनंद
ऑडियो-विजुअल माध्यम में लें।
जुड़ें साहित्य की धड़कन से